एम.ए. पूर्वार्द्ध

भूगोल, प्रथम प्रश्नपत्र

भौगोलिक विचारधारा

(THE GEOGRAPHICAL THOUGHT)

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल

MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY - BHOPAL

Reviewer Committee

1. Dr. Mukesh Dixit
   Professor
   Govt. M.L.B. College, Bhopal (M.P.)

2. Dr. Rajeshwari Dubey
   Professor
   Govt. M.L.B. College, Bhopal (M.P.)

3. Dr. Neerja Bharadwaj
   Professor
   Hamidia College, Bhopal (M.P.)

Advisory Committee

1. Dr. Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

2. Dr. L.S. Solanki
   Registrar
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

3. Dr. Anjali Singh
   Director, Student Support
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

4. Dr. Mukesh Dixit
   Professor
   Govt. M.L.B. College, Bhopal (M.P.)

5. Dr. Rajeshwari Dubey
   Professor
   Govt. M.L.B. College, Bhopal (M.P.)

6. Dr. Neerja Bharadwaj
   Professor
   Hamidia College, Bhopal (M.P.)

COURSE WRITERS

Dr. Sharmila Badhwar, Assistant Professor, Department of Geography, Govt. College for Women, Sonipat
Units (3, 4, 5)
Rohit Wazir, Faculty, (Geography), Centre of Career Counseling, Kashmir University, I.M.P.A. (Jammu & Kashmir)
Units (1.0-1.1, 1.2-1.5, 1.6-1.10, 2.0-2.1, 2.2-2.5, 2.6-2.10)

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Information contained in this book has been published by VIKAS® Publishing House Pvt. Ltd. and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, the Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal, Publisher and its Authors shall in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020

VIKAS®

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT. LTD.
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: A-27, 2nd Floor, Mohan Co-operative Industrial Estate, New Delhi 1100 44
• Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

भौगोलिक विचारधारा

Syllabi	Mapping in Book
इकाई-1 भूगोल का क्षेत्र - भौतिक भूगोल - मानव भूगोल; भूगोल एक सामाजिक विज्ञान और प्राकृतिक विज्ञान के रूप में - भूगोल एक सामाजिक विज्ञान के रूप में - भूगोल एक प्राकृतिक विज्ञान के रूप में; भूगोल के दर्शन में चयनित अवधारणाएं - भाग 1; भूगोल के दर्शन में चयनित अवधारणाएं - भाग 2	**इकाई 1** : वैचारिक और आधुनिक भौगोलिक अवधारणाएं **(पृष्ठ 3-28)**
इकाई-2 द्वैतवाद : मिथक और वास्तविकता; क्षेत्रीय भूगोल; क्षेत्र की अवधारणा; क्षेत्रीयकरण की अवधारणा	**इकाई 2** : द्वैतवाद तथा क्षेत्र और क्षेत्रीयकरण की अवधारणा **(पृष्ठ 29-61)**
इकाई-3 स्थानिक वितरण की प्रकृति एवं स्वरूप; भूगोल के अध्ययन की विधियां भाग 1; भूगोल के अध्ययन की विधियां भाग 2; स्थानिक विश्लेषण की प्रकृति और प्रक्रिया; वैज्ञानिक व्याख्या और इसका मार्ग	**इकाई 3** : स्थानिक वितरण और वैज्ञानिक स्पष्टीकरण **(पृष्ठ 63-105)**
इकाई-4 भूगोल में सिद्धांत और मॉडल; भूगोल में मात्रात्मक क्रांति; प्रत्यक्षवाद और व्यवहारवाद; भूगोल में उत्तर आधुनिकवाद	**इकाई 4** : मॉडल, मात्रात्मक क्रांति और आधुनिक विषयवस्तु **(पृष्ठ 107-148)**
इकाई-5 भौगोलिक ज्ञान प्रदान करने वाले भारतीय स्रोत; ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति; समन्वय प्रणाली और भौतिक भूगोल; महाद्वीप; भारतवर्ष	**इकाई 5** : भौगोलिक विचारधारा में प्राचीन भारतीय विषयवस्तु **(पृष्ठ 149-178)**

विषय-सूची

परिचय **1-2**

इकाई 1 वैचारिक और आधुनिक भौगोलिक अवधारणाएं **3-28**

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 भूगोल का क्षेत्र
1.2.1 भौतिक भूगोल
1.2.2 मानव भूगोल
1.3 भूगोल एक सामाजिक विज्ञान और प्राकृतिक विज्ञान के रूप में
1.3.1 भूगोल एक सामाजिक विज्ञान के रूप में
1.3.2 भूगोल एक प्राकृतिक विज्ञान के रूप में
1.4 भूगोल के दर्शन में चयनित अवधारणाएं - भाग 1
1.5 भूगोल के दर्शन में चयनित अवधारणाएं - भाग 2
1.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.7 सारांश
1.8 मुख्य शब्दावली
1.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.10 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2 द्वैतवाद तथा क्षेत्र और क्षेत्रीयकरण की अवधारणा **29-61**

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 द्वैतवाद : मिथक और वास्तविकता
2.3 क्षेत्रीय भूगोल
2.4 क्षेत्र की अवधारणा
2.5 क्षेत्रीयकरण की अवधारणा
2.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.7 सारांश
2.8 मुख्य शब्दावली
2.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.10 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 3 स्थानिक वितरण और वैज्ञानिक स्पष्टीकरण **63-105**

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 स्थानिक वितरण की प्रकृति एवं स्वरूप
3.3 भूगोल के अध्ययन की विधियां भाग 1
3.4 भूगोल के अध्ययन की विधियां भाग 2
3.5 स्थानिक विश्लेषण की प्रकृति और प्रक्रिया
3.6 वैज्ञानिक व्याख्या और इसका मार्ग
3.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

3.8 सारांश
3.9 मुख्य शब्दावली
3.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.11 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 4 मॉडल, मात्रात्मक क्रांति और आधुनिक विषयवस्तु **107-148**

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 भूगोल में सिद्धांत और मॉडल
4.3 भूगोल में मात्रात्मक क्रांति
4.4 प्रत्यक्षवाद और व्यवहारवाद
4.5 भूगोल में उत्तर आधुनिकवाद
4.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.7 सारांश
4.8 मुख्य शब्दावली
4.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.10 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 5 भौगोलिक विचारधारा में प्राचीन भारतीय विषयवस्तु **149-178**

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 भौगोलिक ज्ञान प्रदान करने वाले भारतीय स्रोत
5.3 ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति
5.4 समन्वय प्रणाली और भौतिक भूगोल
5.5 महाद्वीप
5.6 भारतवर्ष
5.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
5.8 सारांश
5.9 मुख्य शब्दावली
5.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.11 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक 'भौगोलिक विचारधारा' का लेखन विश्वविद्यालय के एम.ए. (पूर्वार्द्ध) के निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुरूप किया गया है।

भौगोलिक चिंतन सदियों पुराना विषय रहा है। भूगोल के अंतर्गत 'भौगोलिक विचारधारा' के बारे में जैसा कि आमतौर पर समझा जाता है, वह है- भूगोल विषय के बारे में सोचने और शोध करने के तरीकों का विकास। यह कुछ आधारभूत बातों का अध्ययन है जैसे कि- भूगोलवेत्ता क्या अध्ययन करते हैं? भूगोल को अन्य शैक्षणिक विषयों से क्या अलग करता है? साथ ही विभिन्न भौगोलिक विषयों से सम्बद्ध कुछ सबसे महत्वपूर्ण लेखकों और शोधकर्ताओं से भी यह हमारा परिचय कराता है। ज्ञान के विभिन्न सिद्धांतों ने भूगोल विषय को आकार दिया है। समाज में ये सिद्धांत समग्र रूप से और शिक्षा के विभिन्न पक्षों की प्रवृत्तियों से उभरते हैं, साथ ही विशेष रूप से भौगोलिक सोच के बौद्धिक और व्यक्तिगत विकास को भी दर्शाते हैं। भूगोलवेत्ता अपने शोध और कार्य में असामान्य रूप से विस्तृत तरीकों में से व्यक्तिगत, जीव या व्यक्ति से लेकर क्षेत्रीय और वैश्विक स्तर तक के पैमाने का चयन करते हैं।

'भौगोलिक विचारधारा' में विशेष स्थानों, समय और संदर्भो में भौगोलिक ज्ञान का विकास शामिल है। इसका परिप्रेक्ष्य मुख्य रूप से ऐतिहासिक रहा है। भौगोलिक विचारधारा स्पष्ट क्षेत्रीय आधार के साथ, अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त और विभिन्न चरणों की एक शृंखला के माध्यम से विकसित हुई है और स्पष्ट रूप से जलवायु, सामाजिक, आर्थिक स्थितियों, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों से जुड़ी हुई है। यह विशिष्ट लक्षण प्रदर्शित करती है जो इसे अन्य परंपराओं से अलग करते हैं तथा समानताएं कहीं और भी इंगित कर सकती हैं। भौगोलिक संकलन, गजेटियर, एटलस और अन्य अनुभवजन्य मीडिया से इस विषय को लोकप्रियता, स्वीकृति और पाठक संख्या मिली। समय-समय पर हुए सर्वेक्षणों ने भौतिक भूगोल की प्रासंगिकता स्थापित करने में मदद की, और पर्यावरण-निर्धारक सिद्धांत ने मानव भूगोल को लोकप्रिय बनाया तथा साथ-साथ विद्यालयी पाठ्यक्रम में भी इसे रखने में मदद की। 20वीं शताब्दी में, भौगोलिक विचारधारा के विस्तार हेतु औपचारिक रूप से विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम स्थापित हो गए।

भौगोलिक विचारों का एक संक्षिप्त इतिहास भौगोलिक क्षेत्रों में धारणा के विकसित तरीकों को चित्रित करता है। प्रारंभिक भूगोल में, 'कहां है' जैसे प्रश्न प्रमुख रहे हैं और भूगोल का अर्थ होता था- मानचित्र को जानना। एक वर्णनात्मक और एक संभावनावादी चरण के बाद, व्यावहारिक सामाजिक भूगोल और एक सकारात्मक या मात्रात्मक क्रांति के बाद (भूगोल का पहला नियम: निकटता का अर्थ है- समानता) भौगोलिक विचारधारा उत्तर-संरचनावादी प्रतिमान प्रवचन की ओर उन्मुख होती है जहां भूगोल अंतत: कथा बन जाता है जबकि अन्य विज्ञान (जैसे अर्थशास्त्र) एक तार्किक स्थिति की ओर उन्मुख होते हैं। भौगोलिक दृष्टिकोणों और प्रतिमानों की बहुतायत संख्या के आधार पर, अपरंपरागत मानचित्रण के गठन हेतु अपरंपरागत मीट्रिक्स का प्रयोग होना आम बात है जैसे 'एक प्रक्रिया द्वारा परिणाम तक पहुंचने की योग्यता'। 'क्षेत्र से संबंधित विचारधारा' उपयोग किए जाने वाले तरीके के आधार पर, ऐसी प्रत्येक अलग-अलग प्रक्रिया क्षेत्र हेतु एक बहुत ही अलग मीट्रिक में परिणाम देती है।

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक में भौगोलिक विचारधारा से सम्बद्ध विषयों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है। प्रत्येक इकाई के आरंभ में विषय विश्लेषण से पूर्व, उसके निहित उद्देश्यों को स्पष्ट कर दिया गया है। इकाई के बीच-बीच में 'अपनी प्रगति जांचिए' के माध्यम से विद्यार्थियों की योग्यता परखने हेतु प्रश्न दिए गए हैं। प्रस्तुत पुस्तक में भौगोलिक विचारधारा से संदर्भित अहम विषयों का सांगोपांग समायोजन किया गया है।

अध्ययन की सुविधा के लिए संपूर्ण पुस्तक को पांच इकाइयों में समायोजित किया गया है जिनका विवरण इस प्रकार है-

पहली इकाई में वैचारिक और आधुनिक भौगोलिक अवधारणाओं का वर्णन किया गया है जिनसे छात्र भौतिक भूगोल, मानव भूगोल, भूगोल के सामाजिक विज्ञान और प्राकृतिक विज्ञान के रूपों से अवगत होंगे।

दूसरी इकाई में द्वैतवाद, क्षेत्रीय भूगोल तथा क्षेत्रीयकरण की अवधारणा के बारे में चर्चा की गई है। ये विषय भौगोलिक विचारधारा के अध्ययन हेतु महत्वपूर्ण हैं अत: छात्रों की जानकारी हेतु उपयोगी हैं।

तीसरी इकाई पृथ्वी पर उपस्थित स्थानिक वितरण और उनके वैज्ञानिक स्पष्टीकरण, भूगोल के अध्ययन की विधियों, स्थानिक विश्लेषण की प्रकृति और प्रक्रियाओं तथा वैज्ञानिक व्याख्याओं और विधियों का वर्णन करती है। ये महत्वपूर्ण विषय भौगोलिक विचारधारा की ज्ञान वृद्धि में सहायक हैं।

चौथी इकाई मॉडल, मात्रात्मक क्रांति और आधुनिक विषय-वस्तु का भूगोल में उपयोग, प्रत्यक्षवाद और व्यवहारवाद एवं उत्तर आधुनिकवाद को समझने में बहुत सहायक है।

पांचवीं इकाई भौगोलिक विचारधारा में प्राचीन भारतीय विषयवस्तु के योगदान पर आधारित है। यह ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, समन्वय प्रणाली, भौतिक भूगोल, महाद्वीप और भारतवर्ष के बारे में प्राचीन भारतीय विषयवस्तु की विचारधारा को सामने लाती है।

पाठ्यपुस्तक की भाषा को सरलतम रखते हुए यह ध्यान रखा गया है कि छात्रों को उक्त विषयों का सम्यक ज्ञान हो सके। इन इकाइयों के अध्ययन से विद्यार्थी इन विषयों से भली-भांति अवगत हो सकेंगे। हमें पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक छात्र-छात्राओं की जिज्ञासा को शांत कर उनका ज्ञानवर्द्धन करने में सफल होगी।

इकाई 1 वैचारिक और आधुनिक भौगोलिक अवधारणाएं

टिप्पणी

संरचना

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 भूगोल का क्षेत्र
1.2.1 भौतिक भूगोल
1.2.2 मानव भूगोल
1.3 भूगोल एक सामाजिक विज्ञान और प्राकृतिक विज्ञान के रूप में
1.3.1 भूगोल एक सामाजिक विज्ञान के रूप में
1.3.2 भूगोल एक प्राकृतिक विज्ञान के रूप में
1.4 भूगोल के दर्शन में चयनित अवधारणाएं - भाग 1
1.5 भूगोल के दर्शन में चयनित अवधारणाएं - भाग 2
1.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.7 सारांश
1.8 मुख्य शब्दावली
1.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.10 सहायक पाठ्य सामग्री

1.0 परिचय

भौतिक भूगोल पृथ्वी की प्राकृतिक विशेषताओं से संबंध रखने वाली भूगोल की शाखा है। भौतिक भूगोल को ज्ञान के ऐसे क्षेत्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो स्थानिक पहलुओं से पृथ्वी पर प्राकृतिक विशेषता और घटना का अध्ययन करता है। आरंभिक यूनानी, रोमन, भारतीय और कई अन्य भूगोलवेत्ता भौतिक भूगोल को लेकर अधिक चिंतित थे। विशेष रूप से यूनानी नक्शा बनाने या मानचित्रण के लिए अधिक चिंतित थे। प्राचीन यूनान के दार्शनिक और वैज्ञानिक मानव की स्थानिक प्रकृति और पृथ्वी की भौतिक विशेषताओं को जानने में अधिक उत्सुक थे, जिसे हेरोडोट्स (इतिहास के पिता), हिकेटियस आदि जैसे भूगोलवेत्ताओं के कार्यों में देखा जा सकता है। उन्होंने न केवल भूमि के रूपों का वर्णन बल्कि कुछ जातीय समूहों का भी का वर्णन किया।

इस इकाई में हम भौतिक भूगोल, मानव भूगोल, भूगोल के सामाजिक विज्ञान एवं प्राकृतिक विज्ञान के रूपों तथा भूगोल के दर्शन की चयनित अवधारणाओं का अध्ययन करेंगे।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- भूगोल के क्षेत्र की अवधारणा से परिचित हो पाएंगे;

- भूगोल के सामाजिक विज्ञान और प्राकृतिक विज्ञान के रूपों का अध्ययन कर पाएंगे;
- भूगोल के दर्शन में चयनित अवधारणाओं को समझ पाएंगे।

टिप्पणी

1.2 भूगोल का क्षेत्र

मानव की सबसे आरंभिक खोजों में से एक इस बात का पता लगाना था कि भूपटल में क्या छिपा है। इस खोज के उत्तर का परिणाम संभवत: सबसे प्रारंभिक विज्ञान भूगोल के विकास के रूप में प्राप्त हुआ। प्राचीन काल में यूनानियों, रोमन, फीजियन और भारतीयों के उल्लेखनीय कार्य ने इस नए विज्ञान को एक विषय के रूप में विकसित होने में सहायता की। प्राचीन भूगोलवेत्ताओं के कार्यों के प्रेक्षण से यह पता चलता है कि वे भूगोल के भौतिक पहलुओं में अग्रणी थे। उन्होंने न केवल आस पास के परिदृश्य की कई विशेषताओं को प्रलेखित किया अपितु भूगोल के क्षेत्र में विविधता लाने के लिए भी कार्य किया। भूगोल के क्षेत्र को स्पष्ट करने के लिए कई भूगोलवेत्ताओं ने भूगोल को अपने तरीके से परिभाषित किया। विभिन्न भूगोलवेत्ताओं द्वारा दी गई कुछ परिभाषाएं निम्नलिखित हैं-

1. 'भूगोल का प्रयोजन स्थानों के मानचित्रण द्वारा पूरी पृथ्वी का एक दृश्य प्रदान करना है।'-टॉलेमी
2. 'क्षेत्र या स्थान की अवधारणा के माध्यम से अन्य विज्ञानों के संश्लेषण निष्कर्ष।' -इमैन्युअल कांट
3. 'मापन, मानचित्रण और क्षेत्रीय प्रभाव के द्वारा सामान्य को विशेष के साथ जोड़ने वाला संश्लेषण विषय।'-एलेक्जेंडर वॉन हम्बोल्ट
4. 'समाज में मनुष्य और पर्यावरण में स्थानीय भिन्नता।'-हैल्फोर्ड मैकिन्जर
5. 'पर्यावरण किस प्रकार स्पष्ट रूप से मानव व्यवहार को नियंत्रित करता है।'-एलेन सेम्पल
6. 'मानव पारिस्थितिकी का अध्ययन; प्राकृतिक परिवेश के साथ मानव का सामंजस्य।' -हार्लेंड बैरोस

नए स्थानों, नई संस्कृति और नए विचारों के अन्वेषण और खोज ने समय के साथ भूगोल के क्षेत्र को बदला है। जैसे-जैसे मानव का विकास हुआ वैसे-वैसे भूगोल का क्षेत्र विस्तृत हुआ। यह न केवल भूमि के भौतिक पहलुओं तक सीमित रहा बल्कि मानव के भूमि से संबंधों को भी सीमित किया, जिसने मानव भूगोल नाम की एक नई शाखा का विकास किया। आजकल भूगोल को भौतिक भूगोल और मानव भूगोल में विभाजित किया जाता है।

1.2.1 भौतिक भूगोल

भौतिक भूगोल 1950 के बाद अपनी कार्य-प्रणाली में मौलिक परिवर्तनों से गुजर रहा है जो कि विवरणात्मक के साथ अधिक सैद्धांतिक और प्रायोगिक होता जा रहा है। भौतिक भूगोल में किसी प्रक्रिया को लेकर इस बात पर अनुसंधान किया जा रहा है कि एक विशिष्ट प्रक्रिया क्यों होती है। हालांकि प्रक्रिया का प्रायोगिक अनुमानों और उपकल्पना

परीक्षण द्वारा अध्ययन किया जाता है। प्रक्रिया को समझने के लिए समय और स्थान की अवधारणा बहुत महत्वपूर्ण है।

स्थान

भौतिक भूगोल में स्थान की अवधारणा की ऐतिहासिक संदर्भ में व्याख्या की जा सकती है, इसलिए मापन को और समावेशी बनाने के लिए दो तरह के स्थानों पर विचार किया जा सकता है-

1. वास्तविक दुनिया या वातावरण का प्रतिनिधित्व करने वाला ठोस स्थान।
2. अमूर्त स्थान वास्तविकता का प्रतिरूप है जैसे वास्तविक दुनिया में स्थानिक सूचना का प्रतिनिधित्व, उदाहरण के लिए, मानचित्र।

समय

समय को भी कुछ घटनाओं के संबंध में प्रस्तुत किया जाता है। इसलिए भौतिक भूगोलवेत्ताओं को स्थान और समय के सापेक्षिक पहलुओं पर निर्भर होना पड़ता है। जेम्स हीन की एकरूपता की अवधारणा इसका प्राचीन उदाहरण है। यह कहती है 'वर्तमान अतीत की कुंजी है'। यह वाक्यांश स्पष्ट रूप से स्थान और समय के संबंध में परिशुद्धता की आवश्यकता इंगित करता है।

प्लेट विवर्तनिकी, चक्रवात की प्रक्रिया और कई अध्ययनों ने भौतिक भूगोल और साथ ही भूगोल की सीमाओं को बढ़ाया है।

भौतिक भूगोल के क्षेत्र

भौतिक भूगोल के क्षेत्र निम्नलिखित हैं-

(अ) भूआकृति विज्ञान : यह पृथ्वी की सतह की प्रक्रिया और भूआकृतियों का विज्ञान है। सतह के नीचे उत्पन्न हो रहे विवर्तनिकी बलों के कारण पृथ्वी की निरंतर बदल रही भू-आकृति के लिए एक बड़े प्रेक्षण की आवश्यकता है। नई तकनीकों की खोज और समुद्र के नीचे की खुदाई से प्राप्त विभिन्न निष्कर्षो ने पृथ्वी के उद्‌भव और चल रही प्रक्रियाओं पर प्रकाश डाला। भूआकृति विज्ञान के अध्ययन में प्रगति वर्तमान परिदृश्य में इसे सबसे महत्वपूर्ण बनाते हुए भूकंप, ज्वालामुखी और अन्य खतरों की भविष्यवाणी करने में सहायक हो सकती है।

(ब) जलवायु विज्ञान : यह विभिन्न जलवायु विशेषताओं जैसे तापमान, दाब, वर्षा, चक्रवात इत्यादि के अध्ययन से संबंधित है। जलवायु विज्ञान विभिन्न प्रकार की जलवायु और मानव जीवन पर उनके प्रभाव का भी अध्ययन करता है। यह पृथ्वी के उद्‌भव के समय से हो रहे जलवायु परिवर्तनों से भी संबद्ध है। इस प्रकार जलवायु विज्ञान का महत्व पहले से कहीं अधिक बढ़ गया है।

(स) समुद्र विज्ञान : यह उन भूआकृतिक प्रक्रियाओं का अध्ययन है जो किनारों और समुद्र तटों को समुद्र तटीय विकास और समुद्री स्रोत के सदुपयोग के उनके अनुप्रयोग के साथ संयोजित करती है। यह संसाधनों का पता लगाने में सहायता करता है क्योंकि महासागरों में भरपूर संसाधन होते हैं।

(द) मृदा भूगोल : इसमें मृदा के प्रकारों के वितरण और उपयुक्त परिमाण और मृदा निर्माण की प्रक्रिया का अध्ययन शामिल है। मौसम के बदलने और मृदा में रहने

वाले जीवों के विकास, गतिविधि और उनके विघटन की जैविक प्रक्रिया भूआकृतिक प्रक्रियाओं से संबंधित है। जलवायु का मृदा के निर्माण पर गहन प्रभाव पड़ता है अतः मृदा विज्ञान (मृदा का अध्ययन) जलवायु विज्ञान पर आधारित है।

टिप्पणी

(इ) जैव भूगोल : यह विभिन्न स्थानों और सामयिक पैमानों पर जीवों के वितरण, साथ ही साथ उन प्रक्रियाओं का अध्ययन है जो इन वितरण के तरीकों को उत्पन्न करती हैं। पौधों और जंतुओं का स्थानीय वितरण विशेष रूप से उस आवास की उपयुक्तता पर निर्भर करता है जो उनकी मदद करता है। इस अनुप्रयोग में, जीवविज्ञान पारिस्थितिकी विज्ञान से निकटता से संरेखित होती है, जो कि जीवों और पर्यावरण के बीच संबंध का अध्ययन है।

इन पांच क्षेत्रों के अलावा भौतिक भूगोल का अध्ययन प्रमुख रूप से जल स्रोतों और खतरों का अनुमान लगाने का अनुप्रयोग भी शामिल करता है। मानव और प्रकृति के संबंध को पृथक नहीं किया जा सकता। विडाल डी ला ब्लाश जैसे कई भूगोलवेत्ताओं ने, मनुष्य का प्रकृति के ऐसे सक्रिय अभिकर्ता के रूप में समर्थन किया जो मनुष्य समाज के लाभ और कल्याण के लिए प्रकृति में बदलाव ला सकता है। इस अवधारणा ने मानव भूगोल को भूगोल की विशेषीकृत शाखा के रूप में विकसित किया। इस प्रकार विडाल डी ला ब्लाश को मानव भूगोल के जन्मदाता होने का श्रेय दिया जाता है।

1.2.2 मानव भूगोल

'मानव भूगोल' भूगोल के उन क्षेत्रों के लिए एक सामान्यीकृत शब्द है जो पूरी तरह से भौतिक परिदृश्य या तकनीकी मामलों जैसे कि मानचित्रण और दूरस्थ संवेदी से संबंधित नहीं है। यह मनुष्य की गतिविधि और भौतिक वातावरण के बीच संबंध की व्याख्या करता है।

मानव भूगोल के क्षेत्र

मानव भूगोल के अध्ययन के मुख्य क्षेत्र निम्न विशिष्ट क्षेत्रों के आस-पास संकेंद्रित हैं-

(अ) सांस्कृतिक

सांस्कृतिक भूगोल सांस्कृतिक उत्पादों और मानकों और चारों ओर उनकी भिन्नताओं और स्थलों और स्थानों से संबंधों का अध्ययन है। यह भाषा, धर्म, अर्थव्यवस्था, सरकार और अन्य सांस्कृतिक घटना के भिन्न होने या एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थिर रहने और कैसे मनुष्य स्थानिक रूप से कार्य करता है, का वर्णन और विश्लेषण करने पर केंद्रित है।

(ब) विकास

विकास भूगोल जीवन के मानक और जीवन की गुणवत्ता के संदर्भ में अध्ययन, पृथ्वी के चारों ओर स्थान का अध्ययन, आर्थिक गतिविधियों के वितरण और स्थानिक संगठन का अध्ययन है। अन्वेषित की गई विषय सामग्री प्रभावी रूप से अनुसंधानकर्ता के प्रणाली संबंधी दृष्टिकोण द्वारा प्रबल रूप से प्रभावित है।

(स) आर्थिक

आर्थिक भूगोल मानव की आर्थिक व्यवस्थाओं, राज्यों और अन्य कारकों और जैव-भौतिक वातावरण के बीच संबंधों का परीक्षण करता है।

(द) ऐतिहासिक

ऐतिहासिक भूगोल अतीत के मानवीय, भौतिक, काल्पनिक, सैद्धांतिक और वास्तविक भूगोलों का अध्ययन है। ऐतिहासिक भूगोल विस्तृत रूप से मुद्दों और विषयों का अध्ययन करता है। एक आम विषयवस्तु अतीत के भूगोलों और एक स्थान या क्षेत्र का समय के साथ बदलने का अध्ययन है। कई ऐतिहासिक भूगोलवेत्ता भौगोलिक प्रतिमानों का लोगों की अपने वातावरण के साथ अंतर्क्रिया और सांस्कृतिक परिदृश्य का निर्माण करने सहित, समय के साथ अध्ययन करते हैं।

(इ) राजनीतिक

राजनीतिक भूगोल राजनीतिक प्रक्रियाओं के स्थानिक विषम परिणामों और उन तरीकों जिनसे राजनीतिक प्रक्रिया स्वयं स्थानिक संरचनाओं से प्रभावित होती है, दोनों का अध्ययन है।

(ई) जनसंख्या

जनसंख्या भूगोल उन तरीकों का अध्ययन है जिनमें वितरण, संघटन, प्रवास और जनसंख्या में वृद्धि में स्थानिक भिन्नता की प्रकृति स्थानों से संबंधित होती है।

(ए) शहरी

शहरी भूगोल शहरी क्षेत्रों का स्थानिक और क्षेत्रीय परिप्रेक्ष्यों और सिद्धांतों के विशिष्ट संदर्भ में अध्ययन है। यह उन क्षेत्रों का अध्ययन है जहां उच्च सघनता वाली इमारतें हैं। ये वे क्षेत्र हैं जहां अधिकांश आर्थिक गतिविधियां द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्र में होती हैं। इनमें संभवत: उच्च जनसंख्या घनत्व होता है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. निम्न में से भौतिक भूगोल का क्षेत्र कौन सा है?
   (क) भू-आकृति विज्ञान (ख) जलवायु विज्ञान एवं समुद्र विज्ञान
   (ग) मृदा भूगोल एवं जैव भूगोल (घ) उपर्युक्त सभी
2. निम्न में से मानव भूगोल का क्षेत्र कौन सा है?
   (क) संस्कृति एवं जनसंख्या (ख) आर्थिक एवं राजनीतिक
   (ग) ऐतिहासिक तथा विकास भूगोल (घ) उपर्युक्त सभी

1.3 भूगोल एक सामाजिक विज्ञान और प्राकृतिक विज्ञान के रूप में

सामाजिक विज्ञान और प्राकृतिक विज्ञान के रूप में भूगोल के अध्ययन का दायरा, बहुत विस्तृत है। भूगोलवेत्ताओं ने इसे अत्यंत सार्थक और संतुलित तरीके से प्रस्तुत किया है।

टिप्पणी

1.3.1 भूगोल एक सामाजिक विज्ञान के रूप में

पृथ्वी पर जीवन के गठन और संचालन में जगह और स्थान, परिदृश्य और प्रकृति के महत्व के प्रति एक संवेदनशीलता है। इस प्रकार, एक भौगोलिक कल्पना किसी भी तरह भूगोल के शैक्षणिक शास्त्र का एक श्रेष्ठ संरक्षण नहीं है। दरअसल, एच.सी. प्रिंस ने भौगोलिक कल्पना को मानव जाति की एक निरंतर और सार्वभौमिक वृत्ति के रूप में चित्रित किया है। भौगोलिक कल्पना उनकी दृष्टि में स्थानों और परिदृश्य के लिए एक प्रतिक्रिया थी। 'संस्कृति' तथा 'प्रकृति' की अपनी-अपनी समस्त साझेदारी में यह सहानुभूतिशील अंतर्दृष्टि और कल्पनाशील समझ के बारे में हमारी शक्तियों की कार्रवाई की मांग करती है और इसका प्रतिपादन एक रचनात्मक कला है। प्रिंस का कला पर जोर देना उस समय एक विज्ञान के रूप में स्थानिक भूगोल के पुनर्सूत्रीकरण पर एक महत्वपूर्ण जवाब था। प्रिंस के लिए, ये औपचारिक चीजें सरल और आविष्कारशील लेकिन अमूर्त पेंटिंग की तरह थीं, वे उस दुनिया के लिए हमेशा एक अप्रत्यक्ष दृष्टिकोण रहेंगी जिसमें सबसे ताजी, पूर्ण और सबसे समृद्ध प्रतिक्रिया (उनके विचार में) साहित्यिक थी । प्रिंस का विश्वास था कि कला के माध्यम से परिदृश्य का एक प्रत्यक्ष अनुभव बनाए रखने के भौगोलिक वर्णन का संरक्षण विशेष महत्वपूर्ण था। लगभग दस साल बाद दाऊद हार्वे ने भौगोलिक कल्पना पर एक चर्चा उपलब्ध कराई और सौंदर्य के मूल्य को मान्यता प्रदान की, लेकिन हार्वे विशिष्ट रूप से महत्वपूर्ण मानों में प्रिंस के विवरण से अलग हैं। औपचारिक सैद्धांतिक शब्दसंग्रह के प्रति हार्वे की स्थानिक विज्ञान की आलोचना अधिक खुली थी (वास्तव में, यह उन पर भरोसा था) और इसका विशेष जोर परिदृश्य और प्रकृति के बजाय स्थान पर था (जिसने प्रिंस की चर्चा में एक अधिक प्रमुख स्थान पर अधिकार कर लिया था)। इसलिए हार्वे की दृष्टि में भौगोलिक कल्पना व्यक्ति को अपने निजी जीवन में स्थान की भूमिका की पहचान करने में, अपने आसपास के स्थान से संबंधित करने में और यह पहचान करने में कि उसे अलग करनेवाला स्थान व्यक्तियों और संगठनों के बीच के लेनदेन को कैसे प्रभावित करता है यानी अन्य स्थानों की घटनाओं में प्रासंगिकता को परखने में और स्थान के रचनात्मक उपयोग में और स्थानिक रूपों के दूसरों के द्वारा बनाए गए अर्थ की सराहना करने में सक्षम करती है। हार्वे 'भौगोलिक कल्पना' का विरोध करना चाहते थे और साथ ही इसे उससे संबद्ध करना चाहते थे, जिसे समाजशास्त्री सीण् राइट मिल्स ने 'समाजशास्त्रीय कल्पना' कहा था, एक क्षमता जो हमें 'इतिहास और जीवनी और समाज' में इनके बीच के संबंध को समझने में सक्षम बनाती है। न तो हार्वे ने और न ही मिल्स ने नियमों को अपने विषयों के लिए सीमित किया। उन दोनों ने कहा कि वे 'मस्तिष्क की आदतों' के बारे में बात कर रहे हैं जो कि विशेष विषयों के पार चला जाता है और शिक्षण के उपदेशों से परे बहुत ऊपर उठ जाता है। बहरहाल, हार्वे के आविष्कार का अनुसरण करनेवाली बहुत सी चर्चा, कम या ज्यादा सिद्धांत और विधि के औपचारिक प्रश्नों से सीधे संबंधित थी। लेकिन भौगोलिक कल्पना के तीन अन्य आयामों को हाल के वर्षों में विशेष ध्यान प्राप्त हुआ है और उनमें से प्रत्येक 'अशुद्ध' भूगोलों के उत्पादन की दिशा में काम करते हैं जो भूगोल के करीबी और नैदानिक दृष्टिकोण से काफी अलग चला जाता है।

पहले स्थान पर, 'शैक्षिक' भौगोलिक कल्पना और विशेष रूप से, प्रिंस और हार्वे (ऊपर वर्णित) दोनों द्वारा प्रस्तावित संस्करणों की एक नए सिरे से पूछताछ की गई है,

उत्तर-संरचनावाद से अलग-अलग तरीकों और विभिन्न मात्रा में प्रभावित होकर और विशेष रूप से एक वक्तव्य के रूप में भूगोल के विषयीकरण द्वारा। कई आलोचकों का तर्क है कि भूगोल केवल 'वास्तविक' दुनिया में बदलाव को ही प्रतिबिंबित नहीं करता क्योंकि इसके वक्तव्य उसी दुनिया का विधान हैं। भूगोल में, किसी को नियंत्रित करने की लक्षित दूरी ही एकमात्र संबंध नहीं है जो अध्ययन के अपने उद्देश्य के संबंध में जानने वाले पदों को व्यवस्थित करती है। इसके बजाय एक द्वैधवृत्ति है जो शास्त्र के भीतर संकेतक की बेचैनी पैदा करती है। एक तरफ, वहां दूसरे के एक अन्य के साथ एक भागीदारी का भय है, जो एक दूरी बनाए रखने के लिए हावी होने की एक इच्छा उत्पन्न करता है।

दूसरे स्थान पर, भौगोलिक कल्पनाओं का एक बहुवचनीकरण किया गया है। कई मानव भूगोलवेत्ता भौगोलिक कल्पना पर स्पष्ट रूप से बात करने में अनिच्छुक हो गए हैं जब तक कि 'वे भौगोलिक जांच के एक प्राधान्य रूप की और आम तौर पर आलोचना की एक वस्तु के रूप में बात न कर रहे हों और तदनुसार संभावनाओं और भविष्यवाणियों में ज्यादा रुचि ले रहे हों जो विभिन्न दार्शनिक और सैद्धांतिक परंपराओं के बीच काम करने से उत्पन्न होती है।' तीसरे, शैक्षणिक भौगोलिक कल्पना के भीतर प्रकृति के साथ एक नए सिरे से गठजोड़ हुआ है। प्रकृति को प्रभावी रूप से उस केंद्रीय स्थान से विस्थापित किया गया है जहां कभी भूगोल की अधिकांश परंपराओं में इसे स्थापित किया गया था और इसकी जगह स्थान ने ले ली है।

शहर का कोई भी सामान्य सिद्धांत निश्चित रूप से किसी न किसी तरह शहर के अंदर की सामाजिक प्रक्रियाओं को शहर द्वारा ग्रहण किए हुए उसके स्थानिक रूप से संबद्ध करता है। शास्त्रीय संदर्भ में, दो महत्वपूर्ण अनुसंधान और शैक्षिक परंपराओं को इस परिमाण में एकीकृत करने के लिए, इसे समाजशास्त्रीय कल्पना वाले लोगों और एक स्थानिक चेतना या एक भौगोलिक कल्पना के साथ जुड़े लोगों के बीच एक पुल का निर्माण कहा जाएगा।

मिल्स ने समाजशास्त्रीय कल्पना को किसी ऐसी वस्तु के रूप में परिभाषित किया है जो अपने पर स्वामित्व रखने वाले को आंतरिक जीवन और व्यक्तियों की एक किस्म के बाहरी पेशे (कैरियर) के अर्थ के संदर्भ में एक विशाल ऐतिहासिक दृश्य को समझने में सक्षम बनाती है। इस कल्पना का पहला फल यह विचार है कि व्यक्ति अपने अनुभव को समझ सकते हैं और अपने को उस समय में स्थापित कर खुद के भाग्य माप सकते हैं तथा अपनी परिस्थिति में रहनेवाले सभी व्यक्तियों के बारे में पता लगाकर ही खुद अपने जीवन की संभावना का पता कर सकते हैं।

समाजशास्त्रीय कल्पना हमें इतिहास और जीवनी तथा समाज में दोनों के बीच संबंधों को समझने में सक्षम बनाती है। इससे वापस लौटकर हमेशा समाज में व्यक्ति के सामाजिक और ऐतिहासिक अर्थ और उस अवधि को जिसमें उनकी गुणवत्ता और उनका अस्तित्व था पता लगाने का आग्रह होता है।

जैसा कि मिल्स दर्शाते हैं, यह समाजशास्त्रीय कल्पना पर समाजशास्त्र का एकमात्र अधिकार नहीं है। यह सामाजिक विज्ञान में सभी विषयों की (अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान और नृविज्ञान सहित) आम धारणा है और साथ ही इतिहास और सामाजिक दर्शन की केंद्रीय चिंता का विषय भी है। समाजशास्त्रीय कल्पना के पीछे इसकी बहुत शक्तिशाली परंपरा

टिप्पणी

है। प्लेटो से रूसो के माध्यम से मारकस के लिए, व्यक्ति के समाज से रिश्ते और इतिहास में व्यक्ति की भूमिका पर एक कभी न खत्म होने वाली बहस की गई है। पिछली आधी सदी में ऐसी ही, सामाजिक विज्ञान से जुड़ी कार्यप्रणाली अधिक कठोर और अधिक वैज्ञानिक (कुछ छद्म वैज्ञानिक कहेंगे) बन गई है। समाजशास्त्रीय कल्पना अब एक विशाल अपेक्षित साहित्य, सर्वेक्षण शोध के परिणामों का नतीजा है और सामाजिक प्रक्रिया के कुछ पहलुओं के बारे में कुछ अच्छी तरह से व्यक्त सिद्धांत पर निर्भर कर सकती है। इस 'समाजशास्त्रीय कल्पना' बल्कि विस्तृत गुणवत्ता या 'स्थानिक चेतना' या 'भौगोलिक कल्पना' पर विरोध करना अधिक उपयोगी है। यह कल्पना व्यक्ति को स्थान और अपनी खुद की जीवनी में जगह की भूमिका की पहचान करने और उसके चारों ओर के स्थान को देखने तथा संबंधित करने और इसकी पहचान करने के लिए कि उन्हें अलग करने वाला स्थान कैसे व्यक्तियों और संगठनों के बीच लेनदेन को प्रभावित करता है, सक्षम बनाती है। यह उसे उस रिश्ते की पहचान करने के लिए अनुमति देती है जो उसके पड़ोस, उसके क्षेत्र या सड़क गिरोह की भाषा के बीच मौजूद है। यह उसे अन्य स्थानों की घटनाओं की प्रासंगिकता (अन्य लोगों के 'मैदान') को जांचने की अनुमति देती है कि क्या वियतनाम, थाईलैंड और लाओस में साम्यवाद का विस्तार उसके लिए जहां वह अब है, प्रासंगिक है या नहीं। यह उसे भी प्रचलन और स्थान के रचनात्मक उपयोग करने और दूसरों के द्वारा बनाए गए स्थानिक रूपों के अर्थ की सराहना की भी अनुमति देती है। यह 'स्थानिक चेतना' या 'भौगोलिक कल्पना' में कई विषयों में प्रकट होती है। आर्किटेक्ट, कलाकार, डिजाइनर, नगर नियोजक, भूगोल, मानवविज्ञानी, इतिहासकार और इसी प्रकार यह सब के पास है। लेकिन इसके पीछे एक बहुत ही कमजोर विश्लेषणात्मक परंपरा है, और इसकी पद्धति अभी भी शुद्ध अंतर्ज्ञान पर काफी निर्भर करती है।

जब हम शहर की समस्याओं के संबंध की तलाश करते हैं, तब भौगोलिक और सामाजिक कल्पना के बीच का यह भेद कृत्रिम है, लेकिन जब हम शहर के बारे में सोचने के तरीकों की जांच करते हैं तब यह अत्यधिक असली है। बहुत से लोग एक शक्तिशाली सामाजिक (उनमें सीण् राइट मिल्स भी हैं) कल्पना से भरे हैं, जो कभी भी एक स्थानहीन दुनिया में रहने और काम करने के इच्छुक नहीं लगते हैं। साथ ही ऐसे भी बहुत सारे लोग हैं जो एक शक्तिशाली भौगोलिक कल्पना या स्थानिक चेतना पर काम कर रहे हैं, जो यह समझने में असफल हैं कि जिस तरह से स्थान शब्द को प्रचलित किया गया उसका सामाजिक प्रक्रियाओं पर एक गहरा प्रभाव हो सकता था। इस प्रकार आधुनिक जीवन शैली में सुंदर लेकिन रहने के अनुपयुक्त डिजाइन के कई उदाहरण हैं। समस्याओं से सामाजिक और स्थानिक दृष्टिकोण के बीच अनेक व्यक्ति और व्यक्तियों के समूह और यहां तक कि पूरे विषय रेंग आए हैं। समाजशास्त्रीय कल्पना रखने वाले अनेक लोगों ने सामाजिक प्रक्रिया में स्थानिक आयाम के महत्व को पहचाना है।

हैलोवेल और हाल ने नृविज्ञान (बाद में प्रोक्सेमिक्स के नए विज्ञान का प्रस्ताव) में, टिनबरगेन, और लार्नेज ने नीतिशास्त्र में, मनोवैज्ञानिक पर्यावरण को डिजाइन करने के लिए मानव प्रतिक्रिया को प्रभावित करने में स्थान की भूमिका का अध्ययन किया है। पिगेट और इनहेल्डर ने बच्चों में स्थानिक चेतना के विकास का अध्ययन किया, केसिरर जैसे दार्शनिकों के दृष्टिकोण पर स्थानिक चेतना के प्रभाव की स्पष्ट मान्यता के साथ उसके आसपास की दुनिया के साथ संबंध को देखना, इनके कुछ उदाहरण हैं। हमें इस

टिप्पणी

समूह में क्षेत्रीय अर्थशास्त्री और क्षेत्रीय वैज्ञानिकों का भी पता लगाना चाहिए। अन्य लोग दूसरे अंतराफलक से इस दिशा में चले आए हैं।

स्थानिक चेतना की एक परंपरा में प्रशिक्षित लोगों को एहसास हुआ कि कैसे स्थानिक रूप की फैशनिंग सामाजिक प्रक्रिया को प्रभावित कर सकती है। लिंच और डाक्सिएड जैसे आर्किटेक्ट अपने एकिस्टिक्स के प्रस्तावित नए विज्ञान के साथ और हावर्ड तथा एबरक्रोम्ब जैसे शहर नियोजक भी इनमें शामिल हैं। अंतराफलक को बनाए रखने वालों में हम क्षेत्रीय भूगोलवेत्ता भी पा सकते हैं, जो अपनी निषेध से लदी कार्यप्रणाली और कमजोर विश्लेषणात्मक उपकरणों के बावजूद, अभी भी कुछ अवसरों पर कुछ गहरी अंतर्दृष्टि देने का प्रबंधन कर सकते हैं। जिसमें क्षेत्रीय चेतना, क्षेत्रीय पहचान और प्राकृतिक और मानव निर्मित पर्यावरण की एक विशिष्ट स्थानिक संरचना बनाने के लिए समय पर एक-दूसरे में विलय हो सकता है।

अंतराफलक एक विशाल लेकिन व्यापक रूप से फैला हुआ साहित्य है। लेकिन अपने संदेश गढ़ने के लिए इन सब को एक साथ खींचना मुश्किल है। शायद एक के लिए शहर के बारे में हमारी समझ के लिए एक नया वैचारिक ढांचा बनाने की तलाश में हमारा पहला कार्य इस विशाल फैले साहित्य के लिए सर्वेक्षण और विश्लेषण होगा। इस तरह के संश्लेषण से शायद पता चलता है कि प्रमुख वैचारिक समायोजन के बिना इस क्षेत्र में काम करना कितना मुश्किल है। यह विचार करने के लिए दिलचस्प है, उदाहरण के लिए, इस पर विचार करना दिलचस्प होगा कि शहर योजनाकार और क्षेत्रीय वैज्ञानिक के लिए उनकी शहर प्रक्रियाओं को समझने की कोशिश में एक-दूसरे को समायोजित करने में कितना समय लगा होगा।

स्थानिक रूप की समस्याओं की पेचीदगियां क्षेत्रीय विज्ञान में पूर्व कार्यकर्ताओं से छूट गई लगती हैं। स्थान ने या तो (एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा समझने के बजाय मान लिया गया था) एक क्षेत्रीय संरचना उत्पन्न की जिसे तब राष्ट्रीय स्तर के लेखांकन (जिससे हम क्षेत्रीय लेखा और अंतरक्षेत्रीय इनपुट-आउटपुट पाते हैं) के लिए व्यवस्था, तैयार करने में लागू किया जा सकता है, या स्थान केवल परिवहन लागत उत्पन्न करता है जिसे उत्पादन प्रक्रिया (जिसमें से हम अधिकांश स्थान सिद्धांत और अंतरक्षेत्रीय संतुलन मॉडल प्राप्त करते हैं) में शामिल अन्य लागत के खिलाफ प्रतिस्थापित किया जा सकता है। स्थान मुख्य रूप से तैयार वैचारिक ढांचे में एक साधारण विकल्प है जिसे प्राथमिक तौर पर स्थानहीन आर्थिक विश्लेषण के लिए निकाला गया था। क्षेत्रीय वैज्ञानिक और क्षेत्रीय अर्थशास्त्री अब भी अर्थशास्त्र को समझने और स्थान की गलतफहमी के लिए एक भविष्यवाणी दिखा रहे हैं। तथापि, शहरी नियोजन का प्रभुत्व परंपरागत रूप से बोर्ड डिजाइन ड्राइंग के एक प्राथमिक उपाय के रूप में बना हुआ है और विशेष रूप से नक्शे से डिजाइन की प्रक्रिया के द्वारा, मानव स्थानिक संगठन के विवरण के रूप में भूमि के उपयोग में पूरी तरह से डूब गया था। भूमि के एक विशेष टुकड़े के बारे में एक विशेष योजना का निर्णय लेने में, शहर योजनाकार के लिए क्षेत्रीय वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री द्वारा अच्छी तरह से पुष्टि कर एकत्रित किए गए तथ्यों के सामान्यीकरण का बहुत कम या कोई उपयोग नहीं किया गया था।

उसने अपने काल्पनिक सहज मूल्यांकन से अपने योजना नक्शे में इन्हें लाल या हरे रंग में दिखाया और स्थानिक रूप की डिजाइन में आर्थिक और सामाजिक कारकों के

टिप्पणी

अपने विचार के अनुसार दिखाया (बशर्ते, कि उसका निर्णय पूरी तरह से राजनीतिक दबाव से निर्धारित नहीं था)। वेबर, जो एक सामाजिक प्रक्रिया की एक अधिक जागरूकता में स्थानिक डिजाइन पक्ष पर योजनाकार को एक ओर धकेलने के लिए मजबूत अधिवक्ताओं में से एक रहा है, का मानना है कि योजनाकार के लिए यह महत्वपूर्ण है कि स्वयं भ्रम निवारण के लिए कुछ गहरे बैठे सिद्धांतों जो सरल नक्शे योग्य नमूने में आदेश पाने का प्रयास है पर विचार करे, जबकि यह वास्तव में बहुत ही जटिल सामाजिक संगठन में छिपा हुआ है।

इसलिए नगर के संदर्भ में सामाजिक और भौगोलिक कल्पनाशक्ति को एक साथ लाने के लिए कुछ दबाव के संकेत रहे हैं। लेकिन यह एक संघर्ष रहा है। अधिकतर शहर की समस्याओं का विश्लेषण करने के लिए व्यवहार्य विकल्प के रूप में भौगोलिक और समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण को असंबंधित या कम अच्छा माना गया है। उदाहरण के लिए, कुछ ने एक शहर का स्थानिक रूप संशोधित करने के लिए और इस तरह से सामाजिक प्रक्रिया को मोड़ने की मांग की है (यह आमतौर पर हावर्ड से भौतिक योजनाकारों का दृष्टिकोण रहा है)। दूसरों ने इस आशा के साथ सामाजिक प्रक्रियाओं पर संस्थागत बाधाओं की मांग की कि यह अकेले आवश्यक सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त होगा। इन रणनीतियों का विकल्प नहीं है। इन्हें पूरक के रूप में माना जाना चाहिए। दिक्कत यह है कि एक का उपयोग कभी-कभी दूसरे के उपयोग के साथ एक संघर्ष पैदा करता है।

स्थानिक रूप और सामाजिक प्रक्रिया में एक ही चीज के बारे में सोच के विभिन्न तरीके के तौर पर किसी भी सफल रणनीति की सराहना करनी चाहिए। इसलिए हमें उनके बारे में अपनी सोच को मिलाना चाहिए या किसी को शहर की समस्याओं से निबटने के लिए परस्पर विरोधी रणनीति बनाना जारी रखना चाहिए। वेबर वैचारिक पूर्वाग्रह शहर के रूपों के पुनर्निर्माण अभियान के लिए पिछले युग की सामाजिक संरचनाओं के मिलान की शिकायत करते हैं और कहते हैं कि महानगर के स्थानिक पहलुओं की एक व्यावहारिक समस्या को सुलझाने के आदिम दृष्टिकोण का उद्भव, जिसमें सतत रूप से देखा जाता है, शहरी समाज की प्रक्रिया के द्वारा परिभाषित और तर्क के लिए है। लेवेन ने भी इसी तरह 'सैद्धांतिक ढांचे के कुछ प्रकार के भीतर जिसमें हम शहर को रूप देने वाले कारकों की पहचान करते हैं और जो, बदले में, एक विश्लेषणात्मक पूर्वानुमान रास्ते से कुछ स्थानिक रूप उत्पादित करते हैं, के लिए वकालत की है। तब हम स्थानिक कामकाज के मूल्यांकन का कोई परिणामी तरीका खोज सकते हैं, जो बदले में, शायद वापस स्थानिक रूप से स्वयं के निर्धारकों पर फीड चाहते हैं।'

1.3.2 भूगोल एक प्राकृतिक विज्ञान के रूप में

भूगोल को एक विषय के रूप में वास्तविक रूप से 19वीं शताब्दी में मान्यता मिली। कई भूगोलवेत्ताओं और गैर-भूगोलवेत्ताओं ने भूगोल के क्षेत्र को स्पष्ट रूप से विस्तारित करने के लिए भूगोल को परिभाषित करने का प्रयास किया। भूगोल शब्द को सबसे पहले विभिन्न विद्वानों की रचनाओं में देखा जा सकता है। विभिन्न विद्वानों ने इसे कुछ ही शब्दों में परिभाषित करने का प्रयास किया। भूगोल की अवधारणा में पिछली शताब्दियों में परिवर्तन भी आया है। ऐसे गतिशील विषय की कोई एक परिभाषा देना अत्यंत ही कठिन है।

रिचर्ड हार्टशोन ने यह परिभाषा प्रस्तावित की—भूगोल पृथ्वी की सतह के परिवर्तनशील स्वभाव का एक परिशुद्ध, क्रमिक और तार्किक वर्णन देने से संबंधित है।

यह परिभाषा सार्वभौमिक रूप से स्वीकार्य नहीं है। कुछ लोगों ने भूगोल के सार को बेहतर ढंग से समझाने के लिए स्वस्थ विशिष्टीकरण और स्थानिक अंतर्क्रियाओं जैसे शब्दों की वकालत की।

मानचित्रण और भौगोलिक सूचना प्रणाली भूगोल को एक वैज्ञानिक विषय के रूप में स्थापित करने वाले भौगोलिक अध्ययन के महत्वपूर्ण साधन हैं। प्रौद्योगिकी के विकास ने भूगोलवेत्ताओं को उनके पारंपरिक कार्य में सहायता प्रदान की है।

भूगोल की वैज्ञानिक स्थिति को लेकर गंभीर प्रश्न उठाए गए हैं। भूगोल का इतिहास बताता है कि भूगोलवेत्ताओं ने विज्ञान के रूप में इसकी स्वीकार्यता को विश्वभर में स्थापित करने का प्रयास किया। भूगोल को विज्ञान के रूप में इंगित करने का एक अन्य तर्क अन्य विज्ञानों जीवविज्ञान, भौतिक शास्त्र और रसायन शास्त्र से इसका निकट का संबंध है। जलवायु विज्ञान, भूआकृति विज्ञान, जल विज्ञान, समुद्र विज्ञान, भूविज्ञान और भूमि के विभिन्न रूपों सहित प्राकृतिक अद्‌भुत घटनाओं के अध्ययन में वैज्ञानिक परिशुद्धता की बड़ी युक्तियों से निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते। भूगोलवेत्ताओं को डेटा संग्रहण के साथ कार्य करना पड़ता है जो वास्तव में यह संकेत करता है कि भूगोल एक विज्ञान है या नहीं।

चूंकि गुणात्मक डेटा संख्यात्मक नहीं होता है इसलिए कई लोग इसे वैज्ञानिक नहीं मानेंगे। क्योंकि भूगोल की प्रकृति बदली है इसलिए यह पृथ्वी की सतह के विविध स्वरूपों के तार्किक वर्णनों और व्याख्याओं की मांग करता है। जैसा कि इसे यीट्स के शब्दों में वर्णित किया जा सकता है, 'भूगोल को ऐसे विज्ञान के रूप में संदर्भित किया जा सकता है जो ऐसे सिद्धांतों के तार्किक विकास और परीक्षण से संबंधित है जो धरती की सतह पर विविध विशेषताओं के स्थानिक वितरण और स्थान की व्याख्या करता है और पूर्वानुमान लगाता है।'

इस परिवर्तन को 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में देखा जा सकता है, जब भूगोलवेत्ताओं ने भूगोलवेत्ताओं के ज्ञान को मापना आरंभ किया। अन्य विषयों के समान ही भूगोल को भी सामान्यीकरण और सिद्धांत निर्माण की समस्याओं का सामना करना पड़ा।

20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की अव्यवस्था की स्थिति ने भूगोल के महत्व को पहले से कहीं अधिक बढ़ा दिया। विकसित बुद्धिमान भूगोलवेत्ताओं ने भूगोल के अध्ययन में गणितीय भाषा का प्रयोग आरंभ किया जो संभवतः आवश्यक था। इस प्रकार नए इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का बहुतायत से प्रयोग किया गया। मात्रा निर्धारण के इस अभ्यास के अपने गुण और दोष थे, इसके द्वारा भूगोल को विज्ञान के रूप में स्थापित किए जाने के एक कदम के रूप में देखा जा सकता था।

हालांकि भूगोल मानवीय तत्वों को भी शामिल करता है जो पारंपरिक रूप से गुणात्मक तिथि का उपयोग करता है। चूंकि गुणात्मक तिथि संख्यात्मक नहीं होती इसलिए कई लोग इसे वैज्ञानिक नहीं मानते, जो यह इंगित करता है कि भूगोल का कुछ क्षेत्र ऐसा है जिसे प्रत्येक व्यक्ति विज्ञान नहीं कहेगा। प्रश्न उठता है कि भूगोल का प्रभावी भाग कौन सा है। विज्ञान के रूप में भूगोल या गैर-वैज्ञानिक भूगोल।

आज सामाजिक रूप से अधिकांश पारंपरिक विषय जैसे भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र और भूगोल एक विज्ञान के रूप में उभरे हैं। अभी तक के तथ्य भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र को विज्ञान के रूप में और मानव भूगोल को विज्ञान के न होने के रूप में दर्शाते हैं।

अत: यह निर्णय करना कि भूगोल विज्ञान है या नहीं, इस पर निर्भर करता है कि विज्ञान और भूगोल को कैसे परिभाषित किया गया है। यह महत्वपूर्ण नहीं कि क्या प्रश्न पूछा गया है, जहां डेटा संग्रहण और विश्लेषण है वहां स्वाभाविक रूप से भूगोल के क्षेत्र को वैज्ञानिक माना जा सकता है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. निम्न में से कौन भूगोलवेत्ता है जिसने भूगोल के सामाजिक विज्ञान रूप के बारे में अपने विचार प्रकट किए हैं?

   (क) एच.सी. प्रिंस (ख) हार्वे

   (ग) मिल्स (घ) उपर्युक्त सभी।

4. निम्न में से किसने भूगोल के प्राकृतिक विज्ञान के रूप के बारे में अपने विचार प्रस्तुत किए हैं?

   (क) रिचर्ड हार्टशोन (ख) यीट्स

   (ग) (क), (ख) दोनों (घ) इनमें से कोई नही।

1.4 भूगोल के दर्शन में चयनित अवधारणाएं - भाग 1

दर्शन सोचने का एक संक्षिप्त तरीका है जो काल्पनिक विश्वासों और प्रयोजन के विचार को समझ की एक सुसंगठित प्रणाली में व्यवस्थित करने के लिए तर्क का प्रयोग करता है। यह विचारों को अनुभव में संश्लेषित करके ये दावा भी करता है कि विचार मात्र कल्पना की किरणें ही नहीं हैं। अस्तित्व को समझने के क्रम में, इन विचारों का सुसंगत तरीके से एक संगठन है।

भूगोल का दर्शन

जैसा कि हम जानते हैं कि तिथि संग्रहण प्रयोग, स्थान विश्लेषण और अंतर्संबंधिता भौगोलिक दर्शन के तत्व में निहित हैं जो इसे और अधिक गतिशील बनाते हैं। चुनौतियों से निबटने के लिए भूगोल में समझ की बढ़ती आवश्यकता के साथ, भूगोलवेत्ताओं के कार्य ने भूगोल के दर्शन को बदल दिया है। आज भूगोलवेत्ता अधिक वैज्ञानिक और मानवतावादी दृष्टिकोणों के साथ, सिद्धांत या प्रतिमान निरूपित करने में व्यस्त हैं।

भूगोल के दृष्टिकोण का वर्तमान स्वरूप 1970 के दौरान निर्मित हुआ जब बदलते राजनीतिक परिदृश्य का भूगोलवेत्ताओं और भौगोलिक अध्ययनों पर गंभीर प्रभाव था। उसी दौरान निश्चयात्मकता, यथार्थवाद जैसी अवधारणाएं प्रकाश में आईं।

निश्चयात्मकतावाद

निश्चयात्मकता विज्ञान और वैज्ञानिक पद्धति को ज्ञान के एकमात्र स्रोत (तथ्य की प्रभुता) और मान (सांस्कृतिक) के रूप में विशेषीकृत किया जाने वाला और धर्म और पारंपरिक दर्शन, विशेष रूप से तत्वमीमांसा के संबंध में प्रबल विरोध वाला, एक दार्शनिक आंदोलन है। अगस्त काम्टे ने तत्वमीमांसा को जांच की अनुपयोगी शाखा के रूप में घोषित किया। उन्होंने समस्त मानवीयता की एकता, अनुरूपता और उन्नति के लिए वैज्ञानिकों द्वारा शासित 'समाजशाही' की मांग की।

निश्चयात्मकता को अनुभववाद भी कहा जाता है। यह एक दार्शनिक दृष्टिकोण है जो ज्ञान को उन तथ्यों जिनका प्रेषण किया जा सकता है और इन तथ्यों के बीच संबंधों तक सीमित करता है। निश्चयात्मकता के समर्थक इस बात का समर्थन करते हैं कि केवल विज्ञान ही अनुभववादी प्रश्नों से संबंधित हो सकता है। अनुभववादी प्रश्न वे प्रश्न हैं जो यह बताते हैं कि वस्तुएं वास्तव में कैसी हैं। इस परिप्रेक्ष्य में, वास्तविकता को ऐसी दुनिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसका अनुभव किया जा सकता है। अनुभववादी परीक्षण में, यह मान लिया जाता है कि तथ्य 'स्वयं बोलते हैं'।

ऐतिहासिक रूप से, निश्चयात्मकता की अवधारणा फ्रांसीसी क्रांति के बाद उभरी और अगस्त काम्टे द्वारा 1830 के दौरान फ्रांस में स्थापित हुई। क्रांति ने फ्रांसीसी समाज में अव्यवस्था पैदा की। निश्चयात्मकता क्रांति के पूर्व व्यापक रूप से फैले 'नकारात्मक दर्शन' के विरुद्ध एक विवादात्मक हथियार के रूप में आरंभ हुई। नकारात्मक दर्शन एक अव्यावहारिक और काल्पनिक परंपरा थी जो प्रायोगिक प्रश्नों की बजाय भावनात्मक रूप से अधिक संबंधित थी और जो मौजूदा प्रश्नों के यूरोपियन विकल्पों पर विचार कर समाज में परिवर्तन लाना चाहता थी। निश्चयवादियों ने ऐसी कल्पनाओं को 'नकारात्मक' संदर्भित किया क्योंकि ये न तो रचनात्मक थीं और न ही व्यावहारिक। इसने यह भी दिखाया कि दर्शन एक 'अपरिपक्व' विज्ञान था। अन्य वैज्ञानिकों के समान, दार्शनिकों को स्वयं के लिए ऐसी काल्पनिक पद्धतियों पर विचार नहीं करना चाहिए अपितु इस पर अध्ययन करना चाहिए कि भौतिक वस्तुओं और दी गई परिस्थितियों से उन्हें क्या ग्रहण करना चाहिए। इस दृष्टिकोण को निश्चयात्मक दृष्टिकोण के रूप में अनुशंसित किया जाना था। निश्चयात्मक आंदोलन ने बड़ी संख्या में निषेधों और अनुभववादी अन्वेषणों के विरुद्ध धार्मिक विश्वासों को तोड़ा।

व्यावहारिकतावाद

व्यावहारिकता एक दार्शनिक परिप्रेक्ष्य है जो मुख्य रूप से अनुभव के द्वारा अभिप्राय निर्मित करने से संबंधित है। अन्य शब्दों में, व्यावहारिकता वह दर्शन है जो इस बात पर बल देता है कि अर्थ और ज्ञान को केवल अनुभव में उनकी भूमिका के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह परिणामों का मूल्यांकन करने में अनुभवों, प्रायोगिक जांच और सत्य को मापदंड मानने पर बल देता है। अन्य शब्दों में, व्यावहारिकता 'दर्शन में वह स्थिति है जो समस्याग्रस्त स्थितियों के समायोजन और संकल्प के संदर्भ में अनुभव में उनके कार्य के आधार पर अर्थ और ज्ञान को परिभाषित करती है'।

व्यावहारिकता निश्चयवाद का संशोधित रूप है। निश्चयवाद के समान ही, व्यावहारिकता वैज्ञानिक पद्धति के उपयोग का समर्थन करती है। केवल एक अंतर यह है कि यह आंदोलन मानवीय समस्याओं का समाधान ढूंढ़ने का प्रयास करता है। व्यावहारिकता

के समर्थक समाज की समस्याओं का समाधान करने और भौगोलिक सत्यता पर बल देने के लिए मूल्य-आधारित वैज्ञानिक पद्धति (मनुष्य की प्रकृति विश्वास और मानकों को शामिल करते हुए) का उपयोग करते हैं। अन्य शब्दों में, यह कार्रवाई-उन्मुख, उपयोगकर्ता-उन्मुख है और मूल्यांकन और कार्यान्वयन को शामिल करने के लिए प्रायोगिक विधि को विस्तारित करता है। किसी आकस्मिक समस्या का समाधान करने के उद्देश्य से अनुसंधान किया जाता है और जिसका परिणाम किसी लक्षित जनसंख्या के लिए ध्येय की पूर्ति का मार्ग है।

भूगोल में, इस दृष्टिकोण को नियोजन के विचार की बजाय नियोजित क्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए। चूंकि मूल्यांकन और कार्यान्वयन चरण सम्मिलित होते हैं, इसलिए हमें चीजों को उसी तरह लेना चाहिए जैसी वे हैं। ध्येय के लिए मार्ग प्रदान करके, जो मानव गतिविधियां और कल्याण को शामिल करता है, उसे मूल्यों को शामिल करना चाहिए, जो वास्तविकता का अनिवार्य भाग हैं। कार्रवाई-उन्मुख होते हुए, जनमत तैयार करना, विश्वास उत्पन्न करना और अन्य कार्रवाइयां व्यावहारिकता में बहुत महत्वपूर्ण हैं।

कार्यात्मकतावाद

कार्यात्मकता की परिभाषा समय और विषय के साथ बदलती रही है। 'कार्य' शब्द, जो कि कार्यात्मकता का मुख्य घटक है, की निम्नलिखित पांच महत्वपूर्ण तरीकों से व्याख्या की गई है-

1. यह किसी विशिष्ट औपचारिक प्रयोजन के लिए सार्वजनिक एकत्रण को दर्शाता है।
2. राजनीति विज्ञान में, यह सत्ता की कवायद में सम्मिलित किसी कार्य से संबद्ध कर्तव्यों को दर्शाता है।
3 गणितीय अर्थ में, यह किसी चर से किसी दूसरे चरण के बीच संबंध को दर्शाता है।
4. समाजशास्त्र और जीव विज्ञान में, जीवधारियों के निर्वाह में योगदान देने वाली प्रक्रिया को दर्शाता है।
5. भूगोल में, यह व्यवसाय का पर्याय है।

कार्य की परिभाषाओं में विभिन्नता किसी विषय के भीतर और कई सामाजिक विज्ञानों में कार्यात्मकता के अर्थ में विभिन्नता के रूप में आई है। यह हालांकि, एक दृष्टिकोण है जो लक्ष्यों पर बल देने के अलावा भूमिका और कर्ता की आवश्यकताओं और कड़ियों के साथ कार्यात्मक संबंधों की जांच करता है। सरल शब्दों में, कार्यात्मकता कार्यों (व्यवसायों) और समाज में कार्यों के विश्लेषण से संबंधित है। यह ऐसा परिप्रेक्ष्य है जो विश्व को एक विभिन्नीकृत और परस्पर निर्भर प्रणालियों के रूप में देखता है, जिसकी समग्र कार्रवाइयां उन दोहराए जाने योग्य और पूर्वकथनीय नियमितताओं के उदाहरण हैं जिनमें आकार और कार्य को संबंधित माना जा सकता है, और जो इन आकार-कार्य संबंधों की प्रणालियों के अनुरक्षण और निरंतरता में उनकी भूमिका के संदर्भ में व्याख्या करता है।

कार्यात्मकता के आधारभूत सिद्धांत इस प्रकार हैं-

टिप्पणी

(i) समाजों को समग्र रूप में और अंतर्संबंधित प्रणाली फ्रेमवर्क के रूप में परीक्षित किया जाना चाहिए।

(ii) कारण अन्योन्य और कई बार, बहुल होता है।

(iii) सामाजिक प्रणालियां आमतौर पर संतुलन की स्थिति हैं।

(iv) कार्यात्मकता, समाज के इतिहास में कम, लेकिन सामाजिक अंतर्क्रिया में अधिक रुचि रखती है।

(v) कार्यात्मकता, सामाजिक संरचना के घटकों के बीच अंतर्संबंधों को ढूंढ़ने का प्रयास करती है।

भौगोलिक अनुसंधान में कार्यात्मक दृष्टिकोण फ्रांसीसी विद्वानों जैसे जीन ब्रूनहेस और उनके समकालिकों के लेखन में देखा जा सकता है। 19वीं शताब्दी के अंत और 20वीं शताब्दी के आरंभ के फ्रांसीसी विद्वानों ने तर्क दिए कि संस्कृति एक अविभाज्य पूर्णता है। 'क्षेत्र' को एक कार्यात्मक इकाई माना गया जो इसके भागों के जोड़ से कहीं अधिक था।

अस्तित्ववादितावाद

अस्तित्ववादिता एक दार्शनिक विचार है कि मनुष्य अपनी प्रकृति के निर्माण के लिए स्वयं जिम्मेदार है। यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता, व्यक्तिगत निर्णय और व्यक्तिगत प्रतिबद्धता पर बल देता है। यह एक चुनौती है और साथ ही पूर्ण लक्षित बहिष्कार, परिमाणात्मक और निर्धारणात्मक विश्लेषण के रूप में उभर रहा है। यह मानव मूल्यों, गुणवत्ता, वस्तुपरकता और आत्मिकता के लिए चिंता जताता है। अस्तित्ववादी भूगोल में, एक केंद्रीय अवधारणा अस्तित्ववादी स्थान है। सैम्युअल के अनुसार, यह 'स्थान का निर्दिष्टीकरण' है। ऐसा निर्दिष्टीकरण मानवीय सत्यता का परिणाम है। अस्तित्ववादिता को एक ओर, ठोस त्वरित अनुभव को ज्ञान के क्षेत्र में यथावत पुनर्स्थापित करने के प्रयास के रूप में माना जाता है, और दूसरी ओर यह उस तार्किक खाई को पाटने का प्रयास है जो उद्देश्यपरक से वस्तुपरक को, आदर्शवादिता को भौतिकवादिता से और अस्तित्व से सार को अलग करता है। यह 'सार से पहले अस्तित्व की आन' पर निर्भर है। इस वाक्यांश का अर्थ है कि 'सभी अस्तित्वों से पहले, मनुष्य खुद से सामना करता है, विश्व में आगे बढ़ता है, और इसके बाद खुद को परिभाषित करता है।' इसका यह अर्थ भी है कि मनुष्य को समझने के लिए हमें सबसे पहले 'वस्तुपरक जीवन के साथ शुरुआत' करनी चाहिए और 'मनुष्य और कुछ नहीं अपितु वही है जो वह स्वयं को बनाता है।' अस्तित्ववादिता का पहला सिद्धांत 'एक बार दुनिया में भेज दिए जाने के बाद मनुष्य जो कुछ भी करता है उसके लिए जिम्मेदार होता है।'

आदर्शवादितावाद

यह विचार वह है जो मानता है कि सत्यता मानसिक या मस्तिष्क-आधारित होती है। दार्शनिक अर्थ में, आदर्शवाद वह विचार है कि मस्तिष्क की गतिविधि मानव अस्तित्व और ज्ञान का आधार है। आदर्शवाद प्रकृतिवाद और भौतिकवाद के समर्थकों के विरुद्ध है। आदर्शवादी दर्शन का सार यह है कि मानसिक गतिविधि का अपना जीवन होता है जो भौतिक वस्तुओं और प्रक्रियाओं से नियंत्रित नहीं है और विश्व को केवल विचारों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से जाना जा सकता है। इस विचार के अनुसार, समस्त ज्ञान अंततः किसी

व्यक्ति के सांसारिक व्यक्तिपरक अनुभव पर आधारित है और मानसिक अवधारणाओं तथा विचारों को सम्मिलित करता है।

टिप्पणी

भूगोल में आदर्शवादिता के सबसे प्रख्यात समर्थनकर्ता 'ग्यूक' ने तर्क दिया कि हमने अपने विषयों के मानस में प्रवेश करने की पद्धतियां विकसित की हैं ताकि उनके विचारों के बारे में सोचा जा सके और उनकी अपेक्षाओं का औचित्य सिद्ध किया जा सके, पद्धतियां जो मानव के इरादों और बदलती दुनिया में हमारी भूमिका को निर्धारित करेंगी। यह विचार कि मानव व्यवहार बड़े पैमाने पर मानसिक गतिविधि द्वारा नियंत्रित है, वह आधार है जिस पर आदर्शवादी जोर देते हैं कि सामाजिक विज्ञान और इतिहास तार्किक रूप से प्राकृतिक विज्ञानों से अलग है। सामाजिक विज्ञान के तार्किक प्रत्यक्षवादी विचार का अपना दृष्टिकोण और पद्धतियां हैं। यद्यपि सामान्य (प्राकृतिक) वैज्ञानिक रूप में मानवीय व्यवहार को एक भौतिक प्रक्रिया नहीं माना जा सकता, मानवीय विचारों का तार्किक स्वभाव किसी व्यक्ति के लिए सुविचारित गतिविधि को इस तरह से समझना संभव बनाता है कि भौतिक प्रक्रियाओं को समाविष्ट करना संभव नहीं है। ऐसा इस तथ्य के कारण है कि बड़ी संख्या में आदर्शवादी दार्शनिकों ने सामाजिक विज्ञानों और इतिहास के लिए विशिष्ट तरीकों को इस पूर्वधारणा पर विकसित किया कि मानव गतिविधि को विचार के संदर्भ में समझा जाना चाहिए।

यथार्थवाद

यथार्थवाद वह विचार है जो मानता है कि वास्तविकता मस्तिष्क में स्वतंत्र रूप से स्थित रहती है यह मस्तिष्क-आधारित नहीं है। यह कई तरह से आदर्शवाद के विपरीत है। गिब्सन आदर्शवाद को यथार्थवाद का व्यवहार्य विकल्प सुझावित करते हैं। यथार्थवाद का आधारभूत दर्शन यह है कि तथ्य स्वयं बोलते हैं और स्पष्टीकरण तार्किक और प्रेरक होते हैं। यथार्थवाद भौगोलिक व्याख्या में सिद्धांतों और प्रतिमानों का समर्थन करता है। यह वस्तुनिष्ठ दर्शन और निश्चयात्मकता के बहुत निकट है लेकिन व्याख्या की इसकी भिन्न कार्य प्रणाली है।

ऐतिहासिक रूप से, प्लेटो-सुकरात विचार के अनुसार यथार्थवाद को नामवाद के विरोध में इस सिद्धांत के लिए प्रयोग किया गया कि सार्वभौमिक और अमूर्त तत्वों का वास्तविक वस्तुनिष्ठ अस्तित्व होता है। वर्तमान में, हालांकि, इसे आदर्शवाद के विरोध में प्रयोग किया जाता है। विज्ञान के अन्य दर्शनों जैसे कि प्रकृतिवाद, निश्चयवाद और आदर्शवाद के उलट, यथार्थवाद इस सिद्धांत पर आधारित है कि मानव विज्ञान एक अनुभव आधारित तार्किक उद्यम है जो छिपी हुई, लेकिन 'वास्तविक' संरचनाओं का जो अकस्मात उन्हें उत्पन्न करती हैं, का वर्णन करके प्रेक्षणीय नियमितताओं की व्याख्या करता है।

विचारों के अपने सिद्धांत में, प्लेटो ने इस बात पर जोर दिया कि समय और स्थान में जिन रूपों को हम देखते, स्पर्श करते, स्वाद लेते और गंध लेते हैं वे मौजूद नहीं होते और हमारी इंद्रियों द्वारा जानने योग्य नहीं होते। कोई विशिष्ट घटना केवल एक आभास है जो किसी निश्चित समय के साथ अदृश्य हो जाएगी। उदाहरण के लिए, कोई विशिष्ट पर्वत जैसे हिमालय मौजूद नहीं है, भूवैज्ञानिक समय के साथ यह समुद्र तल में मिल जाएगा। इसके विपरीत, आम और सार्वभौमिक शब्द 'पर्वत' रूखा और स्थायी है। इसके ठीक विपरीत, नामवादी, विशेषकर, अरस्तूवादी एक आदर्श पर्वत के अस्तित्व से इंकार

करते हैं। आरंभिक नामवादियों के लिए 'पर्वत' केवल एक शब्द था। वास्तविकता यह है कि कोई विशिष्ट पर्वत वही है जिसे हम सभी देख और छू सकते हैं।

यथार्थवादियों और नामवादियों के बीच की लड़ाई समस्याग्रस्त तत्वों वाले अमूर्त तत्वों के अस्तित्व के समय की है, जो मध्यकाल तक चलती रही। मध्यकाल के दौरान, प्लेटा-सुकराती विचार को दार्शनिक यथार्थवाद के नाम से जाना गया। दार्शनिक यथार्थवाद के मुख्य समर्थक जान स्काट थे। अपने निबंध 'प्रकृति के विभाजन पर' में उन्होंने कारण बताए कि भौतिक दुनिया के विभाजन किसी छिपे हुए को प्रकट करते हैं। अपने आप में वे सत्य नहीं हैं। भौतिक दुनिया की चक्रीय प्रक्रिया मौसमी है और ज्योतिष संबंधी चक्र हैं जो स्काट के लिए एक दैवी आदेश हैं, जो एक तालमेल और कानून का अस्तित्व सिद्ध करते हैं। वे सिद्ध करते हैं कि साधारण अर्थ में दुनिया सत्य नहीं है।

अपनी प्रगति जांचिए

5. भूगोल के दर्शन की प्रमुख चयनित अवधारणा कौन सी है?
   (क) निश्चयात्मकतावाद
   (ख) व्यावहारिकतावाद एवं कार्यात्मकतावाद
   (ग) अस्तित्ववादितावाद, आदर्शवादितावाद तथा यथार्थवाद
   (घ) उपर्युक्त सभी

1.5 भूगोल के दर्शन में चयनित अवधारणाएं - भाग 2

भूगोल के दर्शन की कुछ अन्य चुनी हुई अवधारणाओं का अध्ययन व अवलोकन यहां किया जा रहा है।

मौलिकतावाद

भूगोल में मौलिकता दृष्टिकोण मात्रात्मक क्रांति और निश्चयात्मकता की प्रतिक्रियास्वरूप 1970 में विकसित हुआ जिसने स्थानिक विश्लेषण पर अधिक जोर देते हुए, भूगोल को एक स्थानिक विज्ञान बनाने का प्रयास किया। यह समकालीन उदार पूंजीवादी समाज के साथ आरंभ हुआ लेकिन बाद में मार्क्सवादी विश्लेषण की शक्ति के विश्वास के आस-पास सिमट गया। मौलिकतावादियों के अनुसार, उत्पादन के पूंजीवादी तरीके में असंतुलन अंतर्निहित है। कराधान नीतियों के माध्यम से आय का पुनर्वितरण गरीबी की समस्याओं का समाधान नहीं करेगा। पीट के अनुसार केंद्रीय नौकरशाही का उन्मूलन, वातावरणीय डिजाइन और समुदाय के अराजक मॉडल से उसका प्रतिस्थापन करना नितांत आवश्यक है और भूगोलवेत्ताओं को उनकी कसौटी पर कार्य करना चाहिए।

मौलिकतावादी दृष्टिकोण के अनुयायियों का ध्यान मुख्य रूप से बड़े सामाजिक संगतता वाले मुद्दों जैसे कि असंतुलन, नस्लवाद, लैंगिकता, अपराध, दोष, श्वेतों और अश्वेतों, महिलाओं के मध्य भेदभाव, किशोरों और वातावरणीय संसाधनों के शोषण और वियतनाम युद्ध का अमेरिका में विरोध पर था। 1960 के उत्तरार्द्ध की घटनाएं, जैसे कि पश्चिमी दुनिया के बड़े शहरों का जलना, छात्र-अशांति, 1968 में पेरिस में कामगार-विद्रोह, बड़े पैमाने पर वियतनाम-युद्ध विरोधी प्रतिवादी कार्रवाइयां और मौलिक सांस्कृतिक सुधारों

ने स्थानिक विज्ञान के रूप में भूगोल की अप्रासंगिकता उजागर की और स्थानिक विश्लेषण का खोखलापन सिद्ध किया। इसकी पृष्ठभूमि में मौलिकतावादी छात्रों और जूनियर संकाय सदस्यों ने पारंपरिक भूगोल (स्थानिक विज्ञान के रूप में भूगोल) को चुनौती दी और व्यावसायिक पत्रिकाओं में अधिक 'सामाजिक रूप से प्रासंगिक' भौगोलिक विषयों के आलेख प्रकाशित करना आरंभ कर दिए। 1969 में, विशेषकर क्रांतिकारी झुकाव वाले युवा भूगोलवेत्ताओं के रिसर्च पेपर प्रकाशित करने के लिए वारसेस्टर (मैसाचुसेट्स) के क्लार्क विश्वविद्यालय में भूगोल के एक मौलिकतावादी जर्नल एंटीपोड का आरंभ किया गया। युवा मौलिकतावादी भूगोलवेत्ताओं ने एंटीपोड में शहरी गरीबी, महिलाओं, अश्वेत लोगों और अल्पसंख्यक समूहों के विरुद्ध होने वाले भेदभाव, सामाजिक सुविधाओं तक असमान पहुंच, अपराध, गरीबी, सहनशीलता और लैंगिकता से संबंधित पेपर प्रकाशित किए। उन्होंने तृतीय विश्व के देशों में अल्प विकास, गरीबी, कुपोषण, बेरोजगारी और संसाधनों के दुरुपयोग पर भी आलेख प्रकाशित किए। इस प्रकार, मौलिकतावादियों ने उत्पीड़ितों का पक्ष लिया, उनके कारणों की वकालत की और सामाजिक बदलाव के लिए दबाव डाला। वास्तव में, मौलिकतावादी भूगोल, पश्चिम के पूंजीवादी समाज में विरोधाभासों और संकट की स्थिति में भूगोल विषय में सामाजिक संगतता के लिए एक खोज था।

मानवतावाद

मानवीय भूगोल स्थानिक विज्ञान के यांत्रिक मॉडलों से गहरे असंतोष के कारण विकसित हुआ जो मात्रात्मक क्रांति के बाद विकसित हुए थे। 1970 के आरंभ में सांस्कृतिक और ऐतिहासिक भूगोलवेत्ताओं ने निश्चयात्मकता पर हमला किया। वास्तव में, यह ज्यामितीय नियतिवाद का अस्वीकरण था जिसमें पुरुष और महिला को सार्वभौमिक स्थानिक संरचनाओं और अमूर्त स्थानिक कानूनों के आदेश का स्वत: प्रतिसाद देने के लिए बनाया गया था। स्थानिक विज्ञान (निश्चयवादी) के अनुयायियों ने लोगों को मानचित्र पर किसी बिंदु, ग्राफ पर डेटा और एक समीकरण में संख्या के जैसा माना। ठीक इसी समय इसके बिलकुल केंद्र में लोगों के भूगोल, वास्तविक लोगों के बारे में बात करने वाले और सभी के लिए मानवता विकसित करने वाले मानवता वाले मानव भूगोल का दावा किया गया।

मानवीय दृष्टिकोण के अपने समर्थन के साथ सर्वाधिक लोगों को आकर्षित करने वाले पहले भूगोलवेत्ताओं में से एक किर्क थे। लेकिन, वे तुआन थे जिन्होंने मानवीय भूगोल के लिए तर्क प्रस्तुत किए। 'मानवीय भूगोल' शब्द का सर्वप्रथम यी.फु.तुआन द्वारा 1976 में प्रयोग किया गया। मानवीय भूगोल का फोकस लोगों और उनकी स्थिति पर है। तुआन के लिए, मानवीय भूगोल एक ऐसा परिप्रेक्ष्य था जिसने लोगों और स्थान (मनुष्य और पर्यावरण) के बीच संबंधों की जटिलता और संदिग्धता को प्रकट किया।

नियतिवाद

नियतिवाद महत्वपूर्ण दर्शनों में से एक है जो द्वितीय विश्व युद्ध तक एक या दूसरे रूप में प्रभावी रहा। विचार यह है कि भौतिक वातावरण मानव गतिविधि के कोर्स को नियंत्रित करता है। अन्य शब्दों में, यह विश्वास कि दुनिया भर में मानव व्यवहार में भिन्नता; प्राकृतिक वातावरण में अंतरों के द्वारा स्पष्ट की जा सकती है। नियतिवादी विचारधारा का सार यह है कि इतिहास, संस्कृति, जीवन शैली और किसी सामाजिक समूह या देश का

टिप्पणी

विकास का चरण विशिष्ट रूप से या बड़े पैमाने पर वातावरण के भौतिक घटकों द्वारा शासित होते हैं। नियतिवादी आमतौर पर मनुष्य को एक निष्क्रिय अभिकर्ता मानते हैं जिन पर भौतिक घटक लगातार क्रिया कर रहे हैं और इस प्रकार उसकी मनोवृत्ति और निर्णय निर्माण प्रक्रिया को निर्धारित कर रहे हैं। सारांश में, नियतिवादी मानते हैं कि अधिकांश मानवीय गतिविधियां प्राकृतिक वातावरण की प्रतिक्रिया में स्पष्ट की जा सकती हैं।

पर्यावरणवाद

20वीं सदी के प्रारंभ में 'पर्यावरणवाद' संयुक्त राज्य में व्यापक स्तर पर फैला, जहां इसके प्रमुख समर्थक डब्ल्यू. एम. डेविस, एलेन चर्चिल सेम्पल और एल्सवार्थ हैंटिग्टन थे। सेम्पल, रात्जेल की प्रत्यक्ष वंशज थी। उन्होंने अपने गुरु के दर्शन का उपदेश दिया और इसलिए वे निर्धारणवाद की निष्ठावान समर्थक थीं। उनकी पुस्तकों 'अमेरिकन हिस्ट्री एंड इट्स जियोग्राफिकल कंडिशंस' और 'इन्फ्लुएंसेज ऑफ जियोग्राफिक एनवायरमेंट' ने 20वीं सदी के पूर्वार्द्ध के प्रारंभिक दशक में अमरीका में पर्यावरणवाद को स्थापित किया। 'इंफ्लुएंसेज ऑफ जियोग्राफिक एनवायरमेंट' निम्नलिखित अनुच्छेद के साथ प्रारंभ होता है।

मानव धरती की सतह का उत्पाद है। इसका अर्थ केवल यह नहीं है, कि वह धरती का बच्चा है, बल्कि इसका अर्थ यह है कि धरती ने उसे मातृत्व दिया, उसके लिए कार्य निर्धारित किया, उसके विचारों को निर्देशित किया, उसका सामना कठिनाइयों से करवाया, जिसने उसके शरीर को शक्ति प्रदान की और बुद्धि को तीक्ष्ण बनाया, उसे आवागमन या सिंचाई की समस्याएं दीं और ठीक उसी समय समाधान का संकेत भी दिया। धरती उसकी हड्डियों और कोशिकाओं में, मस्तिष्क और आत्मा में समा गई। पर्वतों पर, धरती ने उसे लोहे जैसी मजबूत मांस-पेशियां दीं, ताकि वो चढ़ाई चढ़ सके, तट के किनारे इसने कोमल और कमजोर बनाए, लेकिन इसके बजाय पैडल और चप्पू को हैंडल करने के लिए मजबूत छाती और भुजाएं दीं। नदी घाटी में धरती ने उसे उपजाऊ मिट्टी से जोड़ दिया।

संभावनावाद

यह दर्शन मानव तथा पर्यावरण के संबंध को सर्वथा भिन्न प्रकार से प्रस्तुत करने का प्रयास करता है, यह मानव को पर्यावरण में एक सक्रिय घटक के रूप में विचारता है। यह एक दावा है जो यह विश्वास करता है कि प्राकृतिक पर्यावरणीय विकल्पों को प्रदान करता है जिनकी संख्याएं, ज्ञान तथा सांस्कृतिक, विकास समूह के तकनीक की वृद्धि करती हैं। फ्रांसीसी भूगोलवेत्ताओं के नेतृत्व में इतिहासकार लुसियन फेबवर, संभावनावादियों ने वैकल्पिक उपयोग की सीमा के प्रत्यक्षण के लिए कुछ लोगों के मॉडल को प्रस्तुत किया जिसे पर्यावरण में रखकर यह तय किया जा सके कि कौन अपनी सांस्कृतिक प्रवृतियों को उनसे जोड़ पाता है। इस दृष्टिकोण को लुसियन फेबवर के द्वारा 'संभावनावाद' का नाम दिया गया। वह लिखते हैं ''सत्य तथा सिर्फ भौगोलिक समस्या संभावनाओं का उपयोग है।'' अनिवार्यता कहीं नहीं है परंतु संभाव्यता सर्वत्र है। मानव के विकास के कारणों से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण हैं प्राकृतिक आंकड़े (कारक)। अपने स्रोतों तथा अवरोधों के कारण प्रकृति न्यून अनिवार्य कारण है अपेक्षाकृत स्वयं मानव तथा उसके स्वभाव के।

संभावनावादी फेबवर के अनुसार ''मनुष्य एक भौगोलिक घटक है और न्यूनतम नहीं हैं।'' इसने धरती के निरूपण में सदैव अपना सहयोग प्रदान किया है, उन बदलते विचारों के साथ जो भूगोल के अध्ययन के लिए आवश्यक है।

टिप्पणी

भौतिक नियतत्ववाद की प्रखर आलोचना करते हुए संभावनावाद के समर्थन में वह कहते हैं ''प्रकृति एक सीमा को तय करती है तथा मानव के परिनिर्धारण के लिए संभावनाओं को प्रस्तुत करती है।'' परंतु मानव की प्रतिक्रिया तथा इन परिस्थितियों के साथ समायोजन उसकी अपनी पारंपरिक जीवन शैली पर निर्भर करती है।

परंतु, संभावनावादी भौतिक नियतत्ववाद द्वारा अधिरोपित सीमाओं को जानते हैं। इस संदर्भ में फेबवर इकोज का कथन है ''मनुष्य कभी इस बात से छुटकारा नहीं पा सकता, पर्यावरण के नियंत्रण के लिए वह जो कुछ भी करता है उसका दायित्व उन पर है।''

ठीक इसी प्रकार, ब्रनहेस टिप्पणी देते हैं: ''शक्ति तथा साधन जो मानव के नियंत्रण में हैं, वह सीमित हैं और तब उसे प्रकृति की सीमाओं का ज्ञान होता है जिसे वह कभी पार नहीं कर सकता।'' मानव की क्रिया, एक निश्चित सीमा में ही हो सकती है, भूमिका तथा वातावरण बदलती रहती है, परंतु यह इसे अपने पर्यावरण से दूर नही कर सकती, वह सिर्फ इसमें रूपांतरण कर सकती है परंतु कभी भी इसे पार नही कर सकती और यह हमेशा इस शर्त से बंधी रहेंगी।

बर्नहेस फर्दर लिखते हैं, ''प्रकृति आज्ञापालक नहीं स्वतंत्र है।''

ठीक इसी प्रकार लैबलेक कहते हैं, ''भौगोलिक नियतत्ववाद का कोई प्रश्न ही नहीं है, इसके बावजूद, भूगोल को तिरस्कृत नहीं किया जा सकता।

संभावनावाद, फ्रांस के 'स्कूल ऑफ जियोग्राफी' से भी जुड़ा रहा है जिसकी स्थापना विदल दी लेबलेक (1845-1918) के द्वारा की गई। फ्रांस के भूगोलवेत्ताओं ने भौतिक पर्यावरण में मानव विकास के लिए संभावनाओं की एक शृंखला देखी, परंतु उन्होंने यह तर्क दिया कि वह वास्तविक तरीका जिससे मानव का विकास होता है वह मनुष्य जिस संस्कृति से जुड़ा है उससे संबंधित है, कुछ अति परिस्थितियों को छोड़कर जैसे रेगिस्तान अथवा तन्द्रा की स्थिति।

इतिहासकार लुसियन फेबवर (1878-1956) पर्यावरण की निष्क्रियता के विरूद्ध मानव के पहल तथा दृढ़तापूर्वक जताते हुए पर्यावरणीय नियतत्ववाद के तर्कों को धवस्त कर दिया, तथा पर्यावरण के किसी भी समूह के अंश के रूप में मानव को श्रेष्ठ बताया, क्योंकि वह अगले समूह की संस्कृति अथवा परिवेश की रचना में सहयोगी है।

इन सभी में, इस प्रकार की विचारधारा एच जे. फ्लीयर (1877-1969) से भी प्रभावित होती है जिन्होंने विश्व के क्षेत्रों को परंपरागत प्रकृति अथवा जैविक क्षेत्रों की अपेक्षा मानव चरित्र के आधार पर निरूपित किया। इसलिए उसने अपनी एक पद्धति को प्रस्तुत किया जिसे उन्होंने 'प्रयासों का क्षेत्र', 'क्षुधा की क्षेत्र', तथा 'औद्योगिक क्षेत्र' का

[redacted]

के प्रतिपादक शिकागो विश्वविद्यालय के एच.एच. बारोस थे।

टिप्पणी

नव-नियतत्ववाद

नव-नियतत्ववाद की धारणा के प्रतिपादक ग्रिफिथ टायलर थे। वह आस्ट्रेलिया के प्रमुख भूगोलवेत्ता थे। उन्होंने तर्क दिया कि संभावनावादियों ने अपने विचार को समशीतोष्ण पर्यावरणों के आधार पर विकसित किया जैसे उत्तर-पश्चिम यूरोप जो, मानव अधिकार के विभिन्न व्यवहार्य विकल्पों को प्रस्तुत करता है। परंतु, पूरे विश्व में ऐसे पर्यावरण कम ही हैं-जैसा कि आस्ट्रेलिया में पर्यावरण अत्यधिक कठोर है तथा यह मानव व्यवहार पर मजबूत पकड़ रखता है। अपने विचारों की व्याख्या के लिए उन्होंने शब्द गढ़ा -'स्टाप-एंड-गो डिटरमिनिज्म'। अल्पावधि में, मनुष्य अपने पर्यावरण से जो भी अपेक्षाएं रखता है उसकी पूर्ति के लिए वह चाहे तो प्रयास कर सकता है। परंतु लंबे समय में, प्रकृति की योजना सुनिश्चित करेगी कि पर्यावरण ने लड़ाई जीत ली तथा इस पर मानवीय दखल को समझौते के लिए मजबूर करेगी। सन् 1920 में उन्होंने यह तर्क दिया था कि आस्ट्रेलिया में कृषि प्रबंधों की सीमा भौतिक पर्यावरण के आधार पर तय की जाती थी। जैसे वर्षा का विस्तार। प्रारंभ में टायलर के विचार आस्ट्रेलिया में अत्यंत अलोकप्रिय हुए परंतु इसके बाद धीरे धीरे इसे स्वीकार किया जाने लगा। 1948 में आस्ट्रेलिया पर आधारित उनकी पुस्तक के प्रकाशन के बाद उन्हें उनकी पूर्व स्थिति वापस मिल गई। किसी राष्ट्र के निए सबसे अच्छा आर्थिक कार्यक्रम व्यापक रूप से प्रकृति (पर्यावरण) द्वारा निर्धारित होता है, और इसकी व्याख्या करना भूगोलवेत्ताओं का दायित्व है। मानव देश (क्षेत्र) के विकास की गति को तीव्र करने में, धीमा करने में अथवा रोक देने में समर्थ हैं। परंतु, यदि वह बुद्धिमान है तो प्रकृति द्वारा निर्देशित दिशा को बदलने का प्रयत्न उसे नहीं करना चाहिए। वह (मानव) एक विशाल शहर के यातायात नियंत्रक की भांति है जो सिर्फ परिणाम के लिए सतर्क है परंतु प्रगति की दिशा नहीं बदल सकता।

नव-नियतत्ववाद 'स्टाप-एंड-गो डिटरमिनिज्म' के नाम से भी जाना जाता है तथा ग्रिफथ टायलर का दर्शन यातायात नियंत्रक की भूमिका से काफी हद तक विश्लेषित किया जा सकता है।

अपनी प्रगति जांचिए

6. भूगोल के दर्शन की अन्य प्रमुख चयनित अवधारणा कौन सी है?
   (क) मौलिकतावाद (ख) मानवतावाद
   (ग) नियतिवाद (घ) उपर्युक्त सभी।

1.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (घ)
2. (घ)
3. (घ)
4. (ग)
5. (घ)
6. (घ)

1.7 सारांश

टिप्पणी

मानव की सबसे आरंभिक खोजों में से एक इस बात का पता लगाना था कि भूपटल में क्या छिपा है। इस खोज के उत्तर का परिणाम संभवत: सबसे प्रारंभिक विज्ञान भूगोल के विकास के रूप में प्राप्त हुआ। प्राचीन काल में यूनानियों, रोमन, फीजियन और भारतीयों के उल्लेखनीय कार्य ने इस नए विज्ञान को एक विषय के रूप में विकसित होने में सहायता की। प्राचीन भूगोलवेत्ताओं के कार्यों के प्रेक्षण से यह पता चलता है कि वे भूगोल के भौतिक पहलुओं में अग्रणी थे। उन्होंने न केवल आसपास के परिदृश्य की कई विशेषताओं को प्रलेखित किया अपितु भूगोल के क्षेत्र में विविधता लाने के लिए भी कार्य किया। भूगोल के क्षेत्र को स्पष्ट करने के लिए कई भूगोलवेत्ताओं ने भूगोल को अपने तरीके से परिभाषित किया।

भौतिक भूगोल का अध्ययन प्रमुख रूप से जल स्रोतों और खतरों का अनुमान लगाने का अनुप्रयोग भी शामिल करता है। मानव और प्रकृति के संबंध को पृथक नहीं किया जा सकता। विदाल-डे-लाब्लेश जैसे कई भूगोलवेत्ताओं ने, मनुष्य का प्रकृति के ऐसे सक्रिय अभिकर्ता के रूप में समर्थन किया जो मनुष्य समाज के लाभ और कल्याण के लिए प्रकृति में बदलाव ला सकता है। इस अवधारणा ने मानव भूगोल को भूगोल की विशेषीकृत शाखा के रूप में विकसित किया। इस प्रकार विडाल डी ला ब्लाश को मानव भूगोल के जन्मदाता होने का श्रेय दिया जाता है।

समाजशास्त्रीय कल्पना हमें इतिहास और जीवनी तथा समाज में दोनों के बीच संबंधों को समझने में सक्षम बनाती है। इससे वापस लौटकर हमेशा समाज में व्यक्ति के सामाजिक और ऐतिहासिक अर्थ और उस अवधि को जिसमें उनकी गुणवत्ता और उनका अस्तित्व था पता लगाने का आग्रह होता है।

अंतराफलक एक विशाल लेकिन व्यापक रूप से फैला हुआ साहित्य है। लेकिन अपने संदेश गढ़ने के लिए इन सब को एक साथ खींचना मुश्किल है। शायद एक के लिए शहर के बारे में हमारी समझ के लिए एक नया वैचारिक ढांचा बनाने की तलाश में हमारा पहला कार्य इस विशाल फैले साहित्य के लिए सर्वेक्षण और विश्लेषण होगा। इस तरह के संश्लेषण से शायद पता चलता है कि प्रमुख वैचारिक समायोजन के बिना इस क्षेत्र में काम करना कितना मुश्किल है। यह विचार करने के लिए दिलचस्प है, उदाहरण के लिए, इस पर विचार करना दिलचस्प होगा कि शहर योजनाकार और क्षेत्रीय वैज्ञानिक के लिए उनके शहर प्रक्रियाओं को समझने की कोशिश में एक-दूसरे को समायोजित करने में कितना समय लगा होगा।

भूगोल को एक विषय के रूप में वास्तविक रूप से 19वीं शताब्दी में मान्यता मिली। कई भूगोलवेत्ताओं और गैर-भूगोलवेत्ताओं ने भूगोल के क्षेत्र को स्पष्ट रूप से विस्तारित करने के लिए भूगोल को परिभाषित करने का प्रयास किया। भूगोल शब्द को सबसे पहले विभिन्न विद्वानों की रचनाओं में देखा जा सकता है। विभिन्न विद्वानों ने इसे कुछ ही शब्दों में परिभाषित करने का प्रयास किया। भूगोल की अवधारणा में पिछली शताब्दियों में परिवर्तन भी आया है। ऐसे गतिशील विषय की कोई एक परिभाषा देना अत्यंत ही कठिन है।

चूंकि गुणात्मक डेटा संख्यात्मक नहीं होता है इसलिए कई लोग इसे वैज्ञानिक नहीं मानेंगे। क्योंकि भूगोल की प्रकृति बदली है इसलिए यह पृथ्वी की सतह के विविध स्वरूपों के तार्किक वर्णनों और व्याख्याओं की मांग करता है। जैसा कि इसे यीट्स के शब्दों में वर्णित किया जा सकता है, 'भूगोल को ऐसे विज्ञान के रूप में संदर्भित किया जा सकता है जो ऐसे सिद्धांतों के तार्किक विकास और परीक्षण से संबंधित है जो धरती की सतह पर विविध विशेषताओं के स्थानिक वितरण और स्थान की व्याख्या करता है और पूर्वानुमान लगाता है।'

आज सामाजिक रूप से अधिकांश पारंपरिक विषय जैसे भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र और भूगोल एक विज्ञान के रूप में उभरे हैं। अभी तक के तथ्य भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र को विज्ञान के रूप में और मानव भूगोल को विज्ञान के न होने के रूप में दर्शाते हैं।

अतः यह निर्णय करना कि भूगोल विज्ञान है या नहीं, इस पर निर्भर करता है कि विज्ञान और भूगोल को कैसे परिभाषित किया गया है। यह महत्वपूर्ण नहीं कि क्या प्रश्न पूछा गया है, जहां डेटा संग्रहण और विश्लेषण है वहां स्वाभाविक रूप से भूगोल के क्षेत्र को वैज्ञानिक माना जा सकता है।

दर्शन सोचने का एक संक्षिप्त तरीका है जो काल्पनिक विश्वासों और प्रयोजन के विचार को समझ की एक सुसंगठित प्रणाली में व्यवस्थित करने के लिए तर्क का प्रयोग करता है। यह विचारों को अनुभव में संश्लेषित करके ये दावा भी करता है कि विचार मात्र कल्पना की किरणें ही नहीं हैं। अस्तित्व को समझने के क्रम में, इन विचारों का सुसंगत तरीके से एक संगठन है।

निश्चयात्मकता को अनुभववाद भी कहा जाता है। यह एक दार्शनिक दृष्टिकोण है जो ज्ञान को उन तथ्यों जिनका प्रेषण किया जा सकता है और इन तथ्यों के बीच संबंधों तक सीमित करता है। निश्चयात्मकता के समर्थक इस बात का समर्थन करते हैं कि केवल विज्ञान ही अनुभववादी प्रश्नों से संबंधित हो सकता है। अनुभववादी प्रश्न वे प्रश्न हैं जो यह बताते हैं कि वस्तुएं वास्तव में कैसी हैं। इस परिप्रेक्ष्य में, वास्तविकता को ऐसी दुनिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसका अनुभव किया जा सकता है। अनुभववादी परीक्षण में, यह मान लिया जाता है कि तथ्य 'स्वयं बोलते हैं'।

व्यावहारिकता निश्चयवाद का संशोधित रूप है। निश्चयवाद के समान ही, व्यावहारिकता वैज्ञानिक पद्धति के उपयोग का समर्थन करती है। केवल एक अंतर यह है कि यह आंदोलन मानवीय समस्याओं का समाधान ढूंढ़ने का प्रयास करता है। व्यावहारिकता के समर्थक समाज की समस्याओं का समाधान करने और भौगोलिक सत्यता पर बल देने के लिए मूल्य-आधारित वैज्ञानिक पद्धति (मनुष्य की प्रकृति विश्वास और मानकों को शामिल करते हुए) का उपयोग करते हैं। अन्य शब्दों में, यह कार्रवाई-उन्मुख, उपयोगकर्ता-उन्मुख है और मूल्यांकन और कार्यान्वयन को शामिल करने के लिए प्रायोगिक विधि को विस्तारित करता है। किसी आकस्मिक समस्या का समाधान करने के उद्देश्य से अनुसंधान किया जाता है और जिसका परिणाम किसी लक्षित जनसंख्या के लिए ध्येय की पूर्ति का मार्ग है।

कार्य की परिभाषाओं में विभिन्नता किसी विषय के भीतर और कई सामाजिक विज्ञानों में कार्यात्मकता के अर्थ में विभिन्नता के रूप में आई है। यह हालांकि, एक

टिप्पणी

दृष्टिकोण है जो लक्ष्यों पर बल देने के अलावा भूमिका और कर्ता की आवश्यकताओं और कड़ियों के साथ कार्यात्मक संबंधों की जांच करता है। सरल शब्दों में, कार्यात्मकता कार्यों (व्यवसायों) और समाज में कार्यों के विश्लेषण से संबंधित है। यह ऐसा परिप्रेक्ष्य है जो विश्व को एक विभिन्नीकृत और परस्पर निर्भर प्रणालियों के रूप में देखता है, जिसकी समग्र कार्रवाइयां उन दोहराए जाने योग्य और पूर्वकथनीय नियमितताओं के उदाहरण हैं जिनमें आकार और कार्य को संबंधित माना जा सकता है, और जो इन आकार-कार्य संबंधों की प्रणालियों के अनुरक्षण और निरंतरता में उनकी भूमिका के संदर्भ में व्याख्या करता है।

अस्तित्ववादिता एक दार्शनिक विचार है कि मनुष्य अपनी प्रकृति के निर्माण के लिए स्वयं जिम्मेदार है। यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता, व्यक्तिगत निर्णय और व्यक्तिगत प्रतिबद्धता पर बल देता है। यह एक चुनौती है और साथ ही पूर्ण लक्षित बहिष्कार, परिमाणात्मक और निर्धारणात्मक विश्लेषण के रूप में उभर रहा है। यह मानव मूल्यों, गुणवत्ता, वस्तुपरकता और आत्मिकता के लिए चिंता जताता है। अस्तित्ववादी भूगोल में, एक केंद्रीय अवधारणा अस्तित्ववादी स्थान है। सैम्युअल के अनुसार, यह 'स्थान का निर्दिष्टीकरण' है। ऐसा निर्दिष्टीकरण मानवीय सत्यता का परिणाम है। अस्तित्ववादिता को एक ओर, ठोस त्वरित अनुभव को ज्ञान के क्षेत्र में यथावत पुनर्स्थापित करने के प्रयास के रूप में माना जाता है, और दूसरी ओर यह उस तार्किक खाई को पाटने का प्रयास है जो उद्देश्यपरक से वस्तुपरक को, आदर्शवादिता को भौतिकवादिता से और अस्तित्व से सार को अलग करता है। यह 'सार से पहले अस्तित्व की आन' पर निर्भर है। इस वाक्यांश का अर्थ है कि 'सभी अस्तित्वों से पहले, मनुष्य खुद से सामना करता है, विश्व में आगे बढ़ता है, और इसके बाद खुद को परिभाषित करता है।' इसका यह अर्थ भी है कि मनुष्य को समझने के लिए हमें सबसे पहले 'वस्तुपरक जीवन के साथ शुरुआत' करनी चाहिए और 'मनुष्य और कुछ नहीं अपितु वही है जो वह स्वयं को बनाता है।' अस्तित्ववादिता का पहला सिद्धांत 'एक बार दुनिया में भेज दिए जाने के बाद मनुष्य जो कुछ भी करता है उसके लिए जिम्मेदार होता है।'

भूगोल में आदर्शवादिता के सबसे प्रख्यात समर्थनकर्ता 'ग्यूक' ने तर्क दिया कि हमने अपने विषयों के मानस में प्रवेश करने की पद्धतियां विकसित की हैं ताकि उनके विचारों के बारे में सोचा जा सके और उनकी अपेक्षाओं का औचित्य सिद्ध किया जा सके। ये पद्धतियां मानव के इरादों और बदलती दुनिया में हमारी भूमिका को निर्धारित करेंगी। यह विचार कि मानव व्यवहार बड़े पैमाने पर मानसिक गतिविधि द्वारा नियंत्रित है, वह आधार है जिस पर आदर्शवादी जोर देते हैं कि सामाजिक विज्ञान और इतिहास तार्किक रूप से प्राकृतिक विज्ञानों से अलग है। सामाजिक विज्ञान के तार्किक प्रत्यक्षवादी विचार का अपना दृष्टिकोण और पद्धतियां हैं। यद्यपि सामान्य (प्राकृतिक) वैज्ञानिक रूप में मानवीय व्यवहार को एक भौतिक प्रक्रिया नहीं माना जा सकता, मानवीय विचारों का तार्किक स्वभाव किसी व्यक्ति के लिए सुविचारित गतिविधि को इस तरह से समझना संभव बनाता है कि भौतिक प्रक्रियाओं को समाविष्ट करना संभव नहीं है। ऐसा इस तथ्य के कारण है कि बड़ी संख्या में आदर्शवादी दार्शनिकों ने सामाजिक विज्ञानों और इतिहास के लिए विशिष्ट तरीकों को इस पूर्वधारणा पर विकसित किया कि मानव गतिविधि को विचार के संदर्भ में समझा जाना चाहिए।

यथार्थवाद वह विचार है जो मानता है कि वास्तविकता मस्तिष्क में स्वतंत्र रूप से स्थित रहती है, यह मस्तिष्क-आधारित नहीं है। यह कई तरह से आदर्शवाद के विपरीत है। गिब्सन आदर्शवाद को यथार्थवाद का व्यवहार्य विकल्प सुझावित करते हैं। यथार्थवाद का आधारभूत दर्शन यह है कि तथ्य स्वयं बोलते हैं और स्पष्टीकरण तार्किक और प्रेरक होते हैं। यथार्थवाद भौगोलिक व्याख्या में सिद्धांतों और प्रतिमानों का समर्थन करता है। यह वस्तुनिष्ठ दर्शन और निश्चयात्मकता के बहुत निकट है लेकिन व्याख्या की इसकी भिन्न कार्य प्रणाली है।

1.8 मुख्य शब्दावली

- **भौगोलिक** : भूगोल से संबंधित
- **पारिस्थितिकी** : परिस्थिति विज्ञान
- **पुनर्सूत्रीकरण** : पुनः संयोजन
- **प्लेट विवर्तनिकी** : प्लेटों की बनावट
- **भूगोलवेत्ता** : भूगोल-शास्त्रज्ञ

1.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु-उत्तरीय प्रश्न

1. भौतिक भूगोल से क्या तात्पर्य है।
2. भू-आकृति विज्ञान तथा जलवायु विज्ञान में क्या अंतर है?
3. भूगोल के सामाजिक विज्ञान के विभिन्न रूप कौन-कौन से हैं?
4. भूगोल के प्राकृतिक विज्ञान के रूप का संक्षेप में परिचय दीजिए।
5. भूगोल के दर्शन में विभिन्न चयनित अवधारणाएं कौन-कौन सी हैं?

दीर्घ-उत्तरीय प्रश्न

1. भूगोल के क्षेत्र के अंतर्गत भौतिक भूगोल एवं मानव भूगोल की विवेचना कीजिए।
2. भूगोल के सामाजिक विज्ञान और प्राकृतिक विज्ञान के रूपों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. भूगोल के दर्शन में विभिन्न चयनित अवधारणाओं के बारे में बताइए।

1.10 सहायक पाठ्य सामग्री

एस. डी. कौशिक, डी. एस. रावत (2014-15) भौगोलिक विचारधाराएं एवं विधितन्त्र, मेरठ

डॉ. हुसैन, भौगोलिक चिंतन का इतिहास, रावत पब्लिकेशन, जयपुर

डॉ. आर. एस. माथुर, डॉ. जैनेन्द्र गुप्ता, भौगोलिक विचारधाराएं, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर

चन्द्रशेखर यादव (2012), भौगोलिक विचारों का इतिहास, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, दिल्ली

Chorley, R. J and Hagget, P- (1965), Models in Geography, London.

Dickinson, R. E. (1969), The maker of Modern Geography, London.

Dikshit, R. D. (1999), Geographical Thought : A Contextual History of Ideas, New Delhi

Foucault, M. 1980, Power / Knowledge, Brighton

Gold, J.R. (1980), An Introduction to Behavioural Geography, Oxford

Golledge, R. J., et - al - (1972), Behavioural Approaches in Geography : An overview, The Australian Geographer,12, pp 159&79

Gould, P. R. (1966), On Mental maps in Downs, R. M

Gregory, D., (1978), Dealogy Science and Human Geography, London, pp - 135&136

Gregory, D. (1981), Human Agency and Human Geography, Transaction, Institute of British Geographers

Gregory, D. (1989), The crisis of modernity/ Human geography and critical social theory, in Peet, R and Thrift, N. J. (eds) New Models in Geography, vol - 2, London. Haggett, P- Cliff, A. D. and Allan, F. (1977), Locational Models

Soja, E. (1989), Modern geography, Western Marxism and reconstructing of critical social theory, in Peet, R and Thift, N. (eds) New Model in Geography, vol -2, London

Taylor, G. (1919), Geography in Twentieth Century, London

इकाई 2 द्वैतवाद तथा क्षेत्र और क्षेत्रीयकरण की अवधारणा

टिप्पणी

संरचना

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 द्वैतवाद : मिथक और वास्तविकता
2.3 क्षेत्रीय भूगोल
2.4 क्षेत्र की अवधारणा
2.5 क्षेत्रीयकरण की अवधारणा
2.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.7 सारांश
2.8 मुख्य शब्दावली
2.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.10 सहायक पाठ्य सामग्री

2.0 परिचय

भूगोल में द्वैतवाद के तीन सिद्धान्त जो भूगोल के विषय में व्यापक तर्क-वितर्क से शुरू हुए, वे हैं-

1. क्या भूगोल, एक विषय के रूप में कानून/सिद्धान्त (नोमोथेटिक) या वर्णनात्मक (आइडियोग्रैफिक) का रचयिता हो सकता है?
2. क्या अध्ययन का प्रस्ताव क्षेत्रीय या व्यवस्थित होना चाहिए?
3. क्या भौगोलिक घटनाओं की व्याख्या, सैद्धान्तिक या ऐतिहासिक-संस्थागत पद्धति के माध्यम से की जा सकती है?

जैसे भी हो, मानवीय और आर्थिक भूगोल, भूगोल में द्वैतवाद को सूचित नहीं करते। भूगोल को 'द्वैतवाद' द्वारा पुनर्जागरण काल में चित्रित किया गया। इसलिए सामान्य भूगोल या व्यवस्थित भूगोल और क्षेत्रीय भूगोल के बीच का विभाजन एक द्वैतवाद का प्रतिनिधित्व करता है जो विकास के आरंभिक दौर में आधुनिक विज्ञान के रूप में भूगोल की विशेषता है। जैसा कि प्रायः होता है, भूगोल में इस प्रकार के द्वैतवाद को विषय वस्तु के संदर्भ में द्वैतवाद से भ्रमित नहीं होना चाहिए। पेनेक की टिप्पणी है, "एक द्वैतवाद को केवल व्यक्ति द्वारा महसूस किया जाता है जो विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों के बीच संपर्क की सीमा को देखता है न कि क्षेत्र को, जो सभी विज्ञान के अंतर-संबंध, उनका एक वृहत विज्ञान, इकाई में साझेदारी से ज्यादा सामाजिक और प्राकृतिक विज्ञान के बीच के भेद पर जोर देता है। उस इकाई विज्ञान का विभाजन मानचित्र पर जमीन जैसा एक दूसरे के बगल में नहीं होता है। वे एक दूसरे के साथ कई संबंधों में होते हैं।''

भूगोल की एकल विज्ञान के संयुक्त क्षेत्र के रूप में अपनी विवेचनात्मक जांच में क्राफ्ट पाते हैं कि प्राकृतिक और मानवीय विशिष्टताओं की विषय-वस्तु के द्वैतवाद के

आरोप को अमान्य करार कर खारिज किया जा सकता है, लेकिन व्यवस्थित और क्षेत्रीय दृष्टिकोण को शामिल करना द्वैतवाद का निर्विवादित प्रकार है। वह हेमर से सहमत हैं कि, जैसे भी हो, इस द्वैतवाद को केवल एक नोमोथेटिक और एक आइडियोग्राफिक विज्ञान के सम्मिलन के रूप में नहीं व्यक्त किया जा सकता है। व्यवस्थित भूगोल की विशिष्ट स्थितियों को जरूर शामिल करना चाहिए और क्षेत्रीय भूगोल को जातिगत अवधारणा एवं सिद्धान्त का प्रयोग करना चाहिए। किसी भी परिस्थिति में, नियमों का निर्माण और विशिष्ट का विवरण भूगोल या अन्य किसी विज्ञान के उद्देश्य का प्रतिनिधित्व नहीं करता है। दोनों शाखाओं में भूगोल का उद्देश्य समान है, पृथ्वी के क्षेत्रीय अंतर की समझ और इसके उद्देश्य का समाधान केवल व्यवस्थित अध्ययन से नहीं निकाला जा सकता है और न केवल क्षेत्रीय अध्ययन से, बल्कि यहां दोनों की जरूरत है। परिणामत: वह निष्कर्ष निकालते हैं कि द्वैतवाद अपने तरीके में एकमात्र उद्देश्य के लिए एक जरूरत के रूप मे तर्कसंगत है जो भूगोल को एकबद्ध विज्ञान बनाता है।

इस इकाई में हम द्वैतवाद का मिथक और वास्तविकता, क्षेत्रीय भूगोल, क्षेत्र की अवधारणा और क्षेत्रीयकरण की अवधारणा का अध्ययन करेंगे।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- द्वैतवाद का मिथक और वास्तविकता का अर्थ समझ पाएंगे;
- क्षेत्रीय भूगोल के विभिन्न पक्षों का अध्ययन कर पाएंगे;
- क्षेत्र की अवधारणा एवं क्षेत्रीयकरण की अवधारणा में अंतर समझ पाएंगे।

2.2 द्वैतवाद : मिथक और वास्तविकता

द्वैतवाद का मिथक और वास्तविकता का अध्ययन निम्नानुसार किया जा सकता है-

विकास प्रक्रिया की प्रकृति, औद्योगिकीकरण की वृद्धि या विकास के इंजन के रूप में संप्रायोजित करने की होती है। उद्योग में प्राप्ति की बढ़त को चोटी पर चढ़ाने के लिए यह दोनों के लिए अपेक्षित है। श्रेणी का स्थैतिक अर्थशास्त्र उपयोगी वस्तुओं के समूह उत्पादन को कम औसत लागत पर करता है और श्रेणी का गतिशील अर्थशास्त्र लागत को कम करता है या इकाई प्राप्ति को बढ़ाता है जो समय के साथ बार-बार और लगातार उत्पादन से उत्पन्न होता है। प्रारंभिक कृषि आधारित औद्योगिक देश में अर्थ-व्यवस्था का रूपान्तरण, आरंभ में व्यक्तिगत आमदनी के वितरण के बढ़ते हुए भेद-भाव से आता है, क्योंकि कुछ लोग धन संचित करने में दूसरों से ज्यादा उद्यमी होते हैं, अवसर और दक्षता सभी के लिए बराबर नहीं होती। अडेलमान और मोरिस का कार्य दिखाता है कि विकासशील देशों के लिए असमानता विकास के कुछ चरणों तक बढ़ती है और फिर घटना शुरू होती है, ग्राफ में एक उल्टा यू-आकार दिखता है जो कुजनेट के विकसित देशों के काम के समान है।

विकास के लिए गहन औद्योगिकीकरण की योजना असमानता और वंचन को इन अवस्थाओं के साथ बढा सकती है-(1) भूगोल, तकनीक और समाज में अपरिहार्य

टिप्पणी

द्वैतवाद, (2) निवेश के संसाधनों के बंटवारे में शहरी पक्षपात। शहरी पक्षपात के कई कारण रहे हैं, औपनिवेशिक विरासत सहित शहरी पक्षपात के घरेलू कारण, कृषि में बाजार की गहरी विफलता, ग्रामीण गरीबों की अपेक्षाकृत कमजोर राजनीतिक आवाज। शहरी पक्षपात के अंतरराष्ट्रीय कारणों में शामिल हैं विकसित देशों की अपेक्षाकृत मजबूत राजनीतिक आवाज, वाशिंगटन कन्सेन्सस कृषि विकास से ध्यान को कम करता है, (3) शिक्षा सुविधाओं के वितरण में असमानता, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में सुविधाओं का अभाव जहां सबसे गरीब संघनित है, (4) ग्रामीण-शहर प्रवासन द्वारा शहरी क्षेत्रों में ग्रामीण बेरोजगारी, ग्रामीण अल्प बेरोजगारी, खुली बेरोजगारी, (5) निवेश संसाधनों की कमी और अनुचित तकनीकी विकल्प। इस प्रक्रिया में, अमीरों द्वारा आमदनी के ज्यादा हिस्सेदारी के कारण विकासशील देशों में असमानता का अंश बड़ा दिखता है और आबादी का एक बड़ा हिस्सा पीछे रह जाता है। ग्रामीण और शहरी गरीबी अभी भी फैली हुई हैं।

यदि वृद्धि और विकास बढ़ाना है तो औद्योगिक गतिविधियों के पक्ष में संरचनात्मक बदलाव यह कैसे लाता है इस पर सार्वजनिक नीतियां नकारात्मक प्रभावों को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सार्वजनिक नीतियों के लिए यह जरूरी है कि वो आधारभूत सामाजिक सेवाओं, बुनियादी सुविधाओं में निवेश के आवंटन की चिन्ता करें और मानवीय पूंजी (शिक्षा) में निवेश में दिलचस्पी लें क्योंकि शिक्षा श्रम की गुणवत्ता बढ़ाती है और इसका काफी बड़ा सकारात्मक प्रभाव है। नीतियों में चयनित परियोजनाओं को शामिल करना चाहिए जिसमें ज्यादा जोर उन परियोजनाओं पर देना चाहिए जो सबसे गरीब तबके में आमदनी के वितरण को बढ़ा सके।

पूंजी की लागत कम करने और सामरिक महत्व के क्षेत्रों में सीधे निवेश, निर्यात की वृद्धि के लिए नीतियां और घरेलू उद्योग के संरक्षण में सरकार भी वित्तीय बाजार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। नीतियां आवश्यक रूप से ग्रामीण विकास पर केंद्रित होनी चाहिए जो औद्योगिकीकरण विकास की भूमिका में उपेक्षित रहीं। शहरी पक्षपात के सक्रिय विरोध की नीति को जरूर लाना चाहिए। कृषि प्रायः श्रम-साध्य है और दक्षता विस्तीर्ण है, इसलिए कृषि का विकास कुछ रुकावट के साथ अतिरिक्त रोजगार का सृजन करता है। जब कृषि उत्पादन बढ़ता है तो खाद्य वस्तुओं की कीमत ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में घटेगी। गरीबी घटाने के लिए कृषि का विकास आवश्यक है। स्पष्ट रूप से कृषि में लक्ष्यबद्ध निवेश की जरूरत है जो अब जरूरत से काफी कम रहा है।

भौगोलिक द्वैतवाद, प्रति व्यक्ति आय के बीच का अंतर है और यह एक क्षेत्र में केंद्रित है, तकनीकी द्वैतवाद जीविका और अन्य क्षेत्रों के बीच तकनीकी माध्यमों का अंतर है, सामाजिक द्वैतवाद, जीविका और अन्य क्षेत्रों में विभिन्न सामाजिक रिवाज है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. विकास के लिए गहन औद्योगिकीकरण की योजना असमानता और वंचन के साथ निम्न में से किस अवस्था को बढ़ा सकती है?

   (क) भूगोल, तकनीक और समाज में अपरिहार्य द्वैतवाद

   (ख) निवेश के संसाधनों के बटंवारे में शहरी पक्षपात

   (ग) शिक्षा सुविधाओं के वितरण में असमानता

   (घ) उपर्युक्त सभी।

टिप्पणी

2.3 क्षेत्रीय भूगोल

विगत 30 वर्षों के दौरान भूगोल में विकास भू-भागीय भूगोल में बढ़ती हुई रुचि की वजह से आया हैं। फ्रांस में वाइडल और जर्मनी में हेटनर, पेंक, ग्राडमन, पासर्ज और अन्य अनेक के नेतृत्व के अंतर्गत यूरोपीय भू-विज्ञानियों ने धीरे-धीरे व्यवस्थित भूगोल से अपना ध्यान हटा दिया जिसका प्राकृतिक परिणाम सभी विज्ञानों की विश्वन्यापकता पर जोर देना था। इसी तरह से, इस देश में, बैरोज और सायूर के कार्यक्रमिक पेपरों, यद्यपि जो अन्य मामलों में अलग-अलग थे, ने भूगोल के प्रमुख अध्ययन के तौर पर भू-भागीय अध्ययनों पर जोर डालने में सहमति जतलाई (208; 211), यद्यपि फेफर ने आधुनिक अमेरिकी भूगोल में दो सर्वाधिक प्रभावी व्यवस्थित विवरणों में समानता पाई, परंतु वह भी इस संघ के अध्यक्षों की पूर्व व्यवस्थित उद्घोषणा जो साधारण तौर पर अमेरिका में अपने भौगोलिक राय को व्यक्त करते हैं, की प्रमुख कोटि को ध्यान में रखने में असफल रहा और उसने अमेरिकी भूगोल के आधुनिक विचार का लक्ष्य निर्धारण करने में उनके महत्व को ज्यादा आंका। जैसा कि प्लाट ने बताया कि आधुनिक आंदोलन की जड़ें, विशेष तौर से छोटे क्षेत्रों के विस्तृत अध्ययन की प्रकृत्ति, प्रथम विश्व युद्ध के दौरान के सैन्य मानचित्रणों के भौगोलिक क्षेत्रों पर वापस लौट जाती हैं। अनुमानतः यह ज्ञात करना न तो संभव है और न ही आवश्यक है कि इस विकास के लिए कौन लोग और कौन ताकतें जिम्मेदार थीं। यहां पर निश्चित तौर से अमेरिकी भौगोलिक सोसायटी के निदेशक बोमैन के प्रभाव का उल्लेख करना जरूरी होगा जिन्होंने भू-भागीय अध्ययनों पर जोर डाला। संभवतः इन सबमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण मध्य पश्चिम के भू-विज्ञानियों द्वारा डाले गए व्यक्तिगत प्रभाव थे जिनके वर्ष 1923 और उसके बाद के वार्षिक क्षेत्रीय सम्मेलनों ने कार्यकर्ताओं की अधिक संख्या का ध्यान भू-भागीय मानचित्रण की समस्या पर केन्द्रित किया।

यदि निश्चित भाव से यह कहा जाए कि अमेरिका के साथ-साथ यूरोप में भी भूगोल पुनः उस विचार पर वापस लौट आया है जो हम्बोल्ट और रिटर के लिए सामान्य था। इसके व्यवस्थित अध्ययनों पर दीर्घावधि तक ध्यानाकर्षण से प्रजातीय संकल्पनाओं व नियमों ने भू-भागीय भूगोल की प्राप्तियों की व्याख्या करने के लिए भौगोलिक साहित्य एवं अधिकाधिक विद्यार्थियों को प्रशिक्षण देने में इसे और अच्छी तरह से सुसज्जित होकर वापस लौटने के योग्य बनाया-यद्यपि दुर्भाग्य वसात् यह उपकरण मानवीय या सांस्कृतिक विशेषताओं के संबंध में अपेक्षाकृत कम है।

अनेक भू-वैज्ञानिक जिन्होंने दबाव में आकर इस परिवर्तन को स्वीकार किया है, वह इस अस्थाई संकल्पना के अंतर्गत किया कि भू-भागीय भूगोल को भी व्यवस्थित भूगोल की ही तरह से वैज्ञानिक बनाया जाएगा और उसे सतह पर पहुंचा दिया जाएगा जहां वैज्ञानिक सिद्धांत का निर्माण किया जाता है। हमने इस महत्वाकांक्षा द्वारा ले जाए गए मार्ग पर अनेक कठिनाइयां पाई हैं। हमारे भू-भागीय भूगोल के अंतिम सोच विचार में यह स्पष्ट तौर से समझना जरूरी है कि विद्यार्थियों पर कुछेक सीमाएं लगाई गई हैं जो अन्यथा व्यवस्थित भूगोल में नहीं पाई जाती हैं।

भू-भागीय अध्ययन की विशेष प्रकृति को शब्दों में अभिव्यक्त करने के अनेक असफल प्रयासों के बाद, मुझे ऐसा लगता है कि इसे अधिक स्पष्ट तौर से गणितीय

चिह्नों का प्रयोग करके प्रस्तुत किया जा सकता है। यद्यपि ऐसी जटिल समस्याओं को किसी वास्तविक गणित के सूत्रों या समीकरणों में प्रदर्शित करना असंभव लगता है।

कोई भी विशेष भौगोलिक आकृति z को जो पूरे क्षेत्र में अलग अलग हैं, सैद्धांतिक रूप से एक $f(x, y), x$ और y के रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है जो स्थिति के निर्देशांकों को प्रदर्शित करते हैं। दो चरों के फलक के रूप में किसी भी आकृति, जिसे हम कथ्यपरक रूप से मापने में समर्थ होते है, जैसे ढलान, वर्षा, फसल की पैदावार-को अनियमित सतह द्वारा सही ढंग से प्रदर्शित किया जा सकता है। इस प्रकार की सतह पूरे भू-भाग की आकृति की वास्तविक विशेषता को प्रदर्शित करेगी। सिद्धांत तौर पर यह प्रत्येक बिंदु और प्रत्येक छोटे जिले के लिए सही होगा। इसके अतिरिक्त यदि संबंधित फलक अधिक जटिल नहीं होते तो सामूहिक परिकलन का सिद्धांत हमे उस पूरी आकृति को एक सीमित और किसी पृथक अनुभाग में एकीकृत करने की स्वीकृति दे देता। दूसरे भाव में व्यवस्थित भूगोल में हमारे कार्य का भाग इस प्रस्तुतीकरण के समरूप है।

इसी तरह से, एक भू भाग के भीतर दो या तीन भौगोलिक कारकों के बीच का संबंध-उदाहरणार्थ, उपज का वर्षा एवं भूमि के अवयवों की आर्द्रता से संबंध को एक फलकीय समीकरण में प्रदर्शित किया जा सकता है जिसमें अनेक चर संबंधित होते हैं: $z_3 = k f'(z_1, z_2)$ इस संबंध के ठोस प्रस्तुतीकरण के लिए फिर से एक सतही रूप की आवश्यकता होती है। सामान्य तौर पर, व्यवस्थित भूगोल में, हम केवल एक कारक का दूसरे कारक से संबंध के बारे में विचार करते हैं जिसे हम एक समतल सतह पर एक चाप के रूप में प्रदर्शित कर सकते हैं। इनमें से प्रत्येक कारक, हालांकि एक पृथक फलक, $f(x, y)$ और अत्यधिक जटिल समीकरण, $z_3 = k f'(z_1, z_2)$ हैं, तभी सही साबित होता है जब z_3 अन्य दूसरे z कारकों से अप्रभावित रहे या इसे प्रभावित करने वाले वे कारक सभी विचाराधीन भू-भागों में अचर रहें। इनमें से कोई भी परिस्थिति पूरी तरह से सही नहीं है। चाहे हम किसी भी भौगोलिक अवयव पर विचार करें। ये एक से अधिक प्राकृतिक तत्वों से प्रभावित होने के साथ-साथ या बिल्कुल अनजान मानवीय कारकों से भी प्रभावित होते हैं और सभी विचार किए गए कारक किसी न किसी सीमा तक अलग-अलग होते हैं चाहे वह सोच विचार किया क्षेत्र कितना ही छोटा क्यों न हो। परिणामस्वरूप हमने व्यवस्थित भूगोल में इस सोपान पर भी वास्तविकता के प्रतिरूपण की एक कोटि प्रस्तुत की है।

हम मूल तत्वों को स्थापित करके आगे के चरणों को प्रस्तुत कर सकते हैं। संयुक्त u, बहुत से जड़ तत्वों के कार्यों को प्रस्तुत करता है, जो उन तत्वों की छोटी संख्या के परिवर्तन सहित अधिक या कम नियमित नियमों द्वारा उनमें भिन्नता लाता है। इसलिए, मिट्टी ढलान, तापमान और वर्षों की निश्चित स्थितियों को प्रस्तुत करने पर हम उनके मध्य अशुद्धि और अनिश्चितता दोनों के विस्तृत अंतर का अनुमान लगा सकते हैं, प्राकृतिक वनस्पति और वन्य पशु जीवन की निश्चित परिस्थितियों को प्रस्तुत करने पर, हम इन सभी z तत्वों के कुल को एक संयुक्त u तत्व द्वारा व्यक्त कर सकते हैं। यदि यह बोधगम्य हो कि हम अंकगणित रूप से इस u विशेषता को व्यक्त सकते हैं तो किसी क्षेत्र पर इसके गुण वैसी ही अनियमित सतह निर्मित कर सकेंगे जो किसी सीमित भाग के लिए इसकी विशेषता को चिह्नित कर सके। हालांकि, इन संयुक्त तत्वों की प्रवृत्ति से यह स्पष्ट होता है कि ऐसे किसी भी प्रतिनिधित्व में अविश्वसनीयता का उच्च स्थान हो सकता है।

हालांकि, क्षेत्रीय भूगोल में, हम स्थिति समन्वय के अधिक जटिल कार्य के साथ संबद्ध हैं। इसे किसी भी तत्व या संयुक्त तत्व के प्रकार्य के रूप में प्रकट नहीं किया जा सकता, परंतु बहुत से अर्द्ध स्वतंत्र जटिल तत्व, u तथा z, जैसे अतिरिक्त अर्द्ध स्वतंत्र तत्वों को z' द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। इसलिए, किसी भी बिंदु पर पूर्ण भूगोल विद्या, w को प्रकार्य $f\ (u_1,\ u_2....z_1,\ z_n)$ द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। यदि हमारे पास प्रकार्य, f और प्रत्येक संयुक्त अवयव, $u^1{}_2$–विभिन्न $u^1{}_2$ अवयव के प्रकार्य–' और अर्द्ध स्वतंत्र अवयव z' से संबंधित सटीक और पूर्ण जानकारी हो सकती है, तो प्रकार्य इतना अधिक जटिल हो सकता है कि हम इसे किसी भी साकार रूप में प्रस्तुत करने की आशा भी नहीं कर सकते, चाहे वह एन–आयामीय स्थान ही क्यों न हो। हमारे पास एक ऐसा प्रकार्य हो सकता है जिस क्षेत्र में केवल प्रत्येक x, y बिंदु के लिए हल किया जा सकता हो, परंतु जिसे उस बिंदु किसी भी छोटे भाग के लिए सही रूप से व्यक्त न किया जा सकता हो। दूसरे शब्दों में, हम क्षेत्र की भूगोलीय स्थिति का अध्ययन केवल उसमें निहित अपरिमित अंकों की संख्या के भूगोल के अध्ययन से कर सकते हैं। यह कार्य अपरिमित होते हुए असंभव है। भूगोल के अंकों से भिन्न क्षेत्रीय भूगोल की वह समस्या यह है कि उन परिमित क्षेत्रों के भूगोल का अध्ययन कैसे किया जाए और उसे कैसे प्रस्तुत किया जाए, जिसमें से प्रत्येक में शामिल कुल जटिल प्रकार्य बहुत से जटिल कार्यों पर निर्भर करते हैं, संयुक्त रूप से परस्पर सबंद्ध एकीकरण के सिद्धांत द्वारा किसी भी समाधान की अनुमति नहीं देता। परिणामस्वरूप हम इस पर विचार करने के लिए बल देते हैं, कि प्रत्येक बिंदु की उस अपरिमित संख्या में जिसमें w के कुछ अंश भिन्न होते हैं, परंतु क्षेत्र के एरियल खंडों की वह छोटी किंतु परिमित संख्या, जिसमें से हमें प्रत्येक के सभी अवयवों को अविरत समझना चाहिए। संपूर्ण क्षेत्र को कवर करने के लिए, हमें परिणामी, w की परिमित संख्या की आवश्यकता है, जो किसी बिंदु का प्रतिनिधित्व करने के बजाय क्षेत्र की छोटी इकाई के भूगोल का प्रतिनिधित्व करती है। यह प्रणाली केवल तभी तर्कसंगत होती है जब कोई यह याद रखता है कि यह अनिवार्य रूप से वास्तविकता को विकृत करती है। विरूपण को छोटे यूनिट क्षेत्र ग्रहण करके कम किया जा सकता है, परंतु इसे पूरी तरह से समाप्त नहीं किया जा सकता, चाहे इकाई कितनी ही छोटी क्यों न हो, हम जानते हैं कि वह कारक जिन्हें हम उसके भीतर स्थिर होने की कल्पना करते हैं, वास्तव में परिवर्तनीय हैं। व्यवहार में, वह छोटी इकाइयां जिन पर ध्यान देने में हमें सामान्य रूप से अधिक समय लग सकता है, पर्याप्त रूप से परिवर्तन के चिह्नित वर्ग को स्वीकार करने के लिए हमारे परिणाम में वास्तविकता का एक महत्वपूर्ण विरूपण है।

किसी भी परिमित क्षेत्र में, चाहे वह छोटा ही हो, अधिक सामान्य शब्दों में हमारे निष्कर्ष को अभिव्यक्त करने के लिए, भूगोलवेत्ता ने कारकों की परस्पर संबंधित जटिलताओं को समान रूप से नव अर्द्ध–स्वतंत्र कारकों के साथ किया है, जिनमें से भिन्नताओं के साथ क्षेत्र में चरण दर चरण भिन्न कारक आंशिक रूप से एक–दूसरे पर निर्भर हैं। वह क्षेत्रों की किसी छोटी इकाई के भीतर परिवर्तन की अव्यवस्थित रूप से अनदेखी करने के अतिरिक्त इन्हें एक साथ एकीकृत नहीं कर सकता, अर्थात, प्रत्येक छोटी परंतु परिमित इकाई के प्रत्येक भाग की अपरिवर्तनशील स्थितियों को ग्रहण करके। इसके बाद वह प्रत्येक निर्दिष्ट इकाई क्षेत्र के भीतर परस्पर संबंधी तथ्य का विश्लेषण और संश्लेषण करके इन्हें समाविष्ट करने की आशा कर सकता है।

टिप्पणी

यद्यपि सभी संबंद्ध इकाई क्षेत्रों का अध्ययन संपूर्ण क्षेत्र के किसी परीक्षण को संगठित करेगा, तथापि यह क्षेत्रीय अध्ययन को पूरा नहीं करता। पेनक ने इस बात पर बल दिया है कि व्यक्तिगत 'कार्य' (लगभग समरूप क्षेत्र) का अध्ययन करना और कार्यों के प्रकार स्थापित करना ही पर्याप्त नहीं है। "उपरोक्त संपूर्ण भूगोलीय विद्या के उस प्रकार को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए जिसमें ये बड़ी इकाइयां बनाने के लिए एक-दूसरे के अनुरूप होती हैं ठीक वैसे जैसे कोई रसायनशास्त्र स्वयं को केवल अणुओं के अध्ययन तक ही सीमित नहीं रखता, बल्कि एक-दूसरे के व्यक्तिगत संयोजक की तुलना में उसकी स्थिति के प्रकार का भी पता लगाता है। भौगोलिक प्रारूपों (जेसटैलटेन) की अवधारणा को नए भूगोल द्वारा शायद ही महत्व दिया जाता है।" ठीक वैसे ही जैसे कि किसी मोसेक को समाविष्ट नहीं किया जा सकता। पेनेक ने उन विशेष पत्थरों को वर्गीकृत करना और उसका अध्ययन करना जारी रखा है, परंतु इसकी भी आवश्यकता है कि हम विशेष अंशों की प्रक्रिया और समूहीकरण देखें, जिससे 'कार्य' के प्रबंधन का अध्ययन सार्थकता के भिन्न संरचनात्मक रूपों को प्रस्तुत करेगा।

सैद्धांतिक दृष्टिकोण से क्षेत्रीय भूगोल तक में हमारा दूसरा चरण-व्यापक क्षेत्र के संरचनात्मक और कार्यात्मक निर्माण को प्रकट करने हेतु एक-दूसरे के इकाई क्षेत्रों से संबंधित है। हालांकि सभी कारक संबंधित हैं और इसके परिणामस्वरूप इसने प्रत्येक छोटी इकाई के लिए अव्यवस्थित रूप से स्थिरता निर्मित की है। यह अनुज्ञेय हो सकता है कि कार्यात्मक संबंधों की बात एक कारक के मध्य और अन्य इकाई में अन्य कारक के मध्य की जाए, यद्यपि ये इकाइयों के मध्य ही कार्यात्मक संबंध थे तथापि हम यह समझते हैं कि यह पूरी तरह से सही नहीं हैं। इसके अतिरिक्त, इस पद्धति द्वारा उत्पन्न क्षेत्रीय संरचना के पास व्यक्तिगत अंशों के मोसेक की विशेषता होगी, जिनमें से प्रत्येक पूरी तरह से समरूप होंगे, उनमें से बहुत से प्रस्तुति की किसी वास्तविक प्रक्रिया के निकट होंगे, जो क्षेत्र के विभिन्न भागों में पुनरावृत्ति के रूप में प्रकट होंगे। परंतु हम इस मोसेक के संबंध में धोखा नहीं करते हैं, जिसे हमनें वास्तविकता के सही पुनरुत्पादन के लिए निर्मित किया है। यह मूल रूप से एक ऐसा यंत्र है जिसके द्वारा परिमित मन बहुत से अर्द्ध-स्वतंत्र परिवर्तनीय कारकों के असीम रूप से भिन्न प्रकार्यों को समाविष्ट कर सकता है। यह परिकल्पना तिगुने रूप में शामिल होती है: हम अव्यवस्थित रूप से प्रत्येक छोटी इकाई के क्षेत्र को संपूर्ण रूप से अपरिवर्तनशील बनाना कल्पित करते हैं, हम इसे इसकी निकट की अव्यवस्थता से इसे पृथक इकाई (व्यक्तिगत) के रूप में सीमांकित करते हैं, और हमारे पास वर्ण में चिह्नित अधिक समरूप इकाई कहलाई जाने वाली अव्यवस्था है।

कुछ अन्य निश्चित आधारभूत सीमाएं होती हैं जिन पर तब जोर डालना चाहिए जब हम पृथ्वी की सतह की तुलना करते हैं। चाहे उसका स्वरूप अधिक विरूपित हो या कम विरूपित हो, जिसमें भूगोलवेत्ता मोसेक को प्रस्तुत करे। हम यह कह सकते हैं कि तकनीक के वर्णन में समरूपता हो सकती है, परंतु कुछ उपर्युक्त सिद्धांतों से संबंद्ध सिद्धांतों पर वापस आए बिना, हम पृथ्वी की सतह को किसी भी कलाकृति की उपमा नहीं दे सकते, जिसके कारण हम यह नहीं मान सकते कि यह किसी एकल मन संगठित उत्पाद है। इसके विपरीत, यदि हम हेटनर की इमारत की सादृश्यता को हस्तांतरित करते हैं जिसे 'द टेरेसट्रियल

टिप्पणी

केनवास' के हंटिंग्टन के चित्र में बहुत से वास्तुकारों द्वारा व्यक्तिगत रूप से बनाया गया था, तो हम कह सकते हैं कि पृथ्वी की सतह को भिन्न जीवंत डिजाइन के परस्पर संबंधित संयोजन द्वारा निर्मित किया गया है, इन जीवंत प्रारूपों पर अलग-अलग कलाकारों ने अधिक या कम स्वतंत्र रूप से कार्य किया है और प्रत्येक परिवर्तन उसके बढ़ने की योजना है। यथाक्रम भूगोल में, कोई यह कह सकता है कि हमने एकल प्रारूपों का स्वरूप समझने और दूसरे प्रारूपों के साथ उसके संबंध को समझने तथा संपूर्ण चित्र को समझने के लिए उन्हें अलग-अलग करने का प्रयास किया है। यद्यपि संपूर्ण चित्र को सामान्य रूप से प्रिंटिंग में भिन्न रंग प्लेट की महान प्रभावशीलता द्वारा निर्मित नहीं किया था, परंतु कुछ हद तक, यह एक-दूसरे से किसी कारणवश संबंधित था, यह अलगाव प्रत्येक डिजाइन के अन्य डिजाइन के साथ कारण संबंधी विश्लेषण को समाविष्ट करता है। क्षेत्रीय भूगोल में हम सबसे पहले सूक्ष्म उन्नयन को कम करते हैं, जिन्हें भिन्न प्रवृत्ति के कलाकारों ने पृथ्वी की सतह पर मोसेक तकनीक के कठोर और अव्यवस्थित रूप में प्रयुक्त किया और अंततः मिश्रित किया। इसके बाद जब हम मोसेक अंशों की बनावट का सर्वेक्षण करते हैं, तो हम प्रत्येक कार्य की कलाकृति जैसे एकीकृत संगठित प्रतिरूप की अपेक्षा नहीं करते हैं। दूसरी ओर, न तो हम अव्यवस्था की और न ही केलिडोस्कोप की अपेक्षा करते हैं, यथाक्रम भूगोल में हमारे अध्ययनों से पता चला है कि एकल प्रारूपों में सिद्धांत समाविष्ट होते थे और यदि समरूपता के इकाई क्षेत्रों के प्रति हमारी अवधारणा पूरी तरह से एकपक्षीय नहीं है, बल्कि सावधानीपूर्वक मापांकन और सही निर्णय के संयोजन पर आधारित की गई है, तो हम इन प्रारूपों के संयोजन को जटिल पहलुओं के होते हुए भी अधिक या कम क्रमबद्ध रूप से देखने की अपेक्षा कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, इन प्रतिरूपों का जो भी स्पष्टीकरण हो, इनके स्वरूप प्रत्येक भाग के लिए महत्वपूर्ण हैं, यद्यपि प्रत्येक इकाई भाग का विकास अन्य इकाई द्वारा प्रभावित होता है।

अंतिम विचार हमें आखिरकार अन्य मुख्य विचार की ओर अग्रसर करता है, जिसमें कलाकृति के लिए पृथ्वी ती सतह की कोई भी समरूपता अपर्याप्त होती है, अर्थात, वास्तविकता यह है कि परवर्ती अचल स्वरूप के साथ स्थिर है, पृथ्वी की सतह उन गतिमान वस्तुओं की समावृष्टि करती है जो निरंतर रूप से उनके विभिन्न भागों से सम्बद्ध हैं। (कलाकारों द्वारा उपयोग किए जाने वाली 'बल की रेखाएं', 'गतिविधि', 'विपरीत बल' आदि विशिष्ट शब्दों को प्रस्तावित करने का प्रयास करना, यहां अस्तव्यस्तता पैदा कर देगा।) अन्य शब्दों में, भूगोलवेत्ता को प्रकार्यात्मकता के साथ प्रारूप पर भी अवश्य विचार करना चाहिए। हमारे एकपक्षीय छोटे इकाई क्षेत्रों को स्थापित करने में, हमें केवल यह ही नहीं मानना चाहिए कि प्रत्येक प्रारूप न केवल संपूर्ण व्यवहार में अपितु कार्य में भी अपरिवर्तशील है। इसी तरह इन इकाइयों को व्यापक क्षेत्रीय विभागों में संयोजित करने पर, हमारी समस्या इस तथ्य के साथ जटिल होती है कि हमें एक दूसरे की इकाई के कार्यात्मक संबंधों के साथ उसके प्रारूप पर भी ध्यान देना चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि दो निकट की क्षेत्रीय इकाइयां बहुत ही समरूप हैं और हमने उन दोनों को समान रंग वाले मोसेक के दो भागों की तरह रंग दिया है, परंतु उनमें से एक किसी क्षेत्र के शहरी केंद्र की कार्यात्मकता से संबंधित है, और दूसरी किसी अन्य शहरी केंद्र की कार्यात्मकता से संबंधित है, तो क्या हम इन्हें भिन्न क्षेत्रों में शामिल करें या किसी समान क्षेत्र में शामिल करें? इस प्रश्न का कोई भी उत्तर केवल अधिक या कम तर्कसंगत हो सकता है, इसका कोई "सही उत्तर" नहीं हो सकता।

टिप्पणी

जैसे किसी क्षेत्र में इकाई क्षेत्र प्रबंध को जानना आवश्यक होता है, ठीक वैसे ही एक-दूसरे क्षेत्र के प्रबंधन को जानना ही आवश्यक होता है। पेनक और ग्रीनो (जिन्होंने विचार की समान पंक्ति का अनुसरण किया) दोनों इस प्रक्रिया को व्यापक इकाई तक ले जा सके, संबंधित क्षेत्र का आकार अनावश्यक है। इसलिए क्षेत्रीय भूगोल का अध्ययन इस प्रकार किया जाता है, जिसमें जिलों का समूहीकृत और बड़े क्षेत्रों में संबंद्ध किया जाता है, इस प्रकार जिसमें ये व्यापक क्षेत्रों के साथ संबद्ध हो जाते हैं।

हालांकि यहां एकीकरण के स्तर पर एक मुख्य भिन्नता है। पेनक और ग्रीनो दोनों इस तथ्य की उपेक्षा करते हुए पाए गए कि छोटी इकाइयों की समरूपता के पूर्वानुमान में छोटा परंतु परिकल्पना का तत्व कम मूलतत्व प्रगतिशील रूप से बढ़ता है, क्योंकि यह व्यापक खंडों को उन्नत बनाता है। इसके फलस्वरूप, इन व्यापक विभागों की अवधारणा को तथ्य के लगातार एकपक्षीय विरूपण की आवश्यकता है।

'समरूप इकाइयों' की रचना को समझने पर, हम क्षेत्र कहलाए जाने वाले किसी अनवरत क्षेत्र के समावरण द्वारा दूसरे चरण पर आगे बढ़ सकते हैं, –'समरूप इकाइयों' की सबसे बड़ी संभव संख्या जिसका अनुमान हम सबसे निकट की संख्या से लगाते हैं, वह असमान इकाइयों की सबसे छोटी संख्या सहित साथ होती है। हमारी समरूपता का निर्धारण व्यक्तिपरक निर्धारण को शामिल करेगा, जिसके कारण समरूप इकाइयों के अभिलक्षणों की महत्ता दूसरी से अधिक होती है, इसलिए क्षेत्र की अवधारणा की समझ एकपक्षीय होती है।

इसके अतिरिक्त, हम वास्तविकता में शायद ही कभी वर्णित किए गए ऐसे साधारण समाधान को खोज पाए। यद्यपि कुछ भौगोलिक विशेषताएं भिन्न होती हैं परंतु यह स्थानानुसार यथाक्रम होती हैं, अन्य विशेषताओं की अनियमितता और अत्यधिक भिन्नता-जैसे मिट्टी, पर्वतीय प्रदेशों में ढलानें, शहरी व्यवस्थापन और अन्य सभी अनिवार्य रूप रेखीय विशेषताएं, नदियां, सड़कें रेलमार्ग-हमें भिन्न विशेषता वाली किसी क्षेत्रीय-इकाई को शामिल करने के लिए प्रेरित करती हैं। इसलिए इकाइयों के प्रकारों का निर्धारण करना आवश्यक हो जाता है, चाहे वह वास्तविक परस्पर संबंध में हो या केवल सान्निध्य में हो, क्षेत्र की विशेषता विचारणीय होती है और इसलिए उसे अन्य प्रकार की इकाई की छोटी संख्या सहित कई प्रकार की समरूप इकाइयों की संख्या के रूप में निर्धारित किया जाता है।

किसी भी उस व्यापक क्षेत्र पर विचार करके, जिसमें हमने सबसे पहले 'समरूप इकाइयों' को पहचाना हो और उन्हें क्षेत्रों में निर्मित करने का प्रयास किया हो, जहां हम उन इकाइयों में से कुछ के मध्य समरूपता या संबंधों की विशेषता संक्षिप्त रूप से बता सकते हो, वहां हम उस क्षेत्र के लिए कार्य करना अपेक्षाकृत सरल पा सकते हैं, जहां शायद इकाइयों के मुख्य बहुमत विशेषकर समरूप हैं। परंतु यह इन भागों के मध्य अत्याधिक कठिन हो सकता है, जिन्हें उन कुछ मामलों में इकाइयों द्वारा विशेषीकृत किया जा सकता है जो उनमें से एक पक्ष की इकाई के समरूप है, और दूसरे मामले में दूसरे पक्ष की इकाई के समरूप है। इसके अतिरिक्त, हम उन भिन्न प्रकार की इकाई वाले क्षेत्रों को भी खोज पाएंगे, जिन्हें हम नहीं देख सकते कि वे कहां समाविष्ट हैं। कुछ मामलों में, निश्चित रूप से, हम ऐसे क्षेत्रों को संक्रमण जोन के रूप में पहचान सकते हैं, परंतु वह मूलभूत समस्या को बिना इसके समाधान के ही स्थगित करता है। इसी तरह, इन्हें 'साधारण क्षेत्र' या 'सामान्य' या 'संयुक्त प्रकार के क्षेत्र' कहना, पूर्ण रूप से समस्या से बचना है।

टिप्पणी

इसमें कोई आशंका नहीं है कि कोई भी विद्यार्थी, मानचित्र के किसी जटिल क्षेत्र को स्वेच्छा से चाहेगा, विज्ञान भी ऐसा विषय नहीं है जो यह जानने का प्रयास करे कि विश्व अधिक जटिल क्षेत्रों की उपेक्षा करना स्वीकृत करता है और स्वयं को उन आसान क्षेत्रों तक सीमित करता है जो उसके ज्ञान के मुख्य भाग को सुनियोजित करते हैं।

विज्ञान यह जानना नहीं चाहता कि विश्व बहुत जटिल क्षेत्रों की उपेक्षा करने को स्वीकृत करता है और स्वयं को आसानी से संगठित होने वाले क्षेत्रों तक सीमित करता है। यद्यपि ये आशंकित क्षेत्रों, सामान्य रूप से केवल संकीर्ण किनारे तक ही सीमित नहीं हैं, बल्कि व्यापक विस्तारित क्षेत्र को भी समाहित करते हैं, कदाचित अधिक स्पष्ट रूप से वर्गीकृत बड़े या विस्तृत क्षेत्रों को भी शामिल करते हैं, यह विचार करने का कोई आधार नहीं है कि वे क्षेत्र पूर्ण आकार वाले व्यापक क्षेत्रों या विश्व के उन क्षेत्रों में कम महत्ता वाले क्षेत्र हैं, जिसकी विशेषता का हम बहुत सरलता से वर्णन कर सकते हैं। भूगोल के भिन्न भागों के साथ अधिक यथाशब्द प्रयोग में लाया जाता है- 'किसी केंद्र में किसी बॉर्डर से अधिक स्वाभाविकता नहीं होती।'

इसके फलस्वरूप, जब हम किसी भी प्रस्तुत क्षेत्र को प्रदेश कहलाए जाने वाले भागों में विभाजित करते हैं, तो वह उन विशेषताओं को निर्धारित करता है जिन्हें हमने सबसे महत्वपूर्ण समझा और जो प्रत्येक प्रदेश के लिए आर्थिक रूप से सबसे अधिक वर्णित की जा सकती हों, हम मापांकन के बजाय निर्धारण पर आधारित बहुत से निर्णयों की उपेक्षा नहीं कर सकते। इसलिए हमें अवश्य यह स्वीकार करना चाहिए कि हमारे प्रदेश मात्र 'भूमि के अंश' हैं, जिनका निर्धारण एकपक्षीय निर्णय की विचारणीय अवस्था को समाहित करता है। दूसरी ओर, यदि संभव वस्तुनिष्ठ साधन उपयोग किए जाएं और एकपक्षीय निर्णय उचित निर्धारण पर आधारित हो, तो हम उसके प्रदेशों को 'मनमाने ढंग से चयनित' व्यक्त कहावत के बजाय उचित रूप से वैधता के साथ महत्व दे सकते हैं। दूसरी ओर, पूर्व प्रसिद्ध विभिन्न लेखकों के यह विचार कि भूगोलवेत्ताओं से किसी प्रदेश की निर्दिष्ट सीमाओं पर और केंद्रीय मूल पर सहमति देने की आशा की जा सकती है- जो आशावाद संबंधी पीढ़ी में सूचीबद्ध सभी कठिनाइयों को प्रकट करता दिखाई देता है।

यह निष्कर्ष समाविष्ट करने की अधिक आवश्यकता नहीं है कि भूगोल क्षेत्रीय अनुभाग के लिए कोई भी यथार्थ विषयवस्तु आधार की रचना नहीं कर सकता, यह क्षेत्रीय ज्ञान को क्षेत्रों अनुभागों में संगठित करने के कार्य से बचने की अनुमति नहीं देता, जिसका निर्धारण उचित संभव निर्णय द्वारा किया जाता है। क्षेत्रीय भूगोल की खोज का वर्णन करने के लिए प्रणालीगत भूगोल में विकसित सामान्य अवधारणाओं और सिद्धांतों का उपयोग करने हेतु, परवर्ती भागों में संगठित किया जाना चाहिए, जो संभाव्य अनुसार महत्वपूर्ण होता है। क्षेत्र के विकास की यथार्थ स्थिति में - यदि अस्पष्टतापूर्ण नहीं है- तो हमारे पास सामान्य समाधान नहीं हो सकेगा, अर्थात क्षेत्रों का विश्व के एकल मानकीकृत और सर्वत्र स्वीकृत खंडों और उपखंडों में समाधान। इसलिए, क्षेत्रीय भूगोल का प्रत्येक विद्यार्थी क्षेत्रीय विभाग की स्व प्रणाली को मानकीकृत करने का कार्य तब तक अधिरोपित करता है जब तक कि वह उसका उपयोग अपने किसी सहकर्मी के साथ नहीं कर सकता। यहां मानकीकरण का उपयोग यह संकेतित करने के लिए किया गया है कि क्षेत्रीय प्रणाली

निर्दिष्ट रूप से दिए गए कुछ निश्चित मानकों पर आधारित है, जिससे हमारे विद्यार्थी व्यवस्थापन को जान सकेंगे।

टिप्पणी

भूगोल में क्षेत्रीय ज्ञान के पूर्ण संगठन को अंतिम या प्राथमिक चरण के होते हुए संपूर्ण विश्व के विभाग की आवश्यकता है। किसी भी दिशा में प्रक्रिया आगे बढ़ती रहती है और हमने यह नोट किया है कि दोनों ही दिशाओं में इस पर सोच-विचार करने की आवश्यकता है -संपूर्ण प्रणाली को विश्व का कोई क्षेत्रीय खंड उपलब्ध करवाना चाहिए, जिसमें प्रत्येक छोटे भाग के लिए हमारा ज्ञान तर्कपूर्ण रूप से स्थित हो। इस अत्यधिक जटिल समस्या के लिए हमने समाधान की दो भिन्न पद्धतियों को खोजा है। भौगोलीय ज्ञान को क्षेत्रों की प्रणाली में तर्कसंगत रूप से व्यवस्थित किया जा सकता है, जिसे क्षेत्रों के कुछ निश्चित गुणों के अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है। यद्यपि इस प्रक्रिया की अपेक्षाकृत उद्देश्य के लिए भिन्न उपयोगिता होगी, यह संपूर्ण क्षेत्रीय ज्ञान को एक प्रणाली में संगठित करना स्वीकार नहीं करती, तथापि इसे बहुत सी स्वतंत्र पद्धतियों की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, व्यापक क्षेत्रों के भाग के रूप में क्षेत्र के वास्तविक संबंधों को प्रस्तुत नहीं करता। ये संबंध किसी निर्दिष्ट क्षेत्र की प्रणाली में विश्व के वास्तविक खंड में समाहित नहीं किए जा सकते, जिसमें संपूर्ण क्षेत्रीय ज्ञान को किसी एकल तर्कसंगत प्रणाली में निगमित किया जा सकता है। ऐसी पद्धति वास्तविकता में उपलब्ध किसी भी प्राकृतिक खंड द्वारा दुर्भाग्यवश भूगोलवेत्ता को उपलब्ध नहीं होती है, और न ही जैविक स्वरूप के सामान्य खंड के अनुरूप उपलब्ध होती है। इसे भूगोलवेत्ताओं द्वारा इसके उपयोग के ही समय शोध के परिणामस्वरूप विकसित और नियमित संशोधित किया जाना चाहिए, जो हमेशा क्षेत्रीय अनुसंधान की संगठित संरचना के अनुसार परीक्षण रूप में होना चाहिए। क्षेत्रीय अध्ययन में किस प्रकार की जानकारी को समाविष्ट करना होता है? अब तक की विषय से संबंधित प्रवृत्ति, जिसे हमने पूर्व में संकेतित किया है कि किसी क्षेत्र की संपूर्ण भूगोलीय स्थिति प्रणालीगत भूगोल में शामिल सभी दृष्टिगत वस्तुओं को समाविष्ट करती है- आगे जाकर वह किसी निश्चित क्षेत्र में प्रस्तुत हो सकती है। क्षेत्रीय भूगोल के साथ प्रणालीगत भूगोल में समाविष्ट न होने वाले भूगोल का एक क्षेत्र केवल ऐतिहासिक भूगोल है। जैसे कि प्रत्येक पूर्व काल की भूगोलीय स्थिति भिन्न थी, वैसे ही कई प्रकार की स्वतंत्र ऐतिहासिक भूगोलीय स्थिति हो सकती है, जिससे प्रत्येक भूगोल अपने प्रणालीगत और क्षेत्रीय विभाजन को समाविष्ट करता है।

किसी निश्चित प्रणाली में क्षेत्रों में उपलब्ध दृष्टिकोण के वे प्रकार, जिनमें वे प्रस्तुत होते हैं और उनके परस्पर संबंधों की प्रवृत्ति, दोनों को प्रत्येक इकाई क्षेत्र और संपूर्ण इकाई विभाग के भीतर, किसी निश्चित स्वरूपों और क्षेत्रीय कार्य के रूप में निर्धारित किया जाता है। यद्यपि बहुत से विद्यार्थी संयोजित महत्व के सिद्धांत से सहमत हैं, तो भी हाल ही के दशकों में हुए शोध प्रकार्यों की उपेक्षा करने के लिए अध्ययन पर बल देने की ओर प्रवृत्त होते हैं। हमने इसे निश्चित रूप से 'परिदृश्य शुद्धतावादी' के कार्य में सुस्पष्ट पाया है। दूसरी ओर, ग्रीनो ने यह पाया कि बहुत से विद्यार्थी, विशिष्ट रूप में स्पेथमन, 'बल के क्रम' में उस क्षेत्र का विचार करते हैं जो 'क्रियाशील रूप से जटिल' है। भूगोल में, ग्रीनो परस्पर संबंधों के बल अध्ययन का आग्रह नहीं करता, बल्कि उस क्षेत्र में वस्तुओं के परस्पर संबंधों के अध्ययन का आग्रह करता है जिसका निर्धारण जर्मन में प्रस्तुत एक मुख्य उदाहरण द्वारा दिया जाता है। ग्रीनो ने स्वयं मुखाकृति विज्ञान पर बल दिया है और क्षेत्रों के प्रकार्यों की ओर भी थोड़ा ध्यान दिया है।

टिप्पणी

जब हम क्षेत्रों के प्रकार्यों के बारे में बात करते हैं तो हमें यह नहीं भूलना है कि वास्तविकता में क्षेत्र प्रकार्यों की वस्तुएं नहीं हैं, ये इसके भीतर केवल वे निश्चित वस्तुएं हैं जिनके अन्य क्षेत्रों में वस्तुओं के साथ प्रकार्यात्मक संबंध हैं। यदि किसी छोटी समरूप क्षेत्रीय इकाई की हमारी परिकल्पना, स्वरूप और प्रकार्य दोनों में स्थिर है, तो यह हमें इकाई क्षेत्र के प्रकार्यात्मक संबंधों के अन्य इकाई क्षेत्रों के साथ संबंधों को आदर्श रूप से व्यक्त करने की स्वीकृति देती है। हमें कार्यात्मक संबंधों वाले विचारणीय क्षेत्र की अवधारणा का प्रयास करते हुए इस अवधारणा की कल्पित या दिखावटी विशेषता की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

विशेष रूप से, छोटी क्षेत्रीय इकाई की अवधारणा पर ध्यान देने की बात है कि जब हम एक 'क्षेत्र की उत्पत्ति' का अध्ययन करने का प्रयास करते हैं, तब हम क्षेत्र के भूगोल में पहले के ऐतिहासिक स्तरों का अध्ययन करते हैं, ''क्षेत्र की उत्पत्ति'' के अध्ययन को इसके अन्दर में निहित विभिन्न वस्तुओं को प्रत्येक उत्पत्ति के अध्ययन में बांटा जा सकता है। इस प्रकार ये सभी व्यवस्थित भूगोल में निहित हैं, किस सीमा तक वो किसी क्षेत्र के भूगोल के अध्ययन करने में वांछनीय हो सकता है यह एक विवादास्पद सवाल है जिसे हमने पहले पढ़ा है।

अब हम प्रश्न का उत्तर देने की स्थिति में हैं कि क्या क्षेत्रीय विकास के महत्व पर विचार करने की आवश्यकता है कि सिद्धांत या वैज्ञानिक कानून और उत्पत्ति की अवधारणा के सर्वव्यापी निर्माण के हमारे इस क्षेत्र के इस शाखा में हम विकास की आशा कर सकते हैं?

भौगोलिक क्षेत्र में प्रायोगिक सामान्य के एक रूप की विवेचना हम पहले ही कर चुके हैं- छोटे क्षेत्र इकाई से क्षेत्रों का निर्माण। भिन्नता का महत्व ऐसी वास्तविकता में निहित है जो कि सामान्यता के इस रूप को सामान्य सिद्धांत स्थापित करने के लिए कोई आधार नहीं देता इसलिए हमारे पास प्रकारीय धारणा होनी चाहिए।

यह स्पष्ट है कि कोई सर्वव्यापक सिद्धांत जिसे हम काल्पनिक क्षेत्र के आधार पर बनाने का प्रयास कर सकें, वे वर्णन के उद्देश्य के लिए व्यवस्थित हैं वे अपनी इकाइयों से ज्यादा प्रमाणिक नहीं हैं, जबतक इन्हें बहुत छोटी इकाइयों में न लिया जाए। हमारे द्वारा लिए गए गलत निर्णय का परिचय व्यवस्थित किए गए किसी भी सिद्धांत की ओर जाएगा, त्रुटि की डिग्री संदेहात्मक महत्व में खत्म हो सकती है।

उस आवश्यक कठिनाई पर ध्यान न देते हुए, यद्यपि हमने देखा कि ये स्वैच्छिक इकाइयां, संबंधित रूपों के कठिन मिश्रण को लगाती हैं, इनके भिन्न और अर्धस्वाधिन कारणों के पूर्णांक पर आधारित प्रकारों की प्रणालियों में वर्गीकृत हो सकती हैं। तब भी किसी एक क्षेत्र में हम क्षेत्रीय इकाइयों को इतना समान पा सकते हैं कि उन्हें उनकी छोटी डिग्री के साथ समान कह सकते हैं। हमने दुनिया के किसी दूसरे क्षेत्र में समानता के ऐसे प्रकार को नहीं देखा। अपर राइन मैदान में, किसी छोटे भाग में ऐसे समान क्षेत्रों की समानता हो सकती है लेकिन इससे कोई मतलब नहीं है कि हम कितना छोटा भाग लेते हैं, यह किसी दूसरे विश्व क्षेत्र में किसी क्षेत्रीय इकाई से मौलिक रूप से भिन्न है।

किसी को ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि उत्पत्ति धारणा के बिना क्षेत्रीय भूगोल का अध्ययन सम्भव है। इसके विपरीत, प्रत्येक क्षेत्र में अंतर्निहित दृश्य सहसंबंध की व्याख्या व्यवस्थित भूगोल में विकसित धारणा और सिद्धांत के प्रकार पर आधारित होती है।

दूसरे शब्दों में, उनके बीच साधारण संबंधों और भौगोलिक क्षेत्र में व्यक्तिगत आइटम के लिए हम व्यवस्थित अध्ययनों से सर्वव्यापी धारणा पर निर्भर करते हैं लेकिन प्रत्येक क्षेत्रीय इकाई का सहसंबंधित मिश्रण आवश्यक एकमात्र दशा का प्रतिनिधित्व करता है जिससे हमारे पास कोई सर्वव्यापी नहीं हो सकता है।

भूगोल में लाया गया आवश्यक विचार कोई नया नहीं है। हम्बोल्ट के अनुसार, हमारे साहित्य में क्षेत्र की शाखा के रूप में कोई तुलनात्मक क्षेत्रीय भूगोल नहीं है। ऐसी सामयिक तुलना करते हुए उन्होंने हर्डर के अध्ययन में कहा कि सभी विज्ञानों में ऐसी तुलना प्रयोग की जाती है (बर्लिन 1931)। इतिहासकारों ने दो या दो से अधिक अवधि की तुलना को बहुमूल्य पाया जो कि कुछ मामलों में समान है। इस प्रकार के उदाहरण हमारी किसी भी खोज को संदेहात्मक बना सकते हैं जिन्हें कानून या क्षेत्रीय भूगोल कहा जा सकता है।

इस प्रकार निष्कर्ष निकलता है कि क्षेत्रों का तुलनात्मक अध्ययन न तो नोमोथेटिक भूगोलिक क्षेत्र की ओर प्रारंभिक कदम है और न ही भूगोल की स्वतंत्र शाखा ही है। राइटर्स ने विज्ञान के विभिन्न प्रकारों के हस्तानान्तरण का प्रतिनिधित्व किया।

फिर भी इस विधि का प्रयोग, एक अनूपूरक उपकरण के रूप में कुछ विशिष्ट लाभ प्रदान करते हुए किया गया। समान रूप में व्यापक क्षेत्रों में, कुछ तत्वों के संबंध में समान प्रकार के रूप में उन्हें वर्गीकृत किया जा सकता है। उनकी समानताओं और विभिन्नताओं की तुलना विशेष रूप से जांच के रूप में की जा सकती है। उनमें से प्रत्येक को घटनाओं के संबंध में हम स्थान दे सकते हैं। यहां तक कि इससे भी अधिक उपयोगी बड़े क्षेत्रों में इलाकों की तुलना में इस रीति की उपयोगिता है। जहां पर समान प्रकार के तत्वों की बड़ी संख्या हो उन इलाकों का चयन करते हुए जो कि संख्या में उनके समान हो और तुलना उनके साथ करें जो उनके समान हो।

कपास के महत्व के लिए कुछ सास्ंकृतिक स्थितियों को लेते हैं और जलवायु की स्थितियों के रूप में समझते हैं। जबकि हमने देखा है कि उन इलाकों में जहां कपास एक मुख्य फसल है, वहां कपास समग्र रूप से महत्वपूर्ण है यद्यपि जलवायु की स्थितियां समान हैं। कपास की फसल को दक्षिण की मिट्टी के बिना समझा नहीं जा सकता है।

इसी तरह, अमेरिकन भूगोलवेत्ताओं, तथा यूरोपियन भूगोलवेत्ताओं के द्वारा यह मान्यता प्राप्त नहीं है कि दक्षिण की जलवायु स्थितियां उन लक्षणों की व्याख्या नहीं करती हैं जो कि उत्तर और दक्षिण के विरोधों में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इन इलाकों की समान तुलना के द्वारा पाया जाता है कि सभी सांस्कृतिक तत्व इसी के साथ संबंधित हैं जिन्हें जलवायु और मिट्टी की स्थितियों के बगैर नहीं समझा जा सकता है जो कि कपास के लिए आवश्यक हैं। यह निष्कर्ष जबकि अपूर्ण है। आज के महत्वपूर्ण प्रसिद्ध कपास जिलों में केंद्रीय टेक्सास में नीग्रो की जनसंख्या का अनुपात कम है। सम्पूर्ण व्याख्या तभी हो पाएगी जब उन इलाकों की तुलना की जाए जहां वृक्षारोपण फसलों के लिए विकसित है।

एक ही बड़े क्षेत्र के भीतर इलाकों की तुलना में इस विधि के सामान्य सिद्धांतों से देख सकते हैं। इससे ये निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि संबंधित विधि एक ही बड़े क्षेत्र के लिए उपयोगी है। यदि हम कपास बेल्ट के जिले को यांगत्से में एक जिले के साथ

टिप्पणी

जोड़ें और बम्बई प्रान्त के एक जिले से तो हम उन सभी जिलों को किसी सामान्य धारणाओं के तहत शामिल नहीं कर सकते हैं।

क्षेत्रीय भूगोल, जैसा कि उसके नाम से जाहिर है, पृथ्वी की सतह के आधार पर उसका विवरण करता है। इतिहास की ही तरह, वह भी किसी समय विशेष के संदर्भ में, यह मूलतः एक विवरणात्मक विज्ञान है, जो कुछ विशेष मामलों का विवरण और विवेचन करता है, जिनसे किसी तरह के वैज्ञानिक नियम नहीं उपजते। निस्संदेह यह एक विसंगति है क्योंकि इससे खोज का विश्लेषण उन अन्य क्षेत्रों के मुकाबले और कठिन हो जाता है, जिनमें विशिष्ट मामलों को सामान्य नियमों के आधार पर विश्लेषित किया जाता है, लेकिन इसका यह मतलब भी नहीं कि क्षेत्रीय भूगोल वैज्ञानिक लक्ष्य विहीन होता है। जैसा कि पहले बताया गया कि विज्ञान का लक्ष्य वैज्ञानिक नियम गढ़ना नहीं, बल्कि सच को समझने के अपने लक्ष्य की प्राप्ति करना है। लिहाजा 'जिसे भी यह शीर्षक 'पृथ्वी विवरण' अर्द्धशैक्षिक या वैज्ञानिक लगा हो।' हाइड्रिक का कहना है, 'विवरण किसी भी वैज्ञानिक कार्य का अंतिम और सर्वोच्च लक्ष्य होता है, यानी, यहां मतलब केवल बाहरी विवरण से नहीं जो सतह पर नजर आता है, बल्कि उस विवरण से भी है, जो किसी भी वस्तु की चारित्रिक विशेषताओं के गहन विश्लेषण से प्राप्त होता है।' इसलिए विज्ञान में केवल यही जरूरी है कि विस्तृत विवरण अधिकाधिक तर्कसंगत और सही हो, वैज्ञानिक नियमावली जहां जरूरत हो बनाई और इस्तेमाल की जाए। क्षेत्रीय भूगोल में सभी उचित सामान्य सिद्धांतों और व्यवस्थित विज्ञान के अंतर्गत विकसित नियमों का इस्तेमाल किसी विशेष मामले की तह तक पहुंचने के लिए किया जाता है। यही तथ्य व्यवस्थित भूगोल के लिए भी है जो पृथ्वी पर उनके आपसी संबंधों का अध्ययन करता है।

क्षेत्रीय भूगोल की प्रकृति के मामले में निष्कर्षों से हम हालिया वर्षों में अनेक छात्रों द्वारा उठाए गए प्रश्नों के कुछ उत्तर देने के नतीजे पर पहुंचे हैं। क्षेत्रीय अध्ययनों के बारे में अमेरिकी भूवैज्ञानिकों के मध्य प्रचलित विचारधारा पर गत वर्ष जर्मनी में ब्रोक और फाइफर द्वारा प्रकाशित दो आलेखों में मनन किया गया था। इन सर्वेक्षणों और महत्वपूर्ण आलेखों के आधार पर, क्षेत्रीय अध्ययनों पर बैरोज और विशेषतः सॉर के अति उत्साही एकाग्रता के एक अरसे के पश्चात पाठक यह सोच सकता है कि क्या वाकई अमेरिकी भूवेत्ता क्षेत्रीय भूगोल से और अधिक उम्मीद रखने से उदासीन हो चले हैं। हो सकता है कि नतीजा अतिशयोक्ति का शिकार रहा हो और जिसकी गूंज अटलांटिक के दोनों ओर सुनाई दी गई हो, और संभव है कि हमारे विश्वविद्यालय के विभाग और जर्मनी के विभाग के मौजूदा और पुराने सदस्यों के बीच विरोधी स्वर गूंजने लगें। बहरहाल, इसके बावजूद, आपसी बातचीत में अन्य अमेरिकी भूवेत्ताओं ने क्षेत्रीय अध्ययनों से मिलने वाले नतीजों के बारे में शंका जरूर जाहिर की है।

अनेक मामलों में शंकालुओं ने लंबे और कठिन प्रयासों के बाद, क्षेत्रीय भूगोल की मदद से समस्त भूगोल को समृद्ध करने की मंशा से लिखा या बोला है, लेकिन हमने पाया कि जो कार्य किए गए, वह कोई बेहतर नतीजे प्रेषित नहीं कर सके हैं। वैसे इस दलील की संजीदगी पर यकीन करना भी कठिन लगता है। अमेरिकी भूगोल में क्षेत्रीय अध्ययनों का अरसा बमुश्किल दस वर्ष का रहा है और वह भी अपूर्ण। उस अरसे में कुछेक शोधार्थियों में से हरेक ने एक, दो या तीन इलाकों में क्षेत्रीय अध्ययन किए जिनमें पीस

रिवर कंट्री से लेकर साओ पाओलो तक और यूरोप से चीन तक के क्षेत्र रहे हैं। इसलिए इस थ्योरी में क्षेत्रीय विचार के दोनों अमेरिकी पक्षधर (मौजूदा) ने क्षेत्रीय भूगोल में परिपूर्ण अध्ययन संबंधी कोई पुख्ता उदाहरण नहीं दिया है, इसलिए शोधार्थियों को अपनी पहचान बनाने के लिए स्वतंत्र प्रयासों से इस क्षेत्र में काम करना पड़ा है, ताकि वे मान्यता प्राप्ति हेतु कोई प्रासंगिक तत्व प्रस्तुत कर सकें और अपने नतीजे प्रस्तुत कर सके। तो क्या कोई सचमुच कभी इस बात को मानेगा कि क्षेत्रीय अध्ययनों में सामान्य नतीजे प्राप्त करने के लिए हमने ईमानदार संभावनाओं को खंगाला था? चाहे सब कार्य सामान्य तरीके से हुआ हो, फिर भी आधी दुनिया में संपन्न हुए थोड़े से कार्यों को मुख्यधारा के नतीजों में शामिल करने की उम्मीद नहीं की जा सकती, या उन्हें सामान्यीकरण का आधार नहीं समझा जा सकता।

ऐसा प्रतीत होता है कि अनेक विद्यार्थी कुछ अन्य कारणों से यह शंका जताने लगे हैं कि बेशक वह कितने भी क्षेत्रों का अध्ययन, कैसी भी विधियों से कर लें, कोई वैज्ञानिक मानक स्पष्ट नहीं होगा। यह नतीजा सैद्धांतिक तौर पर स्पष्ट हो सकता है, इसलिए हम एकमत हो सकते हैं कि वैज्ञानिक मानकों की खोज को केंद्र में रखकर जो क्षेत्रीय अध्ययन करते हैं, वह किसी छलावे में हैं, और जितनी जल्दी वह इसे छोड़ देंगे, वही सबके लिए बेहतर होगा।

इसलिए, यदि, भूगोल का लक्ष्य दुनिया के अलग-अलग क्षेत्रों में भिन्न विकास क्रियाओं के बारे में ज्ञान बटोरना है, तो क्षेत्रीय अध्ययन जिसका कार्य दुनिया के प्रदेशीय विभाजनों को समझना है, भूगोल में शक का विषय नहीं हो सकता। विज्ञान की किसी भी शाखा के कर्मियों को इस पर हतोत्साहित होने की भी जरूरत नहीं है कि बीस वर्ष से कम के अरसे में कुछेक कर्मियों के प्रयासों के बावजूद, आशा के विपरीत कम ही नतीजे आए हैं। हालांकि भूगोल का विषय, विशाल है, फिर भी यह आकार में सीमित है और हमें मानना चाहिए कि भूगोल का भविष्य बहुत व्यापक है। इसमें शक नहीं कि अमेरिकी भूवेत्ताओं के सामूहिक प्रयासों से तब कहीं बेहतर नतीजे आ सकते हैं, यदि वह या उनमें से अधिकांश सदस्य अपना पूरा ध्यान दुनिया के छोटे से हिस्से पर केंद्रित कर दें - जैसा फ्रांसीसी भूवेत्ताओं ने अपने देश में किया है। लेकिन विद्यार्थियों के दूर-दराज के क्षेत्रों में खोज के लिए जाने के कारणों पर रोक नहीं लगानी चाहिए, फिर वह जरूरी ही क्यों न हो। उम्मीद केवल इतनी की जा सकती है कि इस देश में कर्मियों की विशाल संख्या और गहराती एकाग्रता, किसी अपेक्षाकृत सीमित क्षेत्र में बढ़ती दिखाई दे, जैसा कि विस्कॉन्सिन में देखा गया। विशेषत: फिंच के विचारानुसार, हमें इससे असाधारण वैज्ञानिक क्षमता वाले नतीजों की उम्मीद नहीं करनी चाहिए जो, 'किसी एक क्षेत्र को खंगालने और दूसरे की उपेक्षा से' जैसे अभ्यास पर आधारित हो। इस तरह के अध्ययनों का अध्यापन जैसे कार्य में योगदान, इस पर खर्चे गए समय और प्रयास से स्पष्ट होता है, बशर्ते कि संबंधित क्षेत्र कक्षा में पढ़ाए जाने योग्य हो। क्षेत्रीय भूगोल में स्थायी विकास के लिए इससे जुड़े व्यक्तियों से एकाग्रता की गहरी उम्मीद रखी जाती है - फिर चाहे कोई फिंच की सोच पर चलकर केवल एक ही क्षेत्र को एक विद्यार्थी के जीवनकार्य की उपलब्धि मानने की पैरवी करे या नहीं।

दूसरी ओर, इन विचारों से अनिवार्य रूप से प्रश्न उठता है कि क्षेत्रीय भूगोल के अंतर्गत कितने क्षेत्र का अध्ययन होना चाहिए। इससे पूर्व फ्रांस में विडाल के नेतृत्व में

टिप्पणी

एक समूचे प्रांत के अध्ययन की बात की थी, लेकिन फिर छोटे क्षेत्र चुने गए। देमंगियोन का मानना है कि 'सूक्ष्म' अध्ययन की अंतिम सीमा एलिक्स द्वारा मापी जा चुकी है, जिनका दफ्फां की एल्पाइन घाटी के एक हिस्से का 'एल-ओइसंस' में अध्ययन, एक 'एरॉन्डिमेंट' से छोटा है, और जिसके लिए 915 पृष्ठ काम आए थे और संदर्भ ग्रंथों में 861 कार्यों की सूची थी। देमंगियोन का मानना है कि इस औसत से प्रति वर्ग किलोमीटर या प्रत्येक 12 स्थानीय निवासियों के लिए एक पृष्ठ बैठता है। इसके समक्ष, अमेरिकी भूवेत्ताओं का अपने कार्य को 'सूक्ष्म' कहना अनुचित ही लगता है।

इस प्रश्न के साधारण उत्तर नहीं मिलते। इतिहासकार छोटे कालखंडों का विस्तृत अध्ययन करना पसंद करते हैं, जबकि लंबे कालखंडों का कम गहन अध्ययन भी होता है। यह मानक दोनों क्षेत्रों में समान है – अंतर केवल अध्ययन क्षेत्र की महत्ता का है – लेकिन इस मानक के बारे में हमारे पास कोई वस्तुपरक आकलन नहीं है। हमने पहले दो प्रमुख विचार रखे थे, जो स्वयं क्षेत्र के बारे में और विशाल क्षेत्र के एक बेहतर प्रतिनिधि के बारे में या फिर छोटे-छोटे अनेक क्षेत्रों के बारे में। एल-ओइसंस के भूगोल के बारे में उसके निवासियों के प्रत्यक्ष हितों से इतर, हमें मानना होगा कि ज्ञानक्षेत्र को इतने छोटे और गैर-जरूरी क्षेत्र के इतने विस्तृत अध्ययन की जरूरत नहीं है। दूसरी ओर, यदि हमारे पास फ्रेंच एल्पस घाटी की संक्षिप्त जानकारी है और सर्वेक्षण बताते हैं कि यह क्षेत्र अन्य सैकड़ों क्षेत्रों से सीधे जुड़ा है तो ऐसा अध्ययन उस समस्त क्षेत्र या उसके काफी हिस्से के क्षेत्रीय भूगोल का लगभग सही अंदाज दे सकता है। हालांकि, अनुमानित तौर पर ऐसा अध्ययन मूलत: उसके प्रतिनिधि तत्वों को विश्लेषित करने की मंशा के कारण सीमित रह जाता है और उसके बाद उसकी पृष्ठ संख्या के बारे में भी सवाल उठते हैं। देमंगियन ऐसे अधिकांश अध्ययन को व्यर्थ मानते हैं क्योंकि यह महज ब्लैंचर्ड और अन्य के उन्हीं क्षेत्रों की खोज की प्रतिछवि होते हैं। अब जबकि एलिक्स के कार्य ने उनके पूर्ववर्तियों के कार्य को संपुष्ट किया, वह तथ्य कुछ और सीमित शब्दों में प्रस्तुत हो सकता था। वहीं दूसरी ओर, एक अन्य मूर्धन्य आलोचक का मानना है कि एलिक्स ने फ्रेंच एल्पस की समस्या समाधान पर अपने पूर्ववर्तियों से अधिक योगदान दिया है।

प्लात के शब्दों में, ऐसे 'माइक्रोजियोग्राफिक' अध्ययनों के खिलाफ ही अमेरिका में क्षेत्रीय भूगोल के विरुद्ध आलोचना की शुरुआत हुई थी। जाहिर है पृथ्वी के समस्त भूभाग का ऐसे छोटे-छोटे अध्ययनों से, एक विशिष्ट समय सीमा में अध्ययन पूर्णतया अव्यावहारिक होगा – और अंतिम आकलन भी विवादित होगा – आलोचकों को डर था हमारे हाथ केवल यहां-वहां से चुने हुए कुछ टुकड़े ही आएंगे। विशेष तौर पर, हालांकि, आलोचकों का कहना रहा है कि ऐसे गहन और बिखरे अध्ययनों से हम किन आम सिद्धांतों की प्राप्ति की उम्मीद कर सकते हैं। यहां तक कि माइक्रोज्योग्राफिक अध्ययन करने वाले जेम्स ने भी इस विचार के पक्ष में ही मत रखते हुए कहा है, 'जितना विस्तृत और विशिष्ट अध्ययन, नतीजे उतने ही गैर-जरूरी।'

इन सब हमलों का प्लात ने विशेषत: उग्र जवाब दिया है, जो इस संघ के समक्ष दो प्रकाशित पत्रों और अप्रकाशित वक्तव्यों में पढ़े गए। माइक्रोस्कोपिक ज्योग्राफी को एक पत्र में 'आराम से एकत्र किए गए बेतरतीब डाटा की सीमाओं के विपरीत एक तार्किक और समयानुकूल पहल है, जिसमें पर्यावरणीय थ्योरी नहीं मिलती और जो अनौपचारिक यात्राओं के अवास्तविक चिह्नों से भरा है।' इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए, भूवेत्ता मैदान

में निकलते हैं और 'मैदान में सभी भूवेत्ता सूक्ष्म होते हैं।' वहां, 'वे भूवेत्ता की उस विसंगति के सामने आते हैं जहां उस छोटे क्षेत्र को देखते हुए विशालकाय क्षेत्र का अनुमान लगाना होता है।' ऐसा नहीं है, चूंकि प्लात जोर देकर कहते हैं कि वह छोटे क्षेत्रों के विस्तृत अध्ययन को नहीं निकलते, क्योंकि अन्य भूवेत्ताओं के सैद्धांतिक निष्कर्ष उन्हें बताते हैं कि अंततः भूगोल के लिए कुछ न कुछ प्राप्ति होगी। इसके विपरीत, बड़े क्षेत्रों को समझने के अपने प्रयास ने उन्हें जिस नतीजे पर पहुंचाया, उनमें आम सर्वेक्षण और विशाल क्षेत्रों के विस्तृत अध्ययन, और केवल छोटे से क्षेत्र में ही बड़े क्षेत्रों के महीन सामान्यीकरण के पकड़ में आने वाले सापेक्षीय चित्रणों के सविस्तार आकलन शामिल हैं।

माइक्रोजियोग्राफी के बारे में प्लात की पैरवी हालांकि, सैद्धांतिक विमर्श पर आधारित न होकर हिस्पानी अमेरिकी क्षेत्र में कुछ वर्षों से उनके द्वारा किए गए कार्य पर आधारित है, जिसकी मदद से अमेरिकी भूगोल के क्षेत्र में माइक्रोजियोग्राफिक क्षेत्रीय अध्ययन की दिशा में कई कार्य हुए। इस शृंखलाबद्ध अध्ययन के बारे में उठाए गए सवालों में से अधिकांश अप्रासंगिक नजर आते हैं। इससे मुझे लगता है रियो ग्रैंड के दक्षिणी क्षेत्रों के बारे में हमारे व्यवस्थित, वस्तुपरक और स्थायी ज्ञान में वृद्धि होगी। दुनिया के विभिन्न हिस्सों के ऐसे ज्ञान की जरूरत के कारण ही बुनियादी तौर पर हमारी राय में भूगोल में प्रशिक्षित कर्मियों की जरूरत है। हिस्पानी अमेरिकी क्षेत्र के बारे में हमारी मौजूदा अपर्याप्त जानकारी के बारे में, उस क्षेत्र संबंधी कोई शुरुआती कोर्स करने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को भी पता होगा। लिहाजा, इस तरह के बिखरे क्षेत्रों के विस्तृत अध्ययनों की शृंखला से किसी 'वैज्ञानिक सिद्धांत' की उम्मीद नहीं लगानी चाहिए, या फीफर की भाषा में उसकी 'वृहद संबंधों' से जुड़ी हमारी किसी तरह की मदद करने की। इसलिए जब तक कि यह दावा न किया जाए कि समस्त भूगोल या सामान्यतः क्षेत्रीय अध्ययनों में इस तरह के 'माइक्रोजियोग्राफिक' अध्ययनों की जरूरत होती है, ऐसे प्रश्न बेमानी हैं। मूल प्रश्न है, कि हमें दक्षिणी अमेरिका के भूगोल संबंधी उचित ज्ञान की जरूरत है, तो क्या उनकी विधि इस ज्ञानार्जन के लिए उचित रहेगी?

कुछ लोग मौजूदा समय में उपलब्ध दक्षिण अमेरिका से जुड़े सामान्य सर्वेक्षणों की अपर्याप्तता पर प्रश्न करेंगे। ब्रिटिश गयाना में तटीय वृक्षारोपण पर अपने हालिया कुछ विशेष जिलों के अध्ययन में प्लात ने पाया कि महाद्वीप के उपलब्ध सर्वश्रेष्ठ सामान्यीकृत नक्शे मिट्टी, वनस्पति और वहां के जनसंख्या घनत्व के बारे में गलत सूचना देते हैं। यहां तक कि यदि हमारे पास दक्षिण अमेरिका की जलवायु, भूमि रूपों, मिट्टी, फसल, जातियां और वाणिज्य के संबंध में सटीक विस्तृत जानकारी है भी, तो ये वहां के समस्त भूगोल को नहीं जोड़ती, उस महाद्वीप के अलग-अलग भागों में क्षेत्रीय भेदभाव की स्थितियां अलग हैं। प्रांतीय स्तर तक सीमित अध्ययनों में भी अमेरिकी छात्र अक्सर चकित होता है, क्योंकि उसके पास सांस्कृतिक तत्व-परिसरों की विस्तृत जानकारी का अभाव है, जो कि उस क्षेत्र के सांस्कृतिक भूगोल की बुनियाद रहे हैं। संयुक्त अमेरिका अथवा यूरोप के क्षेत्रों के लिए, हो सकता है उसे वह जानकारी अपने कार्यक्षेत्र के गौण उत्पाद के रूप में अथवा अपनी सामान्य जानकारी से अनजाने में मिली हो। इन महत्वपूर्ण गुणों व विशेषताओं का सबसे पहले अपेक्षाकृत छोटे क्षेत्रों में अध्ययन किया जाना चाहिए, खासतौर पर दुनिया के ऐसे क्षेत्र में जहां सांस्कृतिक एकरूपता का अभाव है। अगर, तब किसी ने पनामा के एक विशेष खेत/पशुफार्म की समझ हासिल की है और कुछ इसी तरह

की विशेषताएं एक बड़े क्षेत्र में बिखरी हुई मान ली जाती हैं, तो अन्य किसी भी छोटे स्तर के उपायों की तुलना में किसी बड़े क्षेत्र के भूगोल की अधिक सही तस्वीर हासिल की जा सकती है।

जाहिर है कि इस प्रस्ताव में जरूरी अवधारणा यह है कि क्षेत्र विशेष का सूक्ष्म अध्ययन दूसरे जिले के प्रतिनिधि के तौर पर काम करेगा, जैसे कि फिंच कहते हैं, जो कि शायद ही किसी भी सूरत में प्रतीकात्मक हो सकते हैं। यदि यह प्रतिनिधि हैं, तथापि, यह कुछ सीमित मामलों में संभवतः प्रतीकात्मक होगा, पर ऐसे में हमारा यह जानना जरूरी होगा कि यह किस संदर्भ में विशिष्ट प्रतीकात्मक है। जनगणना और जलवायु संबंधी आंकड़ों, भूवैज्ञानिक, स्थलाकृति और मृदा सर्वेक्षणों द्वारा पर्याप्त रूप से कवर किए जाने वाले क्षेत्रों के उन आंकड़ों और सूचनाओं के अध्ययन से इन प्रश्नों के उचित जवाब देना संभव हो सकता है। इस संबंध में तत्व-अनुपात और आइसोप्लेथ नक्शों की उपयोगिता का पहले सुझाव दिया गया है। दूसरे क्षेत्रों में कोई भी सिर्फ एक छात्र की जमीनी टोह से बने निर्णय पर ही निर्भर रह सकता है। हालांकि ये निर्णय सिर्फ वही जवाब दे सकते हैं जो कि वैज्ञानिक निश्चितता से परे हैं।

प्लात के शायद सबसे हालिया अध्ययन में ही छोटे जिले के विस्तृत अध्ययन का संबंध बड़े क्षेत्र के जमीनी अध्ययन से स्पष्ट रूप से बताया गया है। हालांकि सूक्ष्म भौगोलिक क्षेत्र जिसका उन्होंने विस्तृत अध्ययन किया, इस मामले में 'व्यापक क्षेत्रीय प्रकार का सूचक' नहीं है। इसे एक 'सुसंगत भूभाग के एक सामान्य गुण' के रूप में दर्शाया है, जिसका दक्षिण अमेरिका के जटिल भौगोलिक आकृति में सुसंगत स्थायी जगह है। इसमें कोई संदेह नहीं कि छोटे और व्यापक रूप से अलग जिलों के उनके पिछले अध्ययन व्यापक क्षेत्रीय जानकारी निर्माण में महत्वपूर्ण हैं, जिन्हें स्पष्ट रूप से अनियमित/यादृच्छिक रूप से चुना गया है जिसे रिकॉनेसां स्टडी ऑफ हिस्पैनिक अमेरिका 'हिस्पैनिक अमेरिका के टोही/जमीनी अध्ययन' के पूर्ण प्रकाशन में स्पष्ट किया जाएगा, जिसमें इन विस्तृत इकाइयों के अध्ययन भी अभिन्न हिस्से होंगे। *(1942 में प्रकाशित, लैटिन अमेरिकाः ग्रामीण और संयुक्त क्षेत्र)*

कुल मिलाकर, कोई छात्र जो कि किसी गैर-महत्वपूर्ण छोटे क्षेत्र का अध्ययन प्रस्तुत करते हैं, उन्हें यह ध्यान रखने की जरूरत है कि केवल उस क्षेत्र विशेष को प्रस्तुत करना ही उसका उद्देश्य नहीं है, उसे बड़े भूभाग के प्रतिनिधि चरित्र का सटीक चित्रण भी करना है, जो कि इस गहन अध्ययन के लिए एक बहुत बड़ा क्षेत्र है। जब तब वह इस व्यापक उद्देश्य को अपने जेहन में रखता है, तो कोई स्पष्ट आधार नहीं है कि हम यह निर्धारित कर सकें कि कितने छोटे क्षेत्र का अध्ययन किया जा सकता है।

अपनी प्रगति जांचिए

2. मध्य पश्चिम के भू-विज्ञानियों ने किस वर्ष से भू-भागीय मानचित्रण की समस्या पर ध्यान केन्द्रित करना आरंभ किया?

(क) 1913 (ख) 1923

(ग) 1943 (घ) 1945

2.4 क्षेत्र की अवधारणा

टिप्पणी

स्थानिक विश्लेषण सकारात्मक विचारधारा का प्रतिफल है तथा यह मात्रात्मक क्रांति से एकीकृत है। स्थानिक विश्लेषण को, अंतरिक्ष विज्ञान तथा ज्यामितीय तकनीक के रूप में विचारा जाता था जिस पर राज्य की तुलना में अधिक बल दिया जाता था। इसने प्रणाली दृष्टिकोण को भी अपनाया है। यह अनुभवजन्य अवलोकन पर आधारित था। इसने महत्वपूर्ण अवलोकनों को अंतरिक्ष ज्यामिति के रूप में रूपांतरित किया।

बंग ने स्थानिक विश्लेषण को ऐसे एकमात्र पद्धतिशास्त्र के रूप में अपनाया जिसने भूगोल को भौतिक विज्ञान के समतुल्य रखा। नील हार्वे ने स्थानिक विश्लेषण की मदद से अंतरिक्ष के अध्ययन की परम्परा की शुरुआत की। हेगेट ने पृथ्वी को अध्ययन की रूपरेखा के रूप में विचारा जहां घटना का स्थान भूमि का प्रमाणांकन है। स्थान, घटना की नजदीकी सूत्र से संबध जोड़ने में मदद करती है। वर्तमान परंपरा अंतर्निहित स्थानिक विश्लेषण को नहीं मिलाती। पृथ्वी पर तीव्र गति से घटित होने वाली घटनाओं के कारण इसे निरर्थक माना जाता है।

साथ-साथ, स्थानिक विश्लेषण तथा भू-दृश्य दृष्टिकोण में अक्सर यह देखा जाता है कि तीन में से एक दृष्टिकोण मानव भूगोल को समझने की चेष्टा करता है। यह निश्चित ही भूगोल संबंधी प्रश्नों के उत्तर देने का प्राचीनतम पाश्चात्य तरीका है जो ग्रीक के माइलटस, हेकेटस तथा स्टाब्रो से प्रारंभ हुआ। स्टाब्रो के शब्दों में, भूगोलवेत्ता वे हैं जो भू-भाग की व्याख्या करते हैं। परंतु यह विवेचना विभिन्न क्षेत्रों की विशिष्टताओं को स्पष्ट नहीं करती। पृथ्वी की इन विशेषताओं के अध्ययन का उद्देश्य अत्यधिक राजनीतिक तथा सैन्य महत्व का था। बल्कि विभिन्न परिस्थितियों तथा अवधारणाओं के द्वारा पुनर्जीवित हुआ। स्थानिक अर्थ में चिंतन के लिए भूगोल के प्रयोग का ज्ञान आवश्यक होता है। यह छात्रों को विश्व से संबंधित प्रश्नात्मक दृष्टिकोण को अपनाने में, मानव, स्थान एवं पर्यावरणों के संबंध में क्या, कहां तथा क्यों पूछने में समर्थ बनाती है। स्थानिक चिंतन, स्थानिक संगठनों के संदर्भ में विभिन्न स्थानों में घटित होने वाली घटनाओं के परिणाम ज्ञात करने के लिए तथा कारण के अनुमान के लिए छात्रों को कई महत्वपूर्ण प्रश्नों के हल में सक्षम बनाती है। स्थानिक विचार तथा सामान्यीकरण विश्व को स्थानीय से विश्व स्तर तक सभी पैमानों से मापने का सशक्त उपकरण है। यह वह ईंट है जिससे भूगोल संबंधी ज्ञान का विकास होता है। स्थानिक दृष्टि से चिंतन पृथ्वी पर मानव, स्थान तथा पर्यावरण की व्याख्या तथा विश्लेषण में समर्थ होता है। यह वह क्षमता है जो मनुष्य को भूगोल संबंधी ज्ञान में शिक्षित बनाती है।

भूगोलवेत्ता पृथ्वी की सतह की विशेषता तथा वह क्रियाएं जो पृथ्वी की सतह पर घटित होती हैं दोनों की व्याख्या करते हैं। ये घटनाएं भौतिक (भौगोलिक स्थिति, प्रवाह, नदी, जलवायु, वनस्पति के प्रकार, मिट्टी) मानवीय (नगर तथा शहर, जनसंख्या, राजमार्गों, रोगों के फैलने, राजकीय उद्यान) या मानवीय या भौतिक दोनों (समुद्र तट का जलवायु प्रत्यावर्तन, नक्शानवीसी, प्रमुख जनसंख्या केन्द्र) हो सकती हैं। ये भौतिक तथा मानवीय घटनाओं को नियमित तथा आवर्ती क्रम में स्थापित तथा व्यवस्थित करती हैं।

स्थानिक संगठन की रूपरेखा की विवेचना इसे इन सरलतम रूपों में विभाजित कर देती है: बिन्दु, रेखाएं, क्षेत्र तथा विस्तार। ये चार तत्व किसी विषय के स्थानिक गुणों की

टिप्पणी

व्याख्या करते हैं: एक स्कूल को एक बिन्दु के रूप में विचारा जा सकता है जो एक सड़क (जो एक रेखा है) के द्वारा जुड़ी है, जो एक उद्यान या मुहल्ले (जो क्षेत्र हैं) में स्थित है तथा उद्यान में स्थित झील को विस्तार के रूप में लिया जा सकता है। पैटर्न के तत्वों में संबंध स्थापित करने के लिए इस व्याख्यात्मक प्रक्रिया में अगला चरण इन अवधारणाओं का स्थान, दूरी, दिशा, घनत्व तथा व्यवस्था के रूप में प्रयोग है (रैखिक, ग्रिड जैसी, अनियमित)। अत: यू.एस. की अंतर्राज्यीय राजमार्ग व्यवस्था एक क्षेत्र में रेखा से जुड़े बिन्दु के रूप की व्याख्या कर सकती है- व्यवस्थापन आंशिक रूप से ग्रिड जैसी होती है (संयुक्त राष्ट्र में स्थित उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम मार्ग) या फिर आंशिक रूप से त्रिज्या अथवा तारे के आकार का जैसा कि अटलांटा में स्थित राजमार्ग तथा अभिरुचियों का पैटर्न पश्चिम की तुलना में पूर्व की सघनता का आकलन है।

स्थानिक संगठन के पैटर्न के विश्लेषण की प्राप्ति इन अवधारणाओं के उपयोग से प्राप्त होती है। उदाहरण के लिए, पैटर्नों तथा विश्व के कार्य के लिए गति तथा प्रवाह, विस्तारण, दूरी की लागत, शृंखला, संपर्क कड़ी, कारण के विश्लेषण की योग्यता। भौतिक पैटर्न के मामले में यथा नदी प्रणाली, इसमें एक जटिल शृंखलात्मक व्यस्थापन है जो छोटी धाराओं को नालों, तालाबों के साथ बड़ी नदियों तथा तालाबों से जोड़ती है, का सम्पूर्ण योग है। प्रवाह तथा नदी की लम्बाई, चौड़ाई, फैलाव, गति, नाले के क्षेत्र के बीच स्थानिक संबंध है। नदी प्रणाली में ऐसे क्रमिक परिवर्तन जलवायु, भौगोलिक स्थिति तथा भूगर्भ से संबंधित हैं।

भूगोल में यह विश्वास निहित है कि धरती पर घटित होने वाली मानवीय तथा भौतिक घटनाओं का एक पैटर्न, नियमितता का कारण होता है और कुछ स्थानिक संरचनाएं तथा स्थानिक प्रक्रियएं होती हैं जो इन्हें आगे बढ़ाती हैं। छात्रों को विश्व के स्थानिक संगठन के सभी पक्षों के चिंतन के लिए अवश्य प्रोत्साहित करना चाहिए। पृथ्वी की मानवीय तथा भौतिक विशेषताओं के व्यवस्थापन तथा वितरण का ज्ञान क्षेत्रों के अध्ययन तथा अवलोकन पर आधारित आंकड़ों के विश्लेषण, मानचित्रों के अध्ययन, अन्य भौगोलिक तत्वों तथा भूगोल संबंधी प्रश्नों और उनके समाधान पर निर्भर करता है।

स्थानिक संबंध, स्थानिक संरचना तथा स्थानिक प्रक्रिया को उनके अस्पष्ट परिचय के बाद भी सरलता से समझा जा सकता है। उदाहरण के लिए धरती की सतह पर मानवीय स्थानिक संगठन कुछ बड़े शहरों का पैटर्न है जो ज्यादा स्थान घेरते हैं तथा कई छोटे नगर हैं जो उनके समीप स्थित हैं। इन शहरों के तुलनात्मक अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि बड़े शहर अधिक वस्तुओं तथा सेवाओं को प्रस्तुत करते हैं जबकि छोटे शहर कम वस्तुओं तथा सेवाओं को प्रस्तुत करते हैं। साथ में, विवेचना तथा विश्लेषण यह बताते हैं कि उपभोक्ता कहां खरीदारी करते हैं और क्यों करते हैं, क्यों वे विभिन्न स्थानों से विभिन्न वस्तुओं को खरीदते हैं तथा स्थानिक पैटर्न में परिवर्तन क्यों होता है।

स्थानिक संगठन की समझ भूगोल के ज्ञाताओं को तीन मूलभूत प्रश्नों के निराकरण में मदद करती है। क्यों इन स्थानों पर इस प्रकार की घटनाएं घटित होती हैं? ये पैटर्न महत्वपूर्ण क्यों हैं? स्थानिक संगठन के पैटर्न का विश्लेषण और व्याख्याओं का मापन स्थानीय से विश्व स्तर तक का होना चाहिए। छात्र एक ऐसे विश्व को देखते हैं जो परस्पर

टिप्पणी

अंतर्संबंधित हैं। व्यापक रूप से अलग स्थान परिवहन तथा संचारतंत्र के विकास के परिणाम से अंतर्संबंधित है। एक स्थान के मानवीय निर्णय का अन्य स्थान पर भौतिक प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए कोयला जलाने का निर्णय अन्य स्थानों को भौतिक रूप से प्रभावित करता है जिसके परिणामस्वरूप अम्लवृष्टि सैकड़ों मील दूर की वनस्पतियों को नष्ट कर सकती है।

इन स्थानिक सूत्रों के ज्ञान के लिए छात्रों का स्थानिक अवधारणाओं तथा मॉडलों से अवगत होना आवश्यक है जिसका उपयोग स्थानिक संगठनों के पैटर्न के विश्लेषण तथा व्याख्या के लिए किया जा सके। इस ज्ञान को छात्र तत्काल अनुभवों से प्राप्त कर सकते हैं जो उन्हें पृथ्वी पर घटित होने वाली भौतिक तथा मानवीय घटनाओं के व्यवस्थापन को समझने की क्षमता प्रदान करता है।

क्षेत्रीय विशिष्टीकरण

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि- हेसातुस तथा स्टाबो के शोध क्षेत्रों में अध्ययन की इकाई विकसित हुई। इसे भूगोल में क्षेत्रीय दृष्टिकोण की उत्पत्ति के रूप में देखा जा सकता है। अरब क्षेत्र किश्वर क्षेत्रों में विभाजित था जिसे क्षेत्र के अध्ययन के प्रथम आविर्भाव के रूप में लिया जा सकता है। कांट ने अंतरिक्ष की विशेषताओं के अध्ययन पर बल दिया। यह कुछ और नहीं क्षेत्रीय विभेदन का ही विचार था। कांट अपवादवाद के जनक के रूप में जाने जाते हैं जहां अपवादवाद प्रदत्त क्षेत्र के विशिष्ट गुणों को प्रस्तुत करता है।

जीव-भूविस्तारण विश्लेषण जो स्टाब्रो के दर्शन में व्यक्त हुआ उसके विस्तृत विश्लेषण की अभिव्यक्ति कांट के दर्शन में होती है। तत्पश्चात् जीव-भूविस्तार का विकास हेइत्नेर के विचारों में हुआ जिसने क्षेत्र के वैज्ञानिक अध्ययन को अर्थपूर्ण बनाया। उसी समय 1939 में हर्त्शोरने ने अपनी पुस्तक 'मानव भूगोल के परिप्रेक्ष्य में' क्षेत्रीय विभेदन की अवधारणा को प्रस्तुत किया।

क्षेत्रीय विभेदन स्थान के विशिष्ट गुणों तथा उसकी विलक्षणताओं के अध्ययन का अनुमोदन करता है जो आस-पास व्याप्त समानताओं में विभेदन करता है। यह घटनाओं के परिवेश का अध्ययन है। वह स्थान को स्वयं एक तत्व के बजाय एक फ्रेमवर्क के रूप में विचारता है जहां भौगोलिक घटनाएं स्थित होती हैं। क्षेत्रीय विभेदन के क्षेत्रीय दृष्टिकोण तथा वैचारिक तकनीक भूगोल के विरुद्ध है जो क्षेत्रों के अध्ययन की बजाय स्थानिक विज्ञान के तौर पर जाना जाता है।

वह क्षेत्रीय संश्लेषण को किसी क्षेत्र को निश्चित करने की तकनीक के तौर पर अथवा एक क्षेत्र को दूसरे से पृथक करने के अर्थ में विचारता है। यहां यह दर्ज करने योग्य है कि यहां स्थान को सीधे तौर पर विभाजित नहीं कर दिया जाता बल्कि यह विभाजन स्थान तथा घटना के बीच का है।

प्रादेशिक संश्लेषण

अपनी विशेषता की दृष्टि से क्षेत्रों को सापेक्ष समरूपता तथा विविध गुणों के स्थान के रूप में परिभाषित किया जाता है। क्षेत्रीयता में निम्नलिखित गुण पाए जाते हैं-

1. क्षेत्रीयता में स्थान, स्थान अध्ययन की एक रूपरेखा है, न कि कोई वस्तु अथवा स्वयं में कोई घटना। यह एक काल्पनिक गति है जहां वस्तु तथा घटनाएं स्थित

टिप्पणी

होती हैं। यह भौतिक वास्तविकता से कहीं ज्यादा मानसिक रचना है। यह अमूर्त है।

2. क्षेत्रीयता में स्थिति निश्चित होती है। आस-पास की वस्तुओं से उसके संबंधों को सदैव विश्लेषित किया जाता है इसलिए ये स्थान से अलग हैं परंतु ये एक साथ नहीं पाई जाती। स्थिति सदैव स्थान के बीच ही पाई जाती है जब तक कि स्थान एक रूपरेखा है।
3. क्षेत्र अपने स्वयं की स्थानिक विलक्षणता से विवेचित होता है।
4. क्षेत्र समेकित गुणों के आधार पर पाए जाते हैं जो समेकित समग्र की रचना करते हैं। इस समग्र को संश्लेषित क्षेत्र के नाम से संबोधित किया जाता है।

क्षेत्र की सीमाएं होती हैं इसलिए क्षेत्रों को कार्य तथा रूपात्मक क्षेत्र के रूप में विभाजित किया जाता है। रूपात्मक क्षेत्र में रैखिक सीमा की स्थिति होती है। कार्यात्मक क्षेत्र में रैखिक सीमा की स्थिति नहीं होती। क्योंकि इनके मध्य अंत:क्रियाएं होती हैं तथा यह बाह्‌य घटनाओं पर निर्भर करती है। जैसे औद्योगिक क्षेत्र, प्राकृतिक क्षेत्र, पारिस्थितिक तंत्र विश्लेषण। कार्यात्मक क्षेत्र में परिवर्ती सीमाएं होती हैं। क्षेत्रीय संश्लेषण, एक जैसी एकीकृत विशेषता को प्रस्तुत करने के लिए तीन तकनीकों पर आधारित होता है।

(क) घटना एवं गुणों को ज्ञात करना तथा उसकी स्थिति को जानना।

(ख) एकत्रित गुणों की प्राथमिकताओं को तय करना।

(ग) गुणों का प्रसंस्करण।

1972 के बाद मानवीय व्यवहार भूगोल के पुनरुद्धार के बाद क्षेत्रीय दृष्टिकोण को भूगोल के अध्ययन में सबसे सक्षम तकनीकी तौर पर प्रतिबंधित कर दिया गया। परंतु 1950 से 1972 के बीच मात्रात्मक क्रांति ने क्षेत्रीय विभेदन तकनीक का पूर्ण समर्थन किया। उसके बाद से यह व्यवस्था विश्लेषण पर आधारित है तथा क्षेत्र के गुणों के अध्ययन पर विश्वास रखती है। संयुक्त राष्ट्र से निष्कासित जर्मनी का रिफ्‌यूजी जिसका नाम शेफर था, ने क्षेत्रीय विभेदन को भूगोल में अपवादवाद कहकर इसका विरोध किया। उसने यह प्रचारित किया कि भूगोल अपवादवाद का या किसी विलक्षण घटना का अध्ययन नहीं है क्योंकि ये निश्चित नियम की अपेक्षा अपवाद होते हैं। भूविज्ञान में विचारों का सामान्यीकरण होना चाहिए जो मानव तथा प्रकृति के संबंध की व्याख्या कर सके। वे भौतिक तथा मानवीय भूगोल में एकरूपता में विश्वास करते थे।

क्षेत्रीय दृष्टिकोण के कारण वर्तमान चलन क्षेत्रीय विभेदन, क्षेत्रीय असमानता के रूप का समर्थन करता है। यहां कुछ बिंदु, महत्वपूर्ण हैं-

1-सामान्य व्यवस्था का दृष्टिकोण असाधारण घटनाओं की व्याख्या नहीं कर सकता। सरकारी योजनाओं के पालन में, किसी क्षेत्र विशेष में अथवा किसी लक्षित योजना के क्रियान्वयन में।

2-वर्तमान की प्रासंगिक पद्धतियां भी क्षेत्रीय विभेदन के अवधारण की मांग करती हैं क्योंकि तेजी से उभरते विश्व तथा नवीन समकालीन विषय की व्याख्या क्षेत्रीय विभेदन के आधार पर ही की जा सकती है। साधारणतया इस प्रश्न से कि किस प्रकार एक क्षेत्र अन्य से अलग होता है।

टिप्पणी

सदी परिवर्तन के साथ ही क्षेत्रीय विभेदन, भूगोल के वास्तविक विषय से संबंधित विवाद के आसपास घिरा रहा है। इस विचार के कट्टर समर्थक रहे रिचर्ड हर्त्शोरन थे, उन्होंने भूगोल की परंपरा की अपनी पुस्तक 'वर्क द नेचर आफ ज्योग्राफी' के आलोक में पुनः व्याख्या प्रस्तुत की। उत्तरकालीन विचारधाराओं में हर्त्शोरन अवधारणाओं में विशेषता की कमी से असंतुष्ट थे। फिर भी, लगातार वर्तमान के भूगोलवेत्ताओं के कार्यों का स्पष्टीकरण प्रस्तुत करते रहे।

कई वर्षों तक हर्त्शोरन एंग्लो-अमरीकन परंपरा के प्रमुख विचारकों में से एक रहे। उनके लिए 'भूगोल क्षेत्रीय विभेदन का अध्ययन है।' क्षेत्रीय विभेदन सर्वाधिक चिह्नित तथा राज्य क्षेत्रों के स्तर पर भूमि की इकाई के रूप में महत्वपूर्ण, दोनों हैं। हर्त्शोरन इस नतीजे पर पहुंचे कि जैविक नियतत्ववाद तथा जर्मनी की मानवशास्त्रीय परंपरा जिसकी स्थापना रेटजेल द्वारा की गयी, वास्तव में राजनीतिक भूगोल को बदनाम करने के लिए की गयी थी। इस परंपरा को छद्म वैज्ञानिक (जीववाद के अर्थ में राज्य की कल्पना, डबल्यू डबल्यू आई आई तथा नाजी शासन की ज्यादतियों के बाद आक्रामक हो गया) कहकर आक्रमण किया। हर्त्शोरन यह तर्क देते हैं कि एक व्यवस्थित कार्यप्रणाली वस्तुनिष्ठ रूप से सत्यापित तथ्यों पर आधारित होती है। हर्त्शोरन का एक अन्य शोध इस दृष्टिकोण पर आधारित है कि ''सीमाएं अच्छी तरह स्थापित परिदृश्यों का अध्ययन है।'' उन्होंने यह विचार रखा कि ''राजनीतिक सीमा तथा सांस्कृतिक परिदृश्य की अंतःक्रियाएं क्षेत्रीय विभेदन के महत्वपूर्ण स्रोत थे।''

1936 में लिखे गए एक लेख में हर्त्शोरन ने यह विचार रखा कि सीमाओं तथा उनके परिदृश्यों को अग्रणी, पूर्वपद, उत्तरगामी, अनवरत, आरोपित अथवा स्मृतिचिह्न के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। तथापि, इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण तर्क वह यह देते हैं कि ''कार्यों का विश्लेषण ज्यादा स्पष्ट रूप से राज्य की क्रियात्मकता को अर्थपूर्ण प्रसंग में वैज्ञानिक दृढ़ता प्रदान करेगा। इस प्रकार्यवादी परिप्रेक्ष्य में, विश्वसनीय शोध प्रश्न कई ऐसे तत्वों से संबंधित हैं जो राज्य की अखंडता का निर्धारण करते हैं: अपकेन्द्रित (एकीकरण) शक्तियां समय के साथ इसकी भौतिक परिरेखाओं, आंतरिक राजनीतिक जीववाद तथा बाह्य संपर्कों को परिभाषित करती हैं। हर्त्शोरन के अनुसार, ''राज्य के क्षेत्र, व्यावहारिक तथा शैक्षणिक दोनों ही अर्थ में महत्वपूर्ण हैं'' प्राथमिक रूप से उसके कार्यों के संदर्भ में, अर्थात राज्य क्षेत्र, एक समग्र के रूप में अपने अंश को तथा एक समग्र के रूप में अन्य क्षेत्रों को किस अर्थ में लेता है। फलस्वरूप, हम इस निर्णय पर पहुंचते हैं कि क्षेत्रीयता वैज्ञानिक रूप से विश्वसनीय है तथा राज्य क्षेत्र के अध्ययन में वास्तविक दृष्टिकोण को रखती है क्योंकि यह उन घटनाओं से प्रारंभ करती है जिनसे हम सबसे ज्यादा संबंधित हैं। इनकी संरचना तथा अंतर्वस्तु, जेनेसिस इनसोफर के ऐतिहासिक तथ्यों का उपयोग करके हो सकती है।

उन्नीसवीं शताब्दी तथा बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में जब भूगोल के अधिकांश वैचारिक विवाद, क्षेत्र की आवधारणा पर आधारित थे, पॉल विडाल डी ला ब्लाश तथा अलफ्रेड हेत्नर जैसे भूगोलवेत्ता क्षेत्रीय संभावनाओं के प्रमुख प्रतिनिधि थे। क्षेत्रीय प्रबंधन के प्रसंग में भूगोल का एक प्रभावशाली आधुनिक कथन हेत्नर के विशेष तर्कों में निगमित होता है जिसकी स्थापना रिचर्ड हेत्नर की पुस्तक 'द नेचर आफ ज्योग्राफी' में की गई। यह आमतौर पर देखा गया कि भूगोल किस प्रकार विलक्षण क्षेत्रीयता की

टिप्पणी

घटनाओं के सह परिवर्तन की विश्वसनीयता को दर्शाता है यह क्षेत्रों की पहचान के बाद ही समझा जा सकता है। हेटनर के क्षेत्रीय विभेदन शब्द का पुन: उपयोग तथा उनकी घटनाओं की घोषित उपेक्षा इस प्रकार की वैचारिक व्याख्या को बहुत अच्छी तरह व्यक्त कर सकती है। तथापि, क्षेत्रों की पहचान के लिए स्थान में अंतर होने के बाद भी समानताओं की खोज जरूरी है। इसलिए, क्षेत्रीय विभेदन समानताओं की स्थापना के कोण तथा क्षेत्रों में अंतर से संबंधित है। हार्ट्शोने के आलोचकों ने उन्हें (सैद्धांतिक रूप से क्षेत्र के स्थानिक विश्लेषण की दृष्टि से) स्थिति को विलक्षण और परंपरागत क्षेत्रीय भूगोल के औचित्य को सही ठहराने का दोषी बताया जिसमें क्षेत्रीय विभेदन क्षेत्रीय एकीकरण के मूल्य पर भूगोल पर हावी हो जाता है। यह विचार क्षेत्रीय विभेदन को भौगोलिक पैटर्न के अधिक व्यापक आग्रह के मूल्य पर क्षेत्र की विशेषता तथा इस प्रकार के स्थानिक वितरण के कारणों से जोड़ता है। भूगोल को स्थानिक विज्ञान के रूप में परिभाषित करना क्षेत्र के केन्द्रीय विषय को घटना से जुड़े क्षेत्र के रूप में स्थानिक समूहों से दूर कर देता है।

1980 में क्षेत्रीय विभेदन मानवीय भूगोल के लिए केन्द्रीय परिप्रेक्ष्य के रूप में सामने आया। यह पुनरुद्धार न तो पुराने विवादों से सीधा संबंधित था जैसा कि हार्ट्शोर्न और उनके आलोचक के मध्य था और न ही अखंड था। वास्तव में, इस पुनरुद्धार में कम से कम तीन खास बौद्धिक स्थितियां थीं जिसमें से किसी की अवधारणा तथा शब्दावली समान नहीं थी। पहला स्रोत विचारों के प्रवाह से व्युत्पन्न था जिसे मानवीय भूगोल के रूप में सम्मिलित किया गया। स्थानों की सामाजिक संरचना पर उनके विचार, मानवीय क्रियाओं की परिस्थिति पर, स्थान की भावना पर, परिदृश्य के प्रतिरूपीकरण पर केन्द्रित था। जिससे, विशेष भौगोलिक संदर्भों अथवा स्थितियों तथा आम सामाजिक जीवन के मध्य संबंध स्थापित करने में बल मिला। पुनरुद्धार का दूसरा स्रोत असमान विकास के विश्लेषण तथा भूगोल के निवेश स्तर का है जो बहुधा श्रम के स्थानिक विभाजन के परिवर्तन के विचार से जुड़ा है जो भौगोलिक रूप से अविभेदित पूंजीवाद के मॉडल को खारिज कर देता है। अनेक भूगोलवेत्ताओं ने मार्क्सवादी भूगोल की अवधारणाओं को अपनाने का प्रयास किया। आर्थिक गतिविधियों में स्थानिक विविधता की व्याख्या के लिए, भूगोल की, सामान्य प्रक्रियाओं को विशेष परिस्थितियों से जोड़ने से संबंधित एक चिंता थी।

तीसरा स्रोत सामाजिक विज्ञानों में प्रासंगिक सिद्धांतों की रचना का प्रयास था जिसमें भूगोल की दृष्टि से स्थान या क्षेत्र को मानवीय एजेंसी तथा सामाजिक संरचना के मध्यस्थ के रूप में विचारा जाता है। इसलिए, यह समाज की उत्पत्ति की ओर सीधा संकेत करता है।

संरचनात्मक सिद्धांत तथा समय-भूगोल का प्राक्कथन विशेष रूप से इस क्षेत्रीय विभेदन की परंपरा की दिशा को परिभाषित करने से प्रभावित रहा है।

तृतीय विचारधारा को शेष दो की एकीकृत सम्भाव्यता के रूप में देखा जा सकता है और इसमें यह एक ही समय में क्षेत्र के विषयगत अनुभव तथा वस्तुनिष्ठ निर्धारण दोनों से संबंधित है। परंतु, इन तीन दिशाओं में कुछ दार्शनिक भेद हैं जो इनके बीच की संश्लेषणात्मक सम्भाव्यता को कम कर देते हैं। यद्यपि हाल ही में एक श्रेष्ठ प्रयास में

इन तीनों दिशाओं को समवेत करने का एक श्रेष्ठ प्रयास किया गया। पहली दिशा विशेषाधिकार के लिए जानी जाती है। द्वितीय दिशा मानव के उस स्थान का व्यक्तिपरक अनुभव है जहां दो अन्य सामाजिक-स्थानिक प्रक्रियाओं की वस्तुनिष्ठता स्थान के विभाजन को दिखाती है, तृतीय दिशा के लिए स्थान की भावना इन प्रक्रियाओं द्वारा रचित परिस्थितियों के आधार पर जाग्रत होती है। द्वितीय तथा तृतीय दिशा का सहसंबंध है जो सामान्य प्रक्रिया को कल्पना तथा आकस्मिकताओं से ठोस आधार पर जोड़ती हैं।

दुविधा पुनरुद्धार के तत्वों के बीच अभिसरण को सीमित करना शुरू कर देती है, जिनमें से एक विचार तथा प्रस्तुति की विश्लेषणात्मक तथा कथा सुनाने की विधि के बीच का तनाव है। इसके अलावा क्षेत्रीय विभेदन की प्रस्तुति में, प्रक्रिया की बहुस्तरीय प्रकृति इसे कम ध्यान आकर्षित करने योग्य बना देती है। प्रदत्त घटनाएं (जैसे नये काम, बेरोजगारी या फिर किसी राजनीतिक दल के लिए मतदान) विभिन्न समय अंतराल में एकत्रीकरण के विभिन्न भौगोलिक स्तरों को दर्शाती हैं जिसका कारण है स्थानीय के स्थान परिवर्तन का संतुलन तथा अतिरिक्त स्थानीय प्रभाव। इन क्षेत्रीय अध्ययनों में ये विशेष समस्याएं हैं जो स्थानीय के द्वारा बंधी होती हैं। अंतिम तथा अत्यंत चुनौतीपूर्ण दुविधा है जब किसी क्षेत्र के सामाजिक समूह गतिशील हों तथा लोगों, वस्तुएं तथा निवेश क्षेत्र तथा स्थान की विशेषताओं को एक समय में दूसरे परिवर्तित करें तो एक स्पष्ट सीमा रेखा का निर्धारण किस प्रकार किया जा सकता है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. निम्न में से किसने स्थानिक विश्लेषण को ऐसे एकमात्र पद्धतिशास्त्र के रूप में अपनाया जिसने भूगोल को भौतिक विज्ञान के समतुल्य रखा?

   (क) बंग (ख) नील हार्वे

   (ग) हेगेट (घ) अल्फ्रेड हेत्नर

4. निम्न में से किसने स्थानिक विश्लेषण की मदद से अंतरिक्ष के अध्ययन की परंपरा की शुरुआत की?

   (क) हेगेट (ख) बंग

   (ग) नील हार्वे (घ) स्टाब्रो

2.5 क्षेत्रीयकरण की अवधारणा

क्षेत्रों का विषय भौगोलिक विचार का केंद्र रहा है। इसकी पहली वजह है उसके अवलोकन का महत्व और उसका परिणाम और दूसरी पारंपरिक भूगोल में वर्गीकरण जिसका अनुभववाद द्वारा महत्व और कार्यक्षेत्र सर्वेक्षण में उसकी प्रमुखता। क्षेत्र शब्द की उत्पत्ति पुरानी फ्रेंच भाषा से हुई है और इसका मूल रूप लैटिन के रिजियो से लिया गया है जिसका अर्थ है 'निर्देशन और जिला' और रिजेयर का अर्थ है शासन करना या निर्देश देना और इस प्रकार इसको राजनीतिक आयाम दिया गया है। आधुनिक वेत्ताओं का मानना

टिप्पणी

है कि क्षेत्र एक मध्य आकार का आधुनिक तत्व है (स्थानीय और राष्ट्रीय स्तर में), जो कि भिन्न हो सकते हैं। एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश और एक अवधि से दूसरी अवधि। क्षेत्र इस्तेमाल किए जाने वाले राजनीतिक तत्व भी हो सकते हैं, उदाहरण के लिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा, जिसने विश्व को निश्चित रूप से आकार में भिन्नता के साथ क्षेत्रों में बांटा है। इस शब्द के तहत यह संभव है कि राज्यों का एक समूह नियुक्त कर दिया जाए, या फिर एक महाद्वीप समूह जैसे कि मध्य पूर्वी या दक्षिणी पूर्वी एशिया और ये क्षेत्रीय सत्ता क्षेत्रीय विरोध की भी तरफ इशारा करते हैं । इसके अलावा पारंपरिक परिभाषा से अब यह शब्दावली बदल चुकी है। इसमें राजनीतिक और शहरी, प्राकृतिक, रेगिस्तान और जंगली स्थानों का भी आनुपातिक आयाम का समावेश हो चुका है। क्षेत्र का विषय भूगोल के फ्रेंच स्कूल के हृदय में है। पॉल विडाल डी ला ब्लाश (1845-1918), एक फ्रेंच भूगोलवेत्ता, पहले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने क्षेत्र के विषय को औपचारिक रूप दिया। उनके लिए यह एक प्राकृतिक स्थान था जो कि रुचिकर दृश्य में बदल गया मानवीय कार्यकलाप और प्राकृतिक पर्यावरण की आपसी संबंधता के परिणाम से। संयुक्त राष्ट्र में 20वीं सदी में क्षेत्रों के विकास का विषय स्वीकृत किया गया और व्यवहार में लाया गया। राष्ट्रपति वुड्रो विलसन के प्रशासन में (1856-1924) ईसाइया बैमैन, अमेरिकन भोगोलिक समाज के निर्देशक और क्षेत्र विशेषज्ञ को वरसेलिज शांति सम्मेलन में प्रथम विश्व युद्व को समाप्त करने के लिए प्रादेशिक सलाहकार चुना गया। यूरोप में भूगोलवेत्ताओं को बहुत से देशों से गोपनीय राजनीतिक पुनः संगठन पर विचार विमर्श करने के लिए बुलाया गया। पारंपरिक भूगोल जिसे कि क्षेत्रों के वर्गीकरण के विज्ञान की व्याख्या भी कहते हैं, 1960 में इसकी आलोचना की गई, और एक नए वर्गीकरण को जन्म दिया गया, जैसे कि संरचनात्मक वर्गीकरण विज्ञान औपचारिक, क्रियाशील, केंद्रीय, निष्पक्ष क्षेत्रों का विभेदन करता है। क्षेत्रों का विषय भूगोल में स्थान विभेदन और जीव-भूविस्तार से संबंधित है।

यहां पर संबंधित क्षेत्रों के विशिष्ट तत्व हैं। जबकि, क्षेत्रीय अभिलक्षण बीजकोष से दूरी बढ़ने के साथ अपनी विशिष्टता खोते जा रहे हैं। डेविड बी ग्रिग (1965) ने क्षेत्रीयकरण और वर्गीकरण में समानता का परीक्षण किया और क्षेत्रीय वर्गीकरण विज्ञान के आधार का औपचारिक निर्माण नियमों की प्रणाली के लिए समर्थन किया। इसके विपरीत, क्रियाशील क्षेत्र मानवीय स्थानों के संगठन से संबंधित हैं। इन्हें इस तरह से परिभाषित किया गया है कि ऐसे स्थान जिनमें उच्च दर्जे की आपसी सामाजिक लाभकारी अंत:क्रिया वास्तव में होती हो बाहरी स्थानों के मुकाबले। यह क्रियाशील भूगोल क्षेत्रीय विज्ञान के स्थान में सम्मिलित होता है। केंद्रीय क्षेत्र 1950 में मिलाया गया, जब डरवेंट विटलीसी (1954) में मुख्य भागों का विकास (कोर) और क्षेत्रीय प्रमुखता नेटवर्क के विषय का विकास किया। इसलिए 1950 से विभिन्न क्षेत्रों के विकास के विषय ने योजना और तैयारी और क्षेत्रीय पॉलिसी को व्यवसायी और सेवा प्रदान करने वालों द्वारा लागू करने की ओर अग्रसर किया। 1980 में गैर कार्यशील सूत्रण उठ खड़ा हुआ और क्षेत्रीय भूगोल के स्थान में क्षेत्रों के नवीनीकरण के लिए संपर्क किया। टोरस्टन हेगरस्ट्रेंड ने स्थानिक विश्लेषण में समय-भूगोल के विषय का विकास किया। सामयिक परिवर्तन के महत्व को स्थान के नियम संग्रह में विभिन्न तराजूओं पर दिखाने के लिए। इसी जानकारी को आगे बढ़ाते हुए निजल थ्रिट ने क्षेत्र की कल्पना की

है एक माध्यम की तरह, जो कि मानवों के मिलने का स्थान है और सामाजिक ढांचा है। वह एंटोनी गिडेन्स (1984) के स्ट्रक्चरिंग थ्योरी के कार्य से भी प्रेरित हैं। एलैन प्रेड (1984) ने क्षेत्र का योजनाबद्ध सांचा एक प्रक्रिया की तरह बनाया मारकिस्ट ने भूगोल के लिए एक नया रास्ता बनाया विशेषकर मजदूर दल को बांटने, पूंजीनिवेश की परतें और असामान्य विकास के लिए। ये सारे विषय सामाजिक व्यवहार पर ज्यादा जोर देते हैं। यह ध्यान देना रुचिकर है कि कैसे क्षेत्रों की जानकारी संचार और खबरों की डिजीटल टेक्नोलोजी के साथ जीवित रहती है और शहरों की बढ़ती हुई भूमिका के साथ जो कि अर्थशास्त्र के नए अभिनेताओं को सुविधाजनक मुलाकात के लिए सार्वभौमिक पर्यावरण में मिलने का अवसर देती है।

क्षेत्रीयकरण और उसके तरीके

क्षेत्रीय छानबीन विभिन्न स्तरों पर होती है, जो कि एक आम जगह का अनुभव भी है और विभिन्न स्थानों का भी, या फिर कारणों का संक्षेप में अनुसंधान, आपसी संबंध और प्रभाव। इसका लक्ष्य चाहे जो भी हो, इसे जरूरी वस्तुओं की आवश्यकता होती है। क्षेत्रीय समस्या को खड़ा करने के लिए अनोखे तथ्य को किसी एक समय में जांच लेना यह काफी नहीं है। यह जान लेना जरूरी है कि वह अनोखा तथ्य केवल वहीं पर विद्यमान है या फिर स्पष्ट रूप से फैला हुआ हैं और अगर है तो कितना। स्थानों की परिभाषा जो इस या उस गुण को प्रस्तुत करती है जरूरी है। अवलोकन की दूरी और अनुसंधान के कारण जांचने के लिए। सभी क्षेत्रीय पद्धतियों के गुणों में भिन्नता के अनुसार एक स्थान को या उसके एक समूह को बांटने की योग्यता पर निर्भर करते हैं। आंकड़े कैसे व्यवस्थित किए जाते हैं इसकी समझ तथा कार्य-विधि के समस्त तर्क सराहे जाने के लिए महत्वपूर्ण हैं जिसकी वजह से जटिलता में वास्तविकता पर पकड़ बनती है। क्षेत्रीय भूगोल की आनुभविक बुनियाद वहीं पर स्थित है।

कारटोग्राफिक और सांख्यिकीय कार्यविधि द्वारा जो सभी सीमाएं प्रकट की गई हैं एक ही नमूने पर नहीं हैं। कुछ तो स्पष्ट रूप से विच्छिन्नता के अनुरूप हैं जबकी दूसरे उदाहरणों में, एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में निकलने वाला रास्ता धीरे-धीरे परिवर्तित हो रहा है, या फिर पच्चीकारी द्वारा जिसमें मूलभूत स्थान परस्पर तुलनात्मक गुणों को दर्शाते हैं। क्षेत्रीय भूगोल में, सीमावर्ती प्रदेश का महत्व उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि उन स्थानों का जहां पर यह और वह गुण (या गुणों का संबंध) बलपूर्वक डटा रहता है।

भूमि निरीक्षण से मानचित्र तक : क्षेत्रीयकरण के तरीकों की वंशावली

व्यक्तिगत निरीक्षण : किसी भी क्षेत्रीय कार्य का शुरुआती दौर कार्यवाही को बांटने का होता है, जो कि प्रादेशिक संपरिधान में निर्धारित हो सके, उप-क्षेत्र के तत्व एक दूसरे के ज्यादा समान होते हैं पड़ोसी इकाइयों के मुकाबले।

इन कार्यविधियों से काम करने के कई तरीके होते हैं। कुछ तो पूरी तरह अंतर्ज्ञानी हैं, जबकि दूसरे सुनियोजित भू-भाग के परिणाम हैं। व्यक्तिगत मूल्यांकन पर वे एक संक्षेप निरीक्षण पर काफी हद तक विश्वास कर सकते हैं। एक भू-वैज्ञानिक, एक प्रकृतिवादी

या एक भूगोलवेत्ता ऐसे तत्वों को चुनते हैं जिनके पास इस ज्ञान का अभाव होता है। वे वास्तव में, संघ और समाकृति की पहचान जानते हैं जिसका महत्व हर एक के लिए है जो त्रिविम क्रम को समझना चाहते हैं।

टिप्पणी

सीधा विश्लेषण जल्द ही प्रतिबंध के विरुद्ध खड़ा हो जाता है। एक व्यक्ति विशेष के लिए यह असंभव है कि वह हर रास्ते और सड़क का अनुसरण कर सके, हर एक खोज कर सके और हर कार्यवाही को स्थापित कर सके जो कि अध्ययन की जाने वाली जगह के हर एक खंड का बारीकी से ब्यौरा देने के लिए जरूरी है। अगर पद्धति केवल एक ही व्यक्ति के कार्य पर आधारित हो तो एक संक्षिप्त क्षेत्रीयकरण संभव होगा केवल बहुत ही सीमित स्थानों पर। एक छोटे पैमाने पर, एक व्यक्ति विशेष के पास कुछ नहीं होगा। लेकिन संकेत जो कि विश्वास करने के लिए बहुत सीमित है। अवलोकनकारी को जिन खंडों की सलाह दी जाती है वे अकसर रुचिकर होते हैं, लेकिन वो कल्पित अवधारणा है जिसे कि सम्पूर्ण विश्लेषण के साधनों द्वारा जांचने की जरूरत है।

क्षेत्रीयकरण ऐसी जांच-पड़ताल की मांग करता है जो कि एक अनुसंधानकर्ता की पहुंच से काफी बाहर है। अपने अंतर्ज्ञान को सही साबित करने की पुष्टि करने के लिए अनुसंधानकर्ताओं को अपने सहयोगियों के समर्थन की जरूरत होती है जो उनके कार्य को उन क्षेत्रों में फैलाकर पूर्ण कर सके जिनमें वे खुद सर्वेक्षण नहीं कर सकते, या ऐसे आंकड़ों का इस्तेमाल कर सके जिसकी आपूर्ति नियमित अवलोकन प्रणाली द्वारा की जाती है।

सुनियोजित सर्वेक्षण

जब एक जगह को बांटने का कठोर अभ्यास चला रहे हो, पर्याप्त जानकारी हासिल करने के लिए आंकड़ों का इस्तेमाल करना जरूरी है, सामान्य कार्य-विधि का पालन, जो कि अवलोकनकारियों द्वारा हासिल किए गए हैं। प्रत्येक एक जैसी मूललिपि प्रस्तुत करता है ताकि समस्त परिणाम पूर्णतया अनुकूल बनें। जहां तक संभव है व्यक्तिगत मूल्यांकन को माप द्वारा बदल दिया गया है। अब कोई भी यह ध्यान नही देता कि वातावरण सूखा है, नम है या दमघोटू है, लेकिन तापमान, हवा की गति और दिशा और हाईग्रोमेट्रिक डिग्री लिखता है। सुनियोजित सर्वेक्षण का कार्य व्यक्ति को यह आज्ञा देता है कि वह प्राकृतिक दृश्य द्वारा जो दर्शाया जा रहा है उसके आगे जाए।

अपनी प्रगति जांचिए

5. निम्न में से किसने क्षेत्रीयकरण और वर्गीकरण में समानता का परीक्षण किया?
   (क) डरवेंट विटलीसी (ख) डेविड वी ग्रिग
   (ग) टोरस्टन हेंगटस्ट्रेंड (घ) एलैन प्रेड
6. क्षेत्रीयकरण के तरीकों में निम्न में से क्या प्रमुख है?
   (क) कारटोग्राफिक कार्य विधि
   (ख) सांख्यिकीय कार्य विधि
   (ग) क, ख दोनों
   (घ) इनमें से कोई नहीं।

2.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (घ)
2. (ख)
3. (क)
4. (ग)
5. (ख)
6. (ग)

2.7 सारांश

विकास प्रक्रिया की प्रकृति, औद्योगिकीकरण की वृद्धि या विकास के इंजन के रूप में संप्रयोजित करने की होती है। उद्योग में प्राप्ति की बढ़त को चोटी पर चढ़ाने के लिए यह दोनों के लिए अपेक्षित है, श्रेणी का स्थैतिक अर्थशास्त्र जब उपयोगी वस्तुओं के समूह उत्पादन के कम औसत लागत पर किया जा सकता है और श्रेणी का गतिशील अर्थशास्त्र जब लागत को कम करता है या इकाई प्राप्ति को बढ़ाता है। जो समय के साथ बार-बार और लगातार उत्पादन से उत्पन्न होता है। प्रारंभिक कृषि आधारित औद्योगिक देश में अर्थ-व्यवस्था का रूपान्तरण, आरंभ में व्यक्तिगत आमदनी के वितरण के बढ़ते हुए भेद-भाव से आता है, क्योंकि कुछ लोग धन संचित करने में दूसरों से ज्यादा उद्यमी होते हैं, अवसर और दक्षता सभी के लिए बराबर नहीं होती।

भौगोलिक द्वैतवाद, प्रति व्यक्ति आय के बीच का अंतर है और यह एक क्षेत्र में केंद्रित है तकनीकी द्वैतवाद जीविका और अन्य क्षेत्रों के बीच तकनीकी माध्यमों का अंतर है सामाजिक द्वैतवाद, जीविका और अन्य क्षेत्रों में विभिन्न सामाजिक रिवाज है।

अनेक भू-वैज्ञानिक जिन्होंने दबाव में आकर इस परिवर्तन को स्वीकार किया है, वह इस अस्थाई संकल्पना के अंतर्गत किया कि भू-भागीय भूगोल को भी व्यवस्थित भूगोल की ही तरह से वैज्ञानिक बनाया जाएगा और उसे उस सतह पर पहुंचा दिया जाएगा जहां वैज्ञानिक सिद्धांत का निर्माण किया जाता है। हमने इस महत्वाकांक्षा द्वारा ले जाए गए मार्ग पर अनेक कठिनाइयां पाई हैं। हमारे भू-भागीय भूगोल के अंतिम सोच विचार में यह स्पष्ट तौर से समझना जरूरी है कि विद्यार्थियों पर कुछेक सीमाएं लगाई गई हैं जो अन्यथा व्यवस्थित भूगोल में नहीं पाई जाती हैं।

भू-भागीय अध्ययन की विशेष प्रकृति को शब्दों में अभिव्यक्त करने के अनेक असफल प्रयासों के बाद, मुझे ऐसा लगता है कि इसे अधिक स्पष्ट तौर से गणितीय चिह्नों का प्रयोग करके प्रस्तुत किया जा सकता है। यद्यपि ऐसी जटिल समस्याओं को किसी वास्तविक गणित के सूत्रों या समीकरणों में प्रदर्शित करना असंभव लगता है।

किसी भी परिमित क्षेत्र में, चाहे वह छोटा ही हो, अधिक सामान्य शब्दों में हमारे निष्कर्ष को अभिव्यक्त करने के लिए, भूगोलवेत्ता ने कारकों की परस्पर संबंधित जटिलताओं का सामना बहुत से नए अर्द्ध-स्वतंत्र कारकों के साथ किया है, जिनमें से भिन्नताओं के साथ क्षेत्र में चरण दर चरण भिन्न कारक आंशिक रूप से एक-दूसरे पर

टिप्पणी

निर्भर है। वह क्षेत्रों की किसी छोटी इकाई के भीतर परिवर्तन की अव्यवस्थित रूप से अनदेखी करने के अतिरिक्त इन्हें एक साथ एकीकृत नहीं कर सकता, अर्थात प्रत्येक छोटी परंतु परिमित इकाई के प्रत्येक भाग की अपरिवर्तनशील स्थितियों को ग्रहण करके। इसके बाद वह प्रत्येक निर्दिष्ट इकाई क्षेत्र के भीतर परस्पर संबंधी तथ्य का विश्लेषण और संश्लेषण करके इन्हें समाविष्ट करने की आशा कर सकता है।

'समरूप इकाइयों' की रचना को समझने पर, हम क्षेत्र कहलाए जाने वाले किसी अनवरत क्षेत्र के समावरण द्वारा दूसरे चरण पर आगे बढ़ सकते हैं, –'समरूप इकाइयों' की सबसे बड़ी संभव संख्या जिसका अनुमान हम सबसे निकट की संख्या से लगाते हैं, वह असमान इकाइयों की सबसे छोटी संख्या सहित साथ होती है। हमारी समरूपता का निर्धारण व्यक्तिपरक निर्धारण को शामिल करेगा, जिसके कारण समरूप इकाइयों के अभिलक्षणों की दूसरी से अधिक महत्ता होती है, इसलिए क्षेत्र की अवधारणा की समझ एकपक्षीय होती है।

यदि, भूगोल का लक्ष्य दुनिया के अलग-अलग क्षेत्रों में भिन्न विकास क्रियाओं के बारे में ज्ञान बटोरना है, तो क्षेत्रीय अध्ययन जिसका कार्य दुनिया के प्रदेशीय विभाजनों को समझना है, भूगोल में शक का विषय नहीं हो सकता। विज्ञान की किसी भी शाखा के कर्मियों को इस पर हतोत्साहित होने की भी जरूरत नहीं है कि बीस वर्ष से कम के अरसे में कुछेक कर्मियों के प्रयासों के बावजूद, आशा के विपरीत कम ही नतीजे आए हैं। हालांकि भूगोल का विषय, समस्त विश्व है, फिर भी यह आकार में सीमित है और हमें मानना चाहिए कि भूगोल का भविष्य बहुत व्यापक है। इसमें शक नहीं कि अमेरिकी भूवेत्ताओं के सामूहिक प्रयासों से तब कहीं बेहतर नतीजे आ सकते हैं, यदि वह या उनमें से अधिकांश सदस्य अपना पूरा ध्यान दुनिया के छोटे से हिस्से पर केंद्रित कर दें – जैसा फ्रांसीसी भूवेत्ताओं ने अपने देश में किया है। लेकिन विद्यार्थियों के दूर-दराज क्षेत्रों में खोज के लिए जाने के कारणों पर रोक नहीं लगानी चाहिए, फिर वह जरूरी ही क्यों न हो। उम्मीद केवल इतनी की जा सकती है कि इस देश में कर्मियों की विशाल संख्या और गहराती एकाग्रता, किसी अपेक्षाकृत सीमित क्षेत्र में बढ़ती दिखाई दे, जैसा कि विस्कॉन्सिन में देखा गया। विशेषतः फिंच के विचारानुसार, हमें इससे असाधारण वैज्ञानिक क्षमता वाले नतीजों की उम्मीद नहीं करनी चाहिए जो, 'किसी एक क्षेत्र को खंगालने और दूसरे की उपेक्षा से' जैसे अभ्यास पर आधारित हो। इस तरह के अध्ययनों का अध्यापन जैसे कार्य में योगदान, इस पर खर्चे गए समय और प्रयास से स्पष्ट होता है, बशर्ते कि संबंधित क्षेत्र कक्षा में पढ़ाए जाने योग्य हो। क्षेत्रीय भूगोल में स्थायी विकास के लिए इससे जुड़े व्यक्तियों से एकाग्रता की गहरी उम्मीद रखी जाती है – फिर चाहे कोई फिंच की सोच पर चलकर केवल एक ही क्षेत्र को एक विद्यार्थी के जीवनकार्य की उपलब्धि मानने की पैरवी करे या नहीं।

स्थानिक विश्लेषण सकारात्मक विचारधारा का उत्पाद है तथा यह मात्रात्मक क्रांति से एकीकृत है। स्थानिक विश्लेषण को, अंतरिक्ष विज्ञान तथा ज्यामितीय तकनीक के रूप में विचारा जाता था जिस पर राज्य की तुलना में अधिक बल दिया जाता था। इसने प्रणाली दृष्टिकोण को भी अपनाया। यह अनुभवजन्य अवलोकन पर आधारित था। इसने महत्वपूर्ण अवलोकनों को अंतरिक्ष ज्यामिति के रूप में रूपांतरित किया।

स्थानिक संगठन की समझ भूगोल के ज्ञाताओं को तीन मूलभूत प्रश्नों के निराकरण में मदद करती है। क्यों इन स्थानों पर इस प्रकार की घटनाएं घटित होती हैं? ये पैटर्न महत्वपूर्ण क्यों हैं? स्थानिक संगठन के पैटर्न के विश्लेषण और व्याख्याओं का मापन स्थानीय से विश्व स्तर तक का होना चाहिए। छात्र एक ऐसे विश्व को देखते हैं जो परस्पर अंतर्संबंधित है। व्यापक रूप से अलग स्थान, परिवहन तथा संचारतंत्र के विकास के परिणाम से अंतर्संबंधित हैं। एक स्थान के मानवीय निर्णय का अन्य स्थान पर भौतिक प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए कोयला जलाने का निर्णय अन्य स्थानों को भौतिक रूप से प्रभावित करता है जिसके परिणामस्वरूप अम्लवृष्टि सैकड़ों मील दूर की वनस्पतियों को नष्ट कर सकती है।

क्षेत्रों का विषय भौगोलिक विचार का केंद्र रहा है, इसकी पहली वजह है उसके अवलोकन का महत्व और उसका परिणाम और दूसरी, पारंपरिक भूगोल में वर्गीकरण जिसका अनुभववाद द्वारा महत्व और कार्यक्षेत्र सर्वेक्षण में उसकी प्रमुखता। क्षेत्र शब्द की उत्पत्ति पुरानी फ्रेंच भाषा से हुई है और इसका मूल रूप लैटिन के रिजियो से लिया गया है, जिसका अर्थ हैं 'निर्देशन और जिला' और रिजेयर का अर्थ है शासन करना या निर्देश देना और इस प्रकार इसको राजनीतिक आयाम दिया गया है। आधुनिक भूगोल का मानना है कि क्षेत्र एक मध्य आकार का आधुनिक तत्व है (स्थानीय और राष्ट्रीय स्तर में), जो कि भिन्न हो सकते हैं। एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश और एक अवधि से दूसरी अवधि। क्षेत्र इस्तेमाल किए जाने वाले राजनीतिक तत्व भी हो सकते हैं, उदाहरण के लिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा, जिसने विश्व को निश्चित रूप से आकार में भिन्नता के साथ क्षेत्रों में बांटा है। इस शब्द के तहत यह संभव है कि राज्यों का एक समूह नियुक्त कर दिया जाए, या फिर एक महाद्वीप समूह जैसे कि मध्य पूर्वी या दक्षिणी पूर्वी एशिया और क्षेत्रीय सत्ता या क्षेत्रीय विरोध की भी तरफ इशारा करते हैं । इसके अलावा पारंपरिक परिभाषा से अब यह शब्दावली बदल चुकी है। इसमें राजनीतिक और शहरी, प्राकृतिक, रेगिस्तान और जंगली स्थानों का भी आनुपातिक आयाम का समावेश हो चुका है।

जब एक जगह को बांटने का कठोर अभ्यास चला रहे हो, तो पर्याप्त जानकारी हासिल करने के लिए आंकड़ों का इस्तेमाल करना जरूरी है। सामान्य कार्य-विधि का पालन, जो कि अवलोकनकारियों द्वारा हासिल किए गए हैं। प्रत्येक एक जैसी मूललिपि प्रस्तुत करता है ताकि समस्त परिणाम पूर्णतया अनुकूल बनें। जहां तक संभव है व्यक्तिगत मूल्यांकन को माप द्वारा बदल दिया गया है। अब कोई भी यह ध्यान नही देता कि वातावरण सूखा है, नम है या दमघोटू है। सुनियोजित सर्वेक्षण का कार्य व्यक्ति को यह आज्ञा देता है कि वह प्राकृतिक दृश्य द्वारा जो दर्शाया जा रहा है उसके आगे जाए।

2.8 मुख्य शब्दावली

- **भौगोलिक द्वैतवाद :** वह स्थिति जिसमें एक ही समय में समान विषय वस्तु पर दो विपरीत विचार उत्पन्न हों।
- **क्षेत्रीय भूगोल :** मानव भूगोल की एक प्रमुख शाखा।

टिप्पणी

- **भू-विज्ञान :** वह विज्ञान जिसमें ठोस पृथ्वी का निर्माण करने वाली शैलों तथा उन प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है जिनमें शैलों, भूपर्पटी और स्थलरूपों का विकास होता है।
- **भूगोलवेत्ता :** वह वैज्ञानिक जो भू-भाग की व्याख्या करता है।
- **क्षेत्रीय विभेदन :** एक क्षेत्र में व्याप्त विशिष्टता का दूसरे क्षेत्र से भिन्न होना क्षेत्रीय विभेदन कहलाता है।

2.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु-उत्तरीय प्रश्न

1. भूगोल में द्वैतवाद की अवधारणा का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
2. क्षेत्रीय भूगोल से आप क्या समझते हैं? संक्षेप में बताइए।
3. भूगोल में क्षेत्र की अवधारणा से क्या अभिप्राय है? साररूप में बताइए।
4. क्षेत्रीयकरण की अवधारणा का अभिप्राय स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ-उत्तरीय प्रश्न

1. द्वैतवाद के अंतर्गत मिथक और वास्तविकता को विस्तार से समझाइए।
2. क्षेत्रीय भूगोल से क्या अभिप्राय है? विवेचना कीजिए।
3. क्षेत्र की अवधारणा का विस्तृत विश्लेषण कीजिए।
4. क्षेत्रीयकरण की अवधारणा की सविस्तार व्याख्या कीजिए।

2.10 सहायक पाठ्य सामग्री

एस. डी. कौशिक, डी. एस. रावत (2014-15) भौगोलिक विचारधाराएं एवं विधितन्त्र, मेरठ

डॉ. हुसैन, भौगोलिक चिंतन का इतिहास, रावत पब्लिकेशन, जयपुर

डॉ. आर. एस. माथुर, डॉ. जैनेन्द्र गुप्ता, भौगोलिक विचारधाराएं, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर

चन्द्रशेखर यादव (2012), भौगोलिक विचारों का इतिहास, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, दिल्ली

Chorley, R. J and Hagget, P- (1965), Models in Geography, London.

Dickinson, R. E. (1969), The maker of Modern Geography, London.

Dikshit, R. D. (1999), Geographical Thought : A Contextual History of Ideas, New Delhi

Foucault, M. 1980, Power / Knowledge, Brighton

Gold, J.R. (1980), An Introduction to Behavioural Geography, Oxford

Golledge, R. J., et - al - (1972), Behavioural Approaches in Geography : An overview, The Australian Geographer,12, pp l59&79

Gould, P. R. (1966), On Mental maps in Downs, R. M

Gregory, D., (1978), Dealogy Science and Human Geography, London, pp - 135&136

Gregory, D. (1981), Human Agency and Human Geography, Transaction, Institute of British Geographers

Gregory, D. (1989), The crisis of modernity/ Human geography and critical social theory, in Peet, R and Thrift, N. J. (eds) New Models in Geography, vol - 2, London. Haggett, P- Cliff, A. D. and Allan, F. (1977), Locational Models

Soja, E. (1989), Modern geography, Western Marxism and reconstructing of critical social theory, in Peet, R and Thift, N. (eds) New Model in Geography, vol -2, London

Taylor, G. (1919), Geography in Twentieth Century, London

इकाई 3 स्थानिक वितरण और वैज्ञानिक स्पष्टीकरण

टिप्पणी

संरचना

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 स्थानिक वितरण की प्रकृति एवं स्वरूप
3.3 भूगोल के अध्ययन की विधियां-भाग 1
3.4 भूगोल के अध्ययन की विधियां-भाग 2
3.5 स्थानिक विश्लेषण की प्रकृति और प्रक्रिया
3.6 वैज्ञानिक व्याख्या और इसका मार्ग
3.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.8 सारांश
3.9 मुख्य शब्दावली
3.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.11 सहायक पाठ्य सामग्री

3.0 परिचय

भूगोल का स्वरूप बदलता रहता है और काल विशेष की ज्वलन्त समस्याओं का अध्ययन अपनी विश्लेषण क्षमता, परिप्रेक्ष्य परिधि और उपलब्ध ज्ञान के आधार पर किया जाता है। भौगोलिक चिंतन के अध्ययन से पता चलता है कि भूगोल की प्रकृति प्राकृतिक व सामाजिक विज्ञान में द्विविभाजित है। दोनों की विषय-वस्तु भिन्न है इसलिए इनकी अध्ययन विधियों और उपागम में द्वैतवाद कई बार प्रमुखता से उभरकर सामने आया है। काल विशेष के अनुरूप कभी गहन तो कभी सम्यक संश्लेषण को बढ़ावा दिया गया। परंतु भूगोल की विषयवस्तु और स्वरूप यथासंभव अक्षुण्ण रहे। भूगोल को पृथ्वी तल का विज्ञान, विभिन्न तत्वों में अंतरसम्बन्ध का विवेचन, प्रादेशिक समाकलन, संश्लेषणोन्मुख, प्रादेशिक समस्याओं का समाकलन और निराकरण का विज्ञान माना गया है।

इस इकाई में हम स्थानिक वितरण की प्रकृति एवं स्वरूप, भूगोल के अध्ययन की विधियां, स्थानिक विश्लेषण की प्रकृति तथा प्रक्रिया, वैज्ञानिक व्याख्याओं और तरीकों का अध्ययन करेंगे।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- स्थानिक वितरण की प्रकृति एवं स्वरूप को समझ पाएंगे;
- भूगोल के अध्ययन की विभिन्न विधियों का अध्ययन कर पाएंगे;
- स्थानिक विश्लेषण की प्रकृति और प्रक्रिया का अर्थ समझ पाएंगे;
- संबंधित वैज्ञानिक व्याख्याओं और इसके मार्गों का अध्ययन कर पाएंगे।

टिप्पणी

3.2 स्थानिक वितरण की प्रकृति एवं स्वरूप

स्थानिक वितरण को बहुत से भौतिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक कारक प्रभावित करते हैं।

किसी भी तत्व के वितरण को समझने के लिए अन्य बहुत से तत्वों को समझना जरूरी होता है।

''स्थानिक प्रारूप का अर्थ है- किसी वस्तु की अवधारणात्मक सरंचना, स्थान, व्यवस्था पृथ्वी पर किस प्रकार पाई जाती है।''

प्रारूप में हम दो वस्तुओं के बीच में कितना स्थान है यह अध्ययन करने की कोशिश करते हैं। प्रारूप को वस्तुओं की पृथ्वी पर व्यवस्था के अनुसार पहचानते हैं। किसी तत्व का प्रारूप बिंदु, रेखा और गुच्छ में व्यवस्थित हो सकता है।

प्रारूप के तीन प्रकार हैं:-

1. बिंदु
2. रैखिक
3. स्थान

1. बिंदु प्रारूप

बिंदु प्रारूप में कुछ बहुत नजदीक और व्यवस्थित बिंदु स्थित होते हैं। ये तीन प्रकार के होते हैं।

अनियमित– इस प्रकार के प्रारूप में कुछ बिंदु कहीं पर भी पाए जा सकते हैं और दूसरे बिंदुओं को प्रभावित नहीं करते हैं।

नियमित– इस प्रकार के प्रारूप में कुछ बिंदु एक दूसरे से समान दूरी पर अवस्थित होते हैं।

गुच्छित– इस प्रकार के प्रारूप में कुछ बिंदु एक स्थान पर साथ-साथ ज्यादा मात्रा में पाए जाते हैं और कहीं पर स्थान खाली रहता है।

बिंदु प्रारूप का उदाहरण है शहर का वितरण, या किसी अन्य वस्तु या तत्व की अवस्थिति।

2. रैखिक प्रारूप

रैखिक प्रारूप को भी बिंदु प्रारूप की भांति रेखाओं की मोटाई, दिशा और व्यवस्था के द्वारा मापा जाता है। नदियों में अरीय, गुंफित और वृक्षाकार प्रतिरूप देखने को मिलता है। शैलों में अनियमित और ग्रिड प्रारूप देखने को मिलता है। समानांतर प्रारूप उभरे हुए समुद्री बीच और समुद्री किनारों पर मिलता है। रैखिक प्रारूप नदियों के अध्ययन में उपयोगी होता है।

टिप्पणी

3. स्थान प्रारूप

स्थान प्रारूप भी बिंदु प्रारूप की भांति स्थानों की गहनता, स्थानों की व्यवस्था का अध्ययन करने के लिए किया जाता है।

जनसंख्या घनत्व का स्थान प्रारूप के अंतर्गत अध्ययन किया जाता है।

स्थानिक स्वरूप की प्रकृति

किसी भी स्थान का स्वरूप स्थाई नहीं होता है बल्कि हमेशा उसमें कुछ न कुछ परिवर्तन होते रहते हैं। यह बहुत से कारकों पर निर्भर करता है। स्थान का दोहन हमेशा परिवर्तित होता रहता है। जो स्थान आज बहुत पिछड़े हुए हैं जरूरी नहीं कि वे आने वाले समय में ऐसे ही रहें। यह उस स्थान में होने वाले प्रौद्योगिक विकास के बदलाव पर निर्भर रहता है। इसको हम एक उदाहरण द्वारा समझ सकते हैं। प्राचीन काल में रोम अत्यधिक विकसित था और ऐसा माना जाता था कि 'All roads leads to Rome' परन्तु अब ऐसा नहीं है। मैकिण्डर (1861-1945) एक प्रसिद्ध ब्रिटिश भूगोलवेत्ता ने भौगोलिक धुरी सिद्धांत 1904 में दिया जिसमें उन्होंने पृथ्वी की सतह के करीब 1/4 स्थलीय सतह के लगभग 2/3 भाग जिसमें से 7/8 जनसंख्या रहती है, को 'विश्व दीप' - एशिया, यूरोप और यूरोप से सटे सहारा के उत्तर का अफ्रीका के रूप में तथा शेष 1/3 स्थल को अलग-थलग महाद्वीपों/द्वीपों - उत्तरी अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, ब्रिटेन, जापान के रूप में देखा। इस बाहरी पट्टी को उसने बाह्य या द्वीपीय क्रीसेंट बताया। विश्व के समुद्री किनारे वाले बाहरी भाग को 'आंतरिक व सीमांत क्रीसेंट' तथा विश्वदीप के अंत:स्थल को 'धुरी क्षेत्र' का नाम दिया गया। उनकी परिकल्पना थी कि इसी धुरी क्षेत्र के पक्ष में विश्व का शक्ति संतुलन रहेगा और इस पर आधिपत्य रखने वाला देश चारों ओर अपना प्रचार करके विश्व साम्राज्य की स्थापना करेगा। 1919 में 'धुरी क्षेत्र' के स्थान पर 'हृदय स्थल' का प्रयोग किया गया। क्योंकि जल शक्ति उतना प्रभाव नहीं रखती थी जितना उन्होंने अनुमान लगाया था। उन्होंने हृदय क्षेत्र को बढ़ाकर उसमें पूर्वी यूरोप, तिब्बत और मंगोलिया को भी शामिल कर लिया। यह उनका संसार द्वीप का हृदय स्थल था। उसने एशिया, यूरोप और अफ्रीका के सम्मिलित महाद्वीप यूरोअफ्रेशिया को 'विश्व द्वीप' का नाम दिया था।

इस सिद्धांत को उन्होंने इन शब्दों में व्यक्त किया– जो पूर्वी यूरोप पर शासन करेगा वह हृदय स्थल पर नियंत्रण रखेगा, जो हृदय स्थल पर शासन करेगा वह विश्वदीप पर नियंत्रण रखेगा और जिस शक्ति का विश्व ही पर शासन चलेगा वह विश्व का नियंत्रण रखेगा।

कहने का आशय यह है कि उस समय हृदय स्थल कितना महत्वपूर्ण था और आज तकनीकी ज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास ने अमेरिका को विश्व शक्ति के रूप में स्थापित किया हुआ है।

इसी प्रकार से हम अन्य उदाहरण से इसको समझ सकते हैं कि सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि को हम कुछ समय पहले तक जानते भी नहीं थे और आज संसार के किसी न किसी भाग में इस ऊर्जा का प्रयोग हो रहा है। मनुष्य अपने कौशल, बुद्धि तथा ज्ञान से हर समय किसी न किसी तत्व को परिवर्तित करता रहता है। जमीन की मांग तथा इसकी कमी को पूरा करने के लिए शहरों का ऊर्ध्वाधर विकास किया जा रहा है और बहुत से प्रयोग होने बाकी हैं।

टिप्पणी

सामान्य तौर पर वैज्ञानिक एक तथ्य का ही अध्ययन नहीं करते हैं। वे उनमें से कई को इकट्ठा करते हैं और फिर उस घटना के व्यवहार के बारे में सामान्यीकरण करने का प्रयास करते हैं जो ये तथ्य दर्शाते हैं। भूगोलवेत्ता भी इसी तरह से शोध करते हैं। वास्तव में भौगोलिक तथ्यों का संयोजन भूगोल के विषय का केंद्र बिंदु रहा है और कुछ संयोजनों का इस विषय में इतना अधिक महत्व रहा है कि उन्हें एक विशेष नाम दिया गया है जैसे कि स्थानिक वितरण को ही।

सबसे सरल रूप से एक स्थानिक वितरण को भौगोलिक कारक के एक समूह के रूप में परिभाषित किया जाता है जो किसी विशेष घटना या कई स्थानों की विशेषताओं के व्यवहार को प्रस्तुत करता है। हमें 'वास्तविक-विश्व' के स्थानिक वितरण जिसे साधारण तरीके से मानचित्र पर चित्रित किया जाता है और काल्पनिक वितरण को ही ध्यान में रखना पड़ता है।

स्थानिक वितरण शब्द के अधिक सूक्ष्म अर्थ की व्याख्या करने के लिए तीन बिंदुओं को काफी विस्तार की आवश्यकता है। निर्दिष्ट किया जाने वाला पहला बिंदु अवधारणा, भौगोलिक तथ्य और अवधारणा के बीच संबंध है। स्थानिक वितरण, निकट और प्रत्यक्ष है।

स्थानिक वितरण को भौगोलिक तथ्य के सेट या संयोजन के रूप में परिभाषित किया जाता है। इस प्रकार कुछ घटनाओं के वितरण को जानने के लिए उससे संबंधित व्यवहार से संबंधित कई भौगोलिक तथ्यों को जानना अति आवश्यक होता है।

दूसरा बिंदु जिस पर जोर दिया जाना चाहिए वह यह है कि जिस घटना के वितरण को समझना है उससे संबंधित स्थानीय, अस्थायी और सांकेतिक विशेषताओं की जानकारी होनी चाहिए

जब हम किसी घटना के वितरण को समझना चाहते हैं तो हम केवल दो तथ्यों को ध्यान में रखते हैं परंतु तीसरे तथ्य को नजरअंदाज कर दिया जाता है। जैसे हम कोयले के उत्पादन का किसी छायाचित्र की सहायता से अध्ययन करते हैं तो साधारणत: दो ही तथ्य ध्यान में रखते हैं- कोयले का उत्पादन और उसके उत्पादन के स्थान। तीसरा तथ्य मानचित्र में सिर्फ शीर्षक 'title' में ही समय को लिखा जाता है। सभी मानचित्रों में केवल दो ही तथ्यों वस्तु व स्थान को महत्वपूर्ण स्थान मिलता है और समय जोकि बहुत महत्वपूर्ण होता है केवल शीर्षक में ही स्थान प्राप्त करता है। जबकि समय किसी भी तथ्य की जानकारी, तुलनात्मक अध्ययन के लिए परम आवश्यक होता है जैसे कि प्रवास, नई खोज आदि भौगोलिक अध्ययन में समय एक महत्वपूर्ण पक्ष होता है।

स्थानिक वितरण के बारे में तीसरा बिंदु जिसके विशेष उल्लेख की आवश्यकता होती है, वो है चित्रण। यदि भौगोलिक तथ्य एकत्र किए जाते हैं और फिर कुछ तरीकों से चित्रित किया जाता है कि उनके एक या अधिक मूल तत्व खो जाते हैं तो परिणामी संग्रह अब स्थानिक वितरण नहीं रह जाता है।

उदाहरण के लिए यदि हम एक काल्पनिक भौगोलिक घटना X को दर्शाते हैं और इसमें विशेषताओं और समय का भी ध्यान रखा लेकिन स्थानिक विशेषता को नहीं दिखा पाए तो भी स्थानिक वितरण सही से प्रदर्शित नहीं हो पाएगा।

टिप्पणी

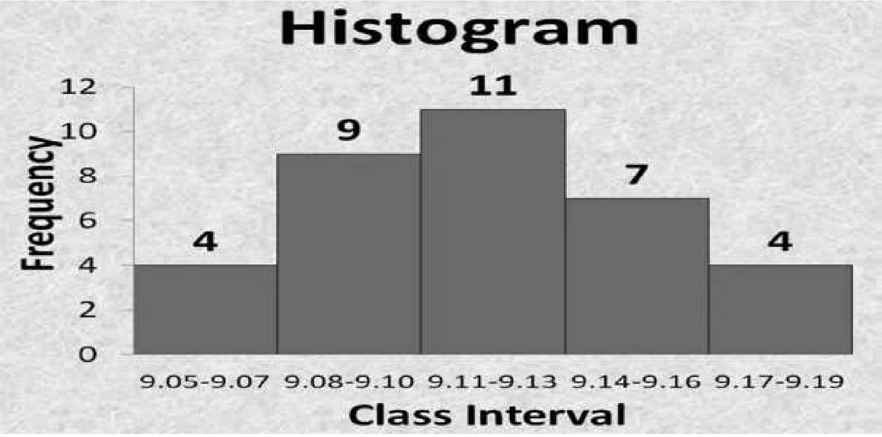

जैसा कि इस हिस्टोग्राम चित्र में दर्शाया गया है।

कई बार भूगोलवेत्ता को पृथ्वी की सतह के विभिन्न क्षेत्रों से भौगोलिक तथ्यों को एक विशेष वितरण में इकट्ठा करने और फिर अपनी बुनियादी विशेषताओं को खोए बिना इस वितरण को चित्रित करने की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। परंपरागत रूप से नक्शा वह उपकरण है जिसे भूगोलवेत्ताओं ने इस समस्या का सामना करते समय उपयोग किया है। मानचित्र का उपयोग करके भूगोलवेत्ता प्रत्येक घटक के भौगोलिक तथ्यों में निहित महत्वपूर्ण स्थानीय, अस्थायी और सांकेतिक जानकारी को खोए बिना स्थानिक वितरण को रेखांकित कर सकता है, और पृथ्वी पर मौजूद प्रत्येक तथ्यों के आकार, दूरी, दिशा और आकार से सबंधित सूचनाओं में भी कोई परिवर्तन नहीं आता है।

मानचित्र और स्थानिक वितरण के बीच का संबंध बहुत निकट है। वास्तव में मानचित्र की एक अच्छी बुनियादी परिभाषा यह है कि नक्शा एक या एक से अधिक स्थानिक वितरण का एक ग्राफिक चित्रण है जिसमें भौगोलिक तथ्यों के बीच क्षेत्रीय और स्थानिक संबंधों के अलग-अलग वितरणों को बनाए रखा जाता है।

मानचित्र किसी भौगोलिक तथ्य का वितरण है और आवृत्ति का सही निरूपण करता है। क्योंकि मानचित्र किसी भौगोलिक तथ्य का निरूपण करते समय क्षेत्रीय और स्थानिक संबंधों के साथ हर तत्व का ध्यान रखता है। इससे भूगोलवेत्ता को पृथ्वी पर उपस्थित तथ्यों के वास्तविक, स्थानिक और क्षेत्रीय वितरण को सही प्रकार से समझने में सहायता मिलती है जो किसी और विधि से संभव नहीं है।

मानचित्र भूगोलवेत्ता के लिए दो तरह से बहुत मददगार हो सकता है। पहला- स्थानिक वितरण का मानचित्र भूगोलवेत्ता के लिए मूल्यवान हो सकता है जब वह उस विशेष वितरण का वर्णन करने का प्रयास कर रहा हो, दूसरा- मानचित्र तब भी मददगार हो सकता है जब भूगोलवेत्ता उस वितरण को समझाने के लिए प्रयोग करना चाहता हो कि यह तत्व क्यों और कैसे पाया जाता है।

मानचित्रों का प्रयोग किसी भी तत्व के पृथ्वी और उसके किसी भाग पर वितरण को दर्शाने के लिए किया जाता है ताकि उस तत्व और उसके होने के कारणों का पता लगाया जा सके। हम वितरण मानचित्र को जनसंख्या वितरण, मृत्यु दर, किसी फसल का निरूपण, किसी बीमारी का निरूपण, या किसी भी तत्व का निरूपण करने के लिए कर

टिप्पणी

सकते हैं ताकि उसको समझा जा सके और कारणों का उल्लेख किया जा सके और भविष्य में और भी महत्वपूर्ण तरीकों से उसे वर्णित किया जा सके।

एक सामान्य तरीके से स्थानिक वितरण की विशेषताओं को परिभाषित करने और चर्चा करने के बाद, अब हम अपना ध्यान उनके मूल तत्वों की ओर मोड़ सकते हैं। सभी स्थानिक वितरण तीन तत्वों से बने होते हैं जिनमें से प्रत्येक एक दूसरे से स्वतंत्र होता है और जिसके द्वारा वितरण को आम तौर पर चित्रित किया जा सकता है

तीन तत्व जो सभी स्थानिक वितरण साझा करते हैं- प्रारूप, घनत्व और फैलाव हैं। एक स्थानिक वितरण के प्रारूप को अध्ययन क्षेत्र के आकार की परवाह किए बिना एक अध्ययन क्षेत्र के भीतर भौगोलिक तथ्य के क्षेत्र या ज्यामितीय व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया गया है।

आवृत्ति से अभिप्राय है किसी घटना का अध्ययन क्षेत्र में घटित होना/पुनरावृत्ति होना। एक स्थानिक वितरण के फैलाव को अध्ययन क्षेत्र के आकार के सापेक्ष एक अध्ययन क्षेत्र के भीतर भौगोलिक तथ्यों के प्रसार की सीमा के रूप में परिभाषित किया गया है।

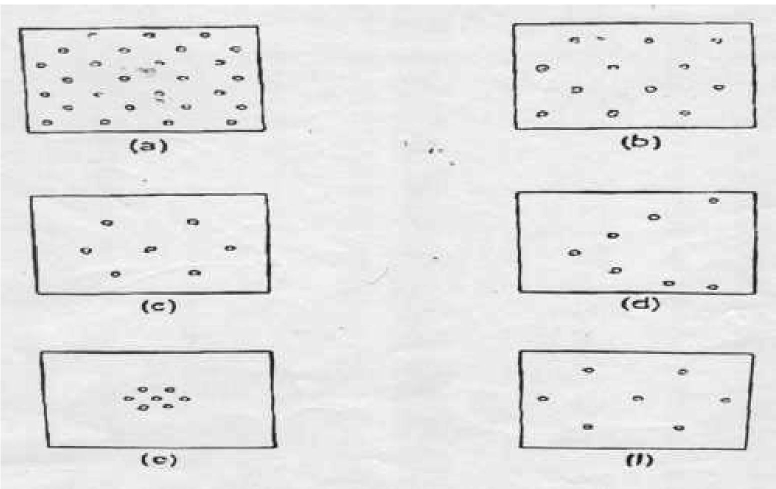

चित्र में स्थानिक वितरण के प्रारूप घनत्व और फैलाव को दर्शाया गया है।

ऊपर दी गई परिभाषा को चित्र में दिखाए गए 6 सरल काल्पनिक मानचित्रों की तुलना और विषमता द्वारा चित्रित किया जा सकता है। पैटर्न और घनत्व और उनके स्वतंत्र प्रभाव के बीच के अंतर का चित्र a और b में उदाहरण दिया गया है। दोनों मानचित्रों पर घटना का पैटर्न एक समान है क्योंकि सभी बिंदुओं को एक दूसरे से समान दूरी पर व्यवस्थित किया गया है। हालांकि क्षेत्र के आकार के सम्बन्ध में घटना का घनत्व या आवृत्ति भिन्न है।

चित्र a में दिखाए गए मानचित्र के लिए 27 बिंदु प्रति वर्ग इंच हैं जबकि आकृति b में केवल 12 बिंदु प्रति वर्ग इंच हैं।

इसके विपरीत चित्र c और d में दिखाए गए मानचित्र पर अलग-अलग पैटर्न दिखाए गए हैं लेकिन घनत्व समान है। स्पष्ट रूप से पैटर्न (प्रारूप) और घनत्व या स्थानिक वितरण की विशेषताएं एक दूसरे से स्वतंत्र रूप से संचालित हो सकती हैं। आकृति e और f पर ध्यान फैलाव पर केंद्रित है।

टिप्पणी

दोनों मानचित्रों पर डॉट्स का घनत्व समान 7 प्रति वर्ग इंच है। पैटर्न भी समान हैं क्योंकि पैटर्न को अध्ययन क्षेत्र के आकार की परवाह किए बिना व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया गया है। हालांकि डॉट्स का फैलाव, वह किस हद तक अध्ययन क्षेत्र पर फैला हुआ है यह बात अलग है। स्पष्ट रूप से फैलाव को भी पैटर्न और घनत्व से स्वतंत्र रूप से संचालित किया जा सकता है।

भूगोलवेत्ता इस धारणा का प्रयोग विभिन्न अध्ययन क्षेत्रों में एक विशेष घटना के लिए या एक ही अध्ययन क्षेत्र में कई घटनाओं के लिए स्थानिक वितरण के तत्वों का विश्लेषण, तुलना और तुलना करके, सुझाव देते हैं कि विश्लेषण के अन्य रूपों द्वारा इन तत्वों को आसानी से नहीं समझा जा सकता है।

यह धारणा बहुत महत्वपूर्ण है, ऐसा लगता है कि यह भूगोल के संपूर्ण विषय के लिए नींव का एक अनिवार्य हिस्सा प्रदान करता है।

इस बिंदु पर हमने सामान्य रूप से स्थानिक वितरण को परिभाषित किया है और उनकी बुनियादी विशेषताओं और तत्वों पर चर्चा की है। पूर्णता के उद्देश्य के लिए दो बुनियादी प्रकार के स्थानिक वितरण की पहचान करना आवश्यक है जो हम भूगोल में देख सकते हैं। एक प्रकार का स्थानिक वितरण निरंतर है और इसे एक ऐसे स्थानिक वितरण के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो एक अध्ययन क्षेत्र के अंदर लगातार घटित होता है या पाया जाता है।

वायु तापमान, समुद्र तल से बैरोमीटर का दबाव, ऊंचाई ऐसी ही घटनाएं हैं जो निरंतर स्थानिक वितरण का हिस्सा होती हैं क्योंकि अध्ययन क्षेत्र के भीतर किसी भी ओर सभी बिंदुओं पर तापमान, दबाव और ऊंचाई मौजूद होती ही है।

असतत अन्य प्रकार का बुनियादी स्थानिक वितरण है और इसे ऐसे स्थानिक वितरण के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें विचाराधीन घटना को अध्ययन क्षेत्र के भीतर गैर-उपस्थिति के क्षेत्रों से अलग किया जा सकता है। इसमें हम सोने की खान के मानचित्र, तेल के कुओं के मानचित्र या किसी ऐसे उदाहरण के द्वारा समझ सकते हैं जिनके बीच में दूरी होती है जैसे किसी क्षेत्र के गड्ढों का मानचित्र, प्रत्येक गड्ढे को अन्य सभी गड्ढों से सीमित दूरी से अलग किया जाता है और एक स्थानिक वितरण के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें विचाराधीन घटना को अध्ययन क्षेत्र के भीतर गैर-उपस्थिति क्षेत्रों से अलग किया जाता है।

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि एक ही अध्ययन क्षेत्र में एक ही समय अवधि के लिए एक ही घटना का स्थानिक वितरण अलग-अलग दिखाई दे सकता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि घटना को स्थानिक रूप से असतत या विशेष रूप से निरंतर माना गया है। इसके अलावा, भले ही किसी विशेष घटना को निरंतर स्थानिक वितरण माना भी गया हो, तो भी अंतर हो सकता है यदि इकाई क्षेत्र का आकार जिसके लिए डेटा एकत्रित किया गया हो, बदल जाए।

यदि हम फिर से भौगोलिक तथ्यों का संदर्भ लें तो इन बिंदुओं को आसानी से देखा जा सकता है। भौगोलिक तथ्य किसी स्थान का चरित्र या किसी विशेष समय पर किसी स्थान पर घटने वाली घटना की गुणवत्ता या मात्रा है।

जिन स्थानों के लिए हम जानकारी उपलब्ध करते हैं, उनके आकार को संशोधित करके हम चरित्र, गुणवत्ता या मात्रा से संबंधित डेटा को बदल सकते हैं। स्थानिक वितरण को भौगोलिक तथ्यों के एक समूह के रूप में परिभाषित किया गया है, इसलिए यदि हमने सेट में व्यक्तिगत तथ्य को बदल दिया है तो हम समग्र संयोजन को भी बदल सकते हैं जो कि स्थानिक वितरण है।

अत: स्थानिक प्रारूप का अर्थ है कि किसी वस्तु की अवधारणात्मक सरंचना, स्थान, व्यवस्था पृथ्वी पर किस प्रकार पाई जाती है। प्रारूप तीन प्रकार का पाया जाता है:- बिंदु, रैखिक और स्थान। प्रारूप कभी भी बदल सकता है। यह गत्यात्मक होता है आज अगर गुच्छित प्रारूप किसी बस्ती का पाया जाता है तो हो सकता है कि आने वाले समय में कोई रेल लाइन या कोई महत्वपूर्ण सड़क के निर्माण के बाद यह रैखिक प्रारूप में बदल जाए। किसी भी स्थानिक वितरण को भौगोलिक कारक के एक समूह के रूप में व्यक्त किया जाता है। स्थानिक वितरण में तीन तत्व बहुत ही महत्वपूर्ण होते हैं वस्तु, स्थान और चित्रण। इसमें से अगर एक का भी निरूपण नहीं होता तो वितरण सही तरीके से परिभाषित नहीं किया जा सकता। मानचित्रों का स्थानिक वितरण में महत्वपूर्ण स्थान होता है। ये वितरण के प्रारूप, आवृत्ति और फैलाव को भली भांति स्पष्ट करते हैं। वितरण भी दो प्रकार का पाया जाता है सतत (निरंतर) और असतत (अनिरंतर)। ऐसा वितरण जो लगातार पाया जाए वो सतत जैसे कि तापमान, समुद्र तल पर बैरोमीटर दबाव, ऊंचाई और जो वितरण लगातार न पाया जाए असतत वितरण कहलाता है जैसे कि तेल के कुएं, कोई खास खनिज पदार्थ आदि।

अपनी प्रगति जांचिए

1. निम्न में से कौन भूगोल का एक उपागम है?

   (क) क्रमबद्ध उपागम (ख) प्रादेशिक उपागम

   (ग) निगमनिक विधि (घ) उपर्युक्त सभी।

2. निम्न में से प्रारूप का प्रकार कौन है?

   (क) बिंदु (ख) रैखिक

   (ग) स्थान (घ) उपर्युक्त सभी।

3.3 भूगोल के अध्ययन की विधियां- भाग 1

भूगोल का प्रमुख उद्देश्य किसी क्षेत्र की विशेषताओं को समझना और उनको प्रभावित करने वाले विभिन्न प्राकृतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक ऐतिहासिक कारकों को समझना है।

भूगोल को अन्य प्रकृति विज्ञानों की भांति ही सामान्य विज्ञान माना गया है। यह भी अन्य विज्ञानों की भांति स्थानिक आंकड़े एकत्रित करता है और उन्हें दर्शाने के लिए मानचित्रों का सहारा लेता है। भूगोल का कई अंतरसंबंधित उपागमों द्वारा अध्ययन किया जाता है, जैसे कि क्रमबद्ध, प्रादेशिक, विवरणात्मक और विश्लेषणात्मक आदि।

भूगोल के विभिन्न उपागम

भूगोल के विभिन्न उपागम निम्नलिखित हैं-

क्रमबद्ध उपागम : भूगोल प्राकृतिक तत्वों का अध्ययन एवं विभिन्न इकाइयों का सूक्ष्म अध्ययन करता है। किसी एक तत्व को विभिन्न संघटकों में विभाजित करके सूक्ष्म से सूक्ष्म स्तर तक विशिष्ट ज्ञान प्राप्त किया जाता है। इसे क्रमबद्ध विधि कहते हैं। इस विधि से भौतिक भूगोल के ज्ञान की शुद्धता की वृद्धि होती गई क्योंकि भौतिक भूगोल, प्राकृतिक तत्वों का विज्ञान है और यह विधि प्राकृतिक विज्ञान में ज्यादा सफल रही। हम्बोल्ट ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "Kosmos & Sketch of a Physical Description of the World" में भौतिक तत्वों का क्रमबद्ध अध्ययन प्रस्तुत किया। इस विधि में क्षेत्र या किसी देश के सन्दर्भ में एक-एक तत्व का सम्पूर्ण अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाता है। इसलिए इस विधि को टॉपिकल विधि भी कहा जाता है। इस विधि के अंतर्गत किसी एक विषय की अधिकतम जानकारी को सम्पूर्ण क्षेत्र के संदर्भ में प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है।

प्रादेशिक उपागम : प्रादेशिक विधि में सम्पूर्ण क्षेत्र को विभिन्न प्रदेशों में विभाजित करके प्रत्येक प्रदेश के सभी तत्वों का संश्लेषण किया जाता है। कार्ल रिटर ने पृथ्वी की सतह पर मानव और पृथ्वी पर पाए जाने वाले विभिन्न तत्वों के अध्ययन पर बल दिया। उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "Erdkunde" में प्रादेशिक विधि के अनुसार अध्ययन प्रस्तुत किया। यह किसी क्षेत्र के सम्पूर्ण तत्वों का समग्रता से अध्ययन करता है और तत्व एक दूसरे की संगतता में पाए जाते हैं और पृथ्वी का समांगता के आधार पर प्रादेशीकरण किया जाता है।

फर्डिनेण्ड रिचथोफेन ने इस बात की ओर ध्यान आकर्षित किया कि पृथ्वी के धरातल पर असमान दृश्य घटनाओं में अंतरक्रिया घटित होती है। भूगोल के उद्देश्य को स्पष्ट बनाने के लिए दोनों पद्धतियों को प्रयोग में लाना चाहिए। असमान वस्तुओं के अंतर्सबंध को समझने के लिए पहले प्रदेश की प्राकृतिक व्यवस्था में निहित अवयवों की व्याख्या करनी चाहिए उसके बाद प्राकृतिक व्यवस्था के प्रति मानव द्वारा स्थापित अनुकूलन की व्यवस्था का परीक्षण किया जाना आवश्यक है। फ्रांस के विद्वान विडाल डी ला ब्लाश ने विशिष्ट क्षेत्रों के अध्ययन पर बल दिया। उन्होंने प्राकृतिक और मानवीय विशेषताओं से युक्त 'पेज' (Pays) यानी विशिष्ट प्रदेशों का अध्ययन किया। उन्होंने इन लघु प्रदेशों को अध्ययन की आदर्श इकाई माना। ब्लाश की अध्ययन पद्धति आगमनात्मक थी और उनके अनुसार हर क्षेत्र अनूठा होता है।

ये दोनों विधियां आज भी भूगोल के अध्ययन में प्रयोग की जाती हैं और एक दूसरे से अलग होते हुए भी एक दूसरे की पूरक हैं और किसी प्रदेश का सम्पूर्ण अध्ययन प्रस्तुत करती हैं। ओ. एच. के. स्पेट ने अपनी पुस्तक "India, Pakistan and Ceylon" में दोनों विधियों का प्रयोग किया है।

निगमन विधि (Deductive Method)

निगमन विधि में सामान्य नियमों या स्वयंसिद्ध बातों को आधार मानकर तर्क की सहायता से निष्कर्ष निकाले जाते हैं। इसे एक उदाहरण से समझते हैं, यह स्वयंसिद्ध है कि हर उद्योगपति का उद्देश्य लाभ कमाना है और हम तर्क के आधार पर निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि क्योंकि अनिल अम्बानी उद्योगपति है तो वह भी लाभ अर्जित करना चाहता है। निगमन या अनुमान विधि बहुत पुरानी विधि है और ब्रिटिश दार्शनिक बेकन द्वारा इसका प्रयोग करने के कारण इसे बैकोनियन विधि भी कहा जाता है।

टिप्पणी

बोधगत अनुभव – अवर्गीकृत तथ्य – आगमनात्मक सामान्यीकरण – नियम एवं सिद्धांत

निगमन विधि प्राकृतिक विज्ञानों जैसे भौतिकी के नियम बनाने की विधि है। डार्विन के सिद्धांत के उपरांत आगमनात्मक विधि का स्थान निगमन विधि ने ले लिया। इस विधि में उपकल्पनाएं निर्मित की जाती हैं। आनुभविक आंकड़ों के सफल परीक्षण के उपरांत ही इनको नियम तथा सिद्धांत बनाया जाता है। यह एकमात्र वैज्ञानिक विधि मानी जाती है। परन्तु भूगोल में मनुष्य की उपस्थिति से कई बार सिद्धांत निर्माण सफल नहीं होते हैं।

निगमन विधि के प्रतिपादक अरस्तू हैं।

निगमन विधि के शिक्षण के दौरान प्रस्तुत विषयवस्तु की प्रमुख विशेषताएं निम्न प्रकार हैं–

1. सूक्ष्म से स्थूल की ओर
2. सामान्य से विशिष्ट की ओर
3. अज्ञात से ज्ञात की ओर
4. प्रमाण से प्रत्यक्ष की ओर
5. अमूर्त से मूर्त की ओर

शिक्षण की निगमन विधि में शिक्षण प्रक्रिया सामान्य से विशिष्ट की ओर उन्मुख होती है।

इस विधि में पाठ्यचर्या का क्रम सूक्ष्म से स्थूल की ओर होता है। विषयवस्तु के प्रस्तुतीकरण का क्रम अमूर्त से मूर्त की तरफ होता है। विषयवस्तु की प्रकृति अज्ञात से ज्ञात की ओर होती है।

आगमन विधि (Inductive Method)

आगमन विधि के जनक अरस्तू हैं। आगमन विधि में कई व्यक्तिगत उदाहरणों द्वारा सामान्य नियम बनाये जाते हैं।

आगमन विधि के सोपान

आगमन विधि के सोपान निम्नलिखित हैं–

- उदाहरणों का प्रस्तुतीकरण
- विश्लेषण
- सामान्यीकरण
- परीक्षण

आगमन विधि की विशेषताएं

इस विधि की विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. उदाहरण से नियम की ओर
2. स्थूल से सूक्ष्म की ओर
3. विशिष्ट से सामान्य की ओर
4. ज्ञात से अज्ञात की ओर

5. मूर्त से अमूर्त की ओर

6. प्रत्यक्ष से प्रमाण की ओर

टिप्पणी

आगमन विधि को प्राय: थकाने वाली शिक्षण विधि माना जाता है क्योंकि इसमें शिक्षण प्रक्रिया काफी लम्बी होती है।

इस विधि में तर्क का क्रम विशिष्ट से सामान्य की ओर चलता है। इस विधि में बहुत-सी विशिष्ट घटनाओं अथवा तथ्यों का अवलोकन एवं अध्ययन करके प्रयोग के आधार पर सामान्य निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

आगमन विधि को हम एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, हमने प्रयोग करके यह देखा कि किसी वस्तु का मूल्य गिरने पर 35 व्यक्ति उसे अधिक खरीदते हैं तो इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वस्तु का मूल्य गिरने पर उसकी मांग बढ़ जाती है। इस विधि में तर्क का क्रम विशेष से सामान्य की तरफ होता है।

आगमन विधि के प्रकार

आगमन विधि के दो प्रकार होते हैं- (i) प्रायोगिक आगमन विधि, तथा (ii) सांख्यिकीय आगमन विधि।

प्रायोगिक आगमन विधि में कुछ नियन्त्रित प्रयोग किए जाते हैं और उनके आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं । भूगोल जैसे सामाजिक विज्ञान में नियन्त्रित प्रयोगों के लिए बहुत कम क्षेत्र उपलब्ध होता है, इसलिए प्रयोगात्मक आगमन विधि का प्रयोग भूगोल में बहुत सीमित मात्रा में ही किया जा सकता है। सांख्यिकीय आगमन विधि के अन्तर्गत सम्बन्धित घटनाओं के बारे में विभिन्न क्षेत्रों के आंकड़े एकत्रित किए जाते हैं और उनका वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया जाता है, तथा सांख्यिकीय उपकरणों की सहायता से सामान्य निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

आगमन विधि को अनेक नामों से पुकारा जाता है। यह विधि ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित होने के कारण ऐतिहासिक विधि, वास्तविक तथ्यों पर आधारित होने के कारण वास्तविक प्रणाली, सांख्यिकीय आंकड़ों पर आधारित होने के कारण सांख्यिकीय प्रणाली, अनुभव द्वारा निकाले गए निष्कर्ष पर आधारित होने के कारण अनुभव सिद्ध विधि तथा वास्तविक प्रयोगों पर आधारित होने के कारण प्रायोगिक विधि के नाम से पुकारी जाती है। आगमन प्रणाली का प्रयोग रोसरनीज, मौलर, फ्रेडरिक, लिस्ट, लैस्ली आदि अर्थशास्त्रियों ने अधिक किया है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. भूगोल के अध्ययन की विधि है-

   (क) क्षेत्र अध्ययन　　(ख) मानचित्र एवं मानचित्रण

   (ग) सांख्यिकीय विश्लेषण　　(घ) उपर्युक्त सभी।

4. भूगोल के अध्ययन की आधुनिक विधि है-

   (क) आंकड़ा अर्जन　　(ख) आंकड़ा विश्लेषण

   (ग) क, ख दोनों　　(घ) इनमें से कोई नहीं।

टिप्पणी

3.4 भूगोल के अध्ययन की विधियां- भाग 2

भूगोल का प्रमुख कार्य किसी क्षेत्र की विशेषताओं को समझना और उनको प्रभावित और रूपांतरित करने वाले विभिन्न अंतरसंबंधित कारकों जैसे भौतिक, सामाजिक, जैविक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक कारकों का अध्ययन करना है। इन सभी अंतरसंबंधित तत्त्वों के अध्ययन के लिए बहुत सी तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। सबसे प्राचीन और उपयोगी तकनीक मानचित्रों की प्रस्तुति है। इस तकनीक के साथ आंकड़ों /सूचनाओं की प्राप्ति और विश्लेषण की तकनीकों में प्रगति होती गई और इसमें वायुव फोटोग्राफी, उपग्रह छायाचित्र, कंप्यूटर प्रणाली, सांख्यिकीय विधियां, दूर-संवेदन, भौगोलिक सूचना तंत्र और कंप्यूटर मानचित्रण भी सम्मिलित होते चले गए।

क्षेत्र अध्ययन (Field Survey)

क्षेत्र अध्ययन, अध्ययन के उद्देश्य, अध्ययन की वस्तु और उपकल्पना पर आधारित होता है। उदाहरणस्वरूप अगर प्राकृतिक भूदृश्य का अध्ययन करना है तो उन्हीं पर आधारित तत्वों से संबंधित सूचनाएं एकत्रित करनी पड़ेंगी। धरातल पत्रक इसी प्रकार के अध्ययन से प्राप्त सूचनाओं से तैयार किए जाते हैं। सभी प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता, उनके प्रयोग पर निरंतर अनुश्रवण के लिए वायव चित्रों और उपग्रह से प्राप्त छायाचित्रों का निरंतर अध्ययन करना पड़ता है। बदलते परिवेश में इन उपग्रह छायाचित्रों की मांग और अनिवार्यता बढ़ गई है। भारत का राष्ट्रीय दूरस्थ संवेदन संस्थान (NRSA), हैदराबाद और प्रादेशिक केंद्र जैसे देहरादून, जोधपुर, नागपुर, भुवनेश्वर आदि इस श्रृंखला में अति महत्वपूर्ण हैं। इन उपग्रह छायाचित्रों का भू-उपयोग, वन आच्छादन, बंजर भूमि, मिट्टी सर्वेक्षण, पारिस्थितिक तंत्र, कृषि फसलों का ब्यौरा, नदी तंत्रों का अध्ययन, वाटर शेड मैनेजमेंट, जंगली जीवों के अध्ययन आदि में विशेष योगदान है। चाहे प्राकृतिक तत्व हों या मानवीय तत्व हों सभी में परिवर्तन होता है और इन परिवर्तनों को समझने के लिए क्षेत्र अध्ययन करना पड़ता है। भूमि उपयोग, प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल, वन, खनिज संसाधन के उपयोग से संबंधित प्रश्नों या समस्याओं, जिनका जन हित में अध्ययन जरूरी हो जाता है आदि के गहन अध्ययन के लिए पूर्व सर्वेक्षित मानचित्र, हवाई चित्र, छायाचित्र आदि की आवश्यकता पड़ती है जो संसाधन विशेष की स्थिति, वितरण, प्रतिरूप, दशा आदि दर्शाते हैं जिनका क्षेत्र सत्यापन करना होता है, तो दूसरी ओर उस जन समुदाय की आवश्यकताओं, अनिवार्यताओं, आकांक्षाओं और विविध सामाजिक प्रथाओं, व्यवस्थाओं व सांस्कृतिक मूल्यों, मान्यताओं का आकलन करना अनिवार्य होता है जो इन संसाधनों पर आश्रित या उनको प्रभावित करते हैं। इन सबको बिना क्षेत्र अध्ययन के जानना और समझना असंभव है।

क्षेत्र अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारतीय सर्वेक्षण विभाग के धरातल पत्रकों तथा वायव चित्रों या उपग्रह छायाचित्रों में दृश्य तत्वों का भौतिक सत्यापन करना है। इससे इनका विवेचन आसान हो जाता है और त्रुटि की गुंजाइश नहीं रहती। इसके लिए संबंधित मानचित्र और छायाचित्र की उत्तर दिशा का मिलान करना अनिवार्य है। पहले उन तत्वों का मिलान करते हैं जिनको सरलता से पहचाना जा सकता है। ऐसे दो बिंदुओं को सीधी रेखा से मिलाकर इसे इस तरह से घुमाते हैं कि उन्हीं दो बिंदुओं की धरातल पर स्थिति के समकक्ष हो जाए।

किसी भी क्षेत्र में स्थिर और गतिशील दो प्रकार के तत्व पाए जाते हैं। अधिवास, नगर, सड़क आदि स्थिर और वाहन, फसल आदि गतिशील तत्व होते हैं। सांस्कृतिक व सामाजिक तत्वों का अध्ययन द्वितीय आंकड़ों से नहीं हो सकता। इसके लिए लघु क्षेत्रों के अध्ययन के लिए स्वयं अध्ययन करके समुचित आंकड़े जुटाने की आवश्यकता होती है। इसके लिए वैज्ञानिक प्रतिदर्श चयन पद्धति का अनुसरण करते हुए प्रतिदर्श क्षेत्रों के प्रतिदर्श उत्तरदाताओं से प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार के माध्यम से सूचनाएं या आंकड़े एकत्रित करना अनिवार्य होता है। प्रश्नावली तैयार करते समय कुछ मूलभूत सिद्धांतों का अनुसरण करना आवश्यक है, जिनमें से प्रमुख हैं–

1. प्रश्न अध्ययन के उद्देश्य के अनुसार होने चाहिए।
2. प्रश्न अधिक लंबे और कठिन नहीं होने चाहिए।
3. प्रश्न साधारण भाषा में होने चाहिए जिन्हें आसानी से समझा जा सके।
4. प्रश्न हां/ना अथवा वैकल्पिक संभावना वाले होने चाहिए।
5. किसी तत्व के लिए अनेक कारक उत्तरदायी होते हैं जिनका महत्व वरीयता क्रम में स्पष्ट हो सकता है। उत्तरदाता के सम्मुख संभावित कारकों की सूची होनी चाहिए ताकि वह वरीयता क्रम से उत्तर प्रदान कर सके।
6. उत्तरदाता को यह विश्वास होना चाहिए कि उसका परिचय गुप्त रखा जाएगा।
7. उत्तरदाता के सम्मुख ऐसा कोई प्रश्न नहीं रखना चाहिए जिससे उसकी गोपनीयता या भावनाओं को आघात लगे।

किसी प्रश्नावली को तैयार करने से पहले कुछ उतरदाताओं पर इसका परीक्षण कर लेना चाहिए और इसमें आने वाली समस्याओं या कठिनाइयों का समाधान कर लेना चाहिए।

मानचित्र एवं मानचित्रण (Map and Cartography)

क्षेत्र सर्वेक्षण अथवा द्वितीय स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों और सूचनाओं को मानचित्र पर प्रदर्शित किया जाता है। इसके अंतर्गत हम पृथ्वी या उसके किसी एक भाग को कुछ रूढ़ चिह्नों और मापक द्वारा एक समतल सतह पर कुछ प्रक्षेपों द्वारा प्रदर्शित करते हैं।

मानचित्र में प्रदर्शित की गई सूचनाएं उसके पैमाने, रूढ़ चिह्न, मानचित्र की विधि, निर्माणकर्ता के कौशल और प्रक्षेप पर निर्भर करती हैं। वृहद पैमाने पर अधिक तत्वों को प्रदर्शित किया जा सकता है। पृथ्वी तल का मानचित्रण थिओडोलाइट, प्लेन टेबल आदि विभिन्न प्रकार के यंत्रों द्वारा, छवि चित्रों, रेखांकन से किया जा सकता है।

अक्षांश और देशांतर रेखाओं का जाल और कुछ रूढ़ चिह्नों के द्वारा मानचित्र को बनाया जाता है।

अब छायाचित्रों और कंप्यूटर प्रोग्रामिंग द्वारा मानचित्र बनने लगे हैं। मानचित्रण की विधि, क्षेत्र के आकार, शुद्धता और समाविष्ट सूचनाओं की मात्रा पर निर्भर करती है।

मानचित्रों के प्रकार– मानचित्रों का पैमाने और उद्देश्य के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है।

1. पैमाने के आधार पर कई प्रकार के मानचित्र बनाए जाते हैं–

(अ) भूसम्पत्ति या कैडस्ट्रल मानचित्र : यह मानचित्र सरकारों द्वारा भू स्वामित्व का रिकॉर्ड रखने और लगान वसूली के लिए तैयार करवाए जाते थे।

टिप्पणी

(ब) धरातल पत्रक : ये वास्तविक सर्वेक्षण पर आधारित किसी क्षेत्र के प्राकृतिक और सांस्कृतिक तत्वों को दर्शाते हैं। इनमें प्रमुख भूआकृतियां जैसे उच्चावच एवं अपवाह, दलदल, वन, अधिवास, परिवहन के मार्ग दर्शाए जाते हैं। इस वर्ग का सबसे छोटे पैमाने का मानचित्र मिलियन शीट अपने नाम के अनुरूप 1: 100000 होता है। इस मापक पर विश्व के सभी देशों के मानचित्र बनाने का प्रस्ताव 1891 में अंतरराष्ट्रीय भूगोल सम्मेलन (बर्न) में प्रोफेसर पेंक ने दिया था जो 1909 के लंदन सम्मेलन में विभिन्न राष्ट्रों के मध्य सन्धि के रूप में परिणत हुआ। इसकी पुन: पुष्टि 1913 में पेरिस सम्मेलन में हुई। इसी कारण इसे अंतरराष्ट्रीय मानचित्र भी कहते हैं। इसके अनुसार सम्पूर्ण विश्व के 2222 मानचित्र तैयार किए गए। 60^0 उत्तर एवं 60^0 दक्षिण के मध्य क्षेत्र हेतु अट्ठारह सौ शीट (जिसमें प्रत्येक का विस्तार 4 डिग्री अक्षांश और 6 डिग्री देशांतर) 60^0 से 88^0 देशांतर के मध्य क्षेत्र के लिए 420 शीट (प्रत्येक का विस्तार 4 डिग्री अक्षांश और 12 डिग्री देशांतर) तथा ध्रुवों के चतुर्दिक 2^0 के लिए 2 शीट बनाने की योजना बनाई गई थी।

भारतीय उपमहाद्वीप में प्रत्येक मिलियन शीट का विस्तार 4 डिग्री अक्षांश और 4 डिग्री देशांतर रखा गया और प्रत्येक डिग्री शीट को 1 डिग्री अक्षांश और देशांतर विस्तार के साथ 16 भागों में विभाजित करके 1" = 4 मील के पैमाने पर बने मानचित्र डिग्री शीट कहलाए। प्रत्येक डिग्री शीट को 16 भाग में विभक्त करके 15' अक्षांश-देशांतर वाले 1"= 1 मील के पैमाने पर धरातल पत्रक बने हैं।

(स) भित्ति चित्र : कक्षाओं के अध्यापन हेतु भित्ति मानचित्र तैयार किए जाते हैं। इनका स्केल धरातल पत्रक से छोटा परंतु एटलस से बड़ा होता है। इन पर संपूर्ण विश्व के प्रमुख तत्वों के वृहद स्वरूप प्रदर्शित किए जाते हैं।

(द) एटलस या कोरोग्राफी मानचित्र : यह मानचित्र लघु पैमाने पर बनते हैं अत: इन पर प्रदर्शित तत्व सामान्यीकृत होते हैं। टाइम सर्वे एटलस ऑफ वर्ल्ड 1:1,000,000 पर बनाई गई है। भारत में नेशनल एटलस आर्गेनाईजेशन द्वारा राष्ट्रीय एटलस तैयार की गई है।

2 मानचित्रों को उद्देश्य के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है-

भौतिक मानचित्र, जनसंख्या व बस्ती मानचित्र, समाज-सांस्कृतिक मानचित्र, राजनीतिक मानचित्र, ऐतिहासिक मानचित्र, सैनिक मानचित्र आर्थिक मानचित्र।

भौतिक मानचित्रों को पुन: खगोलीय मानचित्र, समदिकपाती मानचित्र, भूकंप मानचित्र, भूवैज्ञानिक मानचित्र, उच्चावच मानचित्र, जलवायु और मौसम मानचित्र, मृदा मानचित्र, वनस्पति मानचित्र, अपवाह मानचित्र और महासागरीय मानचित्र में बांटा जाता है।

आर्थिक मानचित्र को पुन: भूमि उपयोग मानचित्र, परिवहन मानचित्र, कृषि मानचित्र, औद्योगिक मानचित्र में बांटा जाता है।

आरेख : आर्थिक भूगोल में प्राय: सांख्यिकी आंकड़ों की आवश्यकता पड़ती है जिनके सांख्यिकी के विभिन्न आर्थिक तत्वों से संबंधित वितरण और अवस्थिति के विश्लेषण किए जाते हैं। आरेख ऐसी युक्ति होती है जिनकी सहायता से कठिन और नीरस प्रतीत होने वाले सांख्यिकी आंकड़ों को न केवल सरल, समझने योग्य एवं आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता है अपितु बिना किसी अतिरिक्त परिश्रम के आसानी से तुलना भी की जा सकती है। आरेख तीन प्रकार के होते हैं- एक विम आरेख, द्विविम आरेख, त्रिविम आरेख।

1. एक विम आरेख में दण्ड आरेख, मिश्रित दंड आरेख, पिरामिड आरेख, साधारण पवनारेख, प्रकीर्ण आरेख, वर्षा परिक्षेपण आरेख आते हैं।
2. द्विविम आरेख में इकाई वर्ग आरेख, स्क्वायर ब्लॉक आरेख, आयताकार आरेख, चक्र या वृत्तारेख, वलय आरेख आते हैं।
3. त्रिविम आरेख में गोलीय आरेख, घनारेख, ब्लॉक पुंज आरेख आदि आते हैं।

सांख्यिकीय विश्लेषण (Statistical Analysis)

भूगोल में 1960 के दशक में सांख्यिकीय क्रांति प्रारंभ हुई। भूगोलवेत्ताओं को इसकी प्रेरणा वियना सर्किल के विद्वानों के इस निष्कर्ष से मिली कि कोई भी विषय विज्ञान की कोटि में तब तक शामिल नहीं किया जा सकता जब तक कि वह मूल्य निरपेक्ष, प्रत्यक्ष अवलोकन पर आधारित एवं वस्तुनिष्ठ न हो।

सांख्यिकीय विधि से तात्पर्य है आंकड़ों का संग्रहण, संघनन, परिष्करण, मानकीकरण, मूल्यांकन एवं विश्लेषण। भूगोल के क्षेत्र में अध्ययन की जाने वाली लगभग प्रत्येक समस्या में सांख्यिकीय विधियों का समावेश हो जाने से उसका गुणात्मक लक्षण मात्रात्मक लक्षण में परिवर्तित हो गया।

आंकड़ों का संग्रहण (Collection of data)– आंकड़ों को दो भागों में विभाजित किया जाता है– प्राथमिक आंकड़े और द्वितीय आंकड़े।

जो आंकड़े किसी अनुसंधानकर्ता या संस्था के द्वारा पहली बार एकत्रित किए जाते हैं उन्हें प्राथमिक आंकड़े कहते हैं।

इसके विपरीत वे आंकड़े जिन्हें कोई अनुसंधानकर्ता स्वयं एकत्रित न करके किसी प्रकाशित या अप्रकाशित स्रोतों से प्राप्त करता है उन्हें द्वितीय आंकड़े कहते हैं।

प्राथमिक आंकड़ों को व्यक्तिगत परीक्षण के द्वारा, साक्षात्कार के द्वारा, प्रश्नावली के द्वारा, अनुसूची के द्वारा एकत्रित किया जाता है।

प्राथमिक आंकड़े प्रतिचयन या प्रतिदर्श विधि के द्वारा एकत्रित किए जाते हैं। सांख्यिकी में अध्ययन की विषयवस्तु की समस्त इकाइयों के समुदाय को समग्र या समष्टि कहते हैं तथा वास्तविक अध्ययन हेतु चुनी गई इकाइयां प्रतिनिधि इकाई या प्रतिदर्श इकाइयां कहलाती हैं।

प्रतिचयन के लिए कई विधियों का सहारा लिया जाता है। मोटे तौर पर प्रतिचयन दो प्रकार का होता है- 1 सोद्देश्य या व्यक्तिनिष्ठ, 2 यादृच्छिक या वस्तुनिष्ठ या संभावनापूर्ण।

टिप्पणी

यादृच्छिक विधि में समष्टि से नमूने अनायास, लॉटरी या किसी विशेष सारिका जिसे ट्रिपेड रैंडम तालिका कहते हैं, के अनुसार चुने जाते हैं। यादृच्छिक प्रतिचयन में समग्र की कोई भी इकाई प्रतिदर्श अध्ययन के लिए चुनी जा सकती है। व्यक्तिगत पक्षपात से रहित होने के कारण यादृच्छिक प्रतिदर्श समग्र के वास्तविक प्रतिनिधि माने जाते हैं। यादृच्छिक प्रतिचयन विधि दो प्रकार की होती है– 1 सरल यादृच्छिक प्रतिचयन, 2 स्तरित यादृच्छिक प्रतिचयन।

आंकड़ों के विश्लेषण के लिए पहला कदम होता है आंकड़ों को व्यवस्थित करना। जब आंकड़ों के विस्तार को देखते हुए उन्हें आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करते हैं तो उसे क्रमबद्ध श्रेणी कहते हैं। तत्पश्चात अध्ययन के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए इसे संघनित करते हैं। इसके अंतर्गत वर्गीकरण और श्रेणीकरण दोनों समाहित होते हैं। सर्वप्रथम आंकड़ों को सतत (Continuous) सुस्पष्ट (Discrete) इकाइयों में व्यवस्थित करते हैं। उसके उपरांत आवृत्ति तालिका निर्मित की जाती है।

आवृत्ति तालिका बनाए जाने के उपरांत उसको प्रदर्शित किया जाता है। यदि ग्राफ पेपर में क्षैतिज अक्ष पर वर्गान्तर तथा ऊर्ध्वाधर अक्ष पर बारंबारता संख्या को दिखाकर दण्ड आरेख बना दिया जाए तो यह आयत चित्र कहलाएगा। आरेख के दंडों की ऊपरी भुजा के मध्य बिंदु को सीधी रेखा के द्वारा मिला देने से प्राप्त आरेख को बारंबारता बहुभुज कहा जाता है। इन बिंदुओं को हाथ से वक्राकार रेखा द्वारा मिलाने पर बारंबारता वक्र बनाया जाता है। यदि ऊर्ध्वाधर अक्ष पर बारंबारता के स्थान पर संचयी आवृत्ति के मूल्य लिखकर कोई आरेख खींचा जाए तो वह आरेख ओजाइव या संचयी आवृत्ति वक्र कहलाता है।

अवस्थिति या केंद्रीय प्रवृति के माप (Measures Of Central Tendency)

केंद्रीय प्रवृत्ति उस माप को कहते हैं, जो दिए गए आकड़ों (Data) का प्रतिनिधित्व करता है।" ये मुख्यतया 3 प्रकार के होते हैं– माध्य, माध्यिका और बहुलक।

माध्य– किसी तत्व के विभिन्न मानों को जोड़कर उसके योग को कुल संख्या से विभाजित कर देने पर जो मान प्राप्त होता है उसे माध्य कहते हैं।

माध्यिका– किसी समंक श्रेणी के मूल्यों को आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित करने के पश्चात जो मूल्य श्रेणी के मध्य में स्थित होता है उसे श्रेणी का माध्यिका मूल्य कहते हैं।

बहुलक– किसी आंकड़ा क्रम में सर्वाधिक आवृत्ति वाले मान को बहुलक कहा जाता है।

प्रकीर्णता (Dispersion)

सांख्यिकी आंकड़ों के विश्लेषण में आंकड़ों की केंद्रीयता के साथ-साथ उसके फैलाव को जानना भी आवश्यक होता है इसे समझने के लिए प्रसार, चतुर्थक, दशमक, शतमक, माध्य विचलन और मानक विचलन ज्ञात करते हैं। ये किसी आंकड़े के केंद्रीय मान से दूरी को प्रदर्शित करते हैं।

प्रसार– यह फैलाव का सरलतम मापक है जो आंकड़ों के अधिकतम और न्यूनतम के अंतर को दर्शाता है। इसका उपयोग जलवायु की दशाओं को समझने के लिए

करते हैं। यदि किसी नगर का अधिकतम औसत तापमान 45 डिग्री सेल्सियस और न्यूनतम तापमान 30 डिग्री सेल्सियस हो तो इसका प्रसार 15 डिग्री हुआ।

चतुर्थक– किसी आंकड़े के संपूर्ण विस्तार को चार भागों में विभक्त कर देने पर उसके चतुर्थक ज्ञात हो जाते हैं। इसे प्रथम से अंतिम को क्रमशः Q_1, Q_2, Q_3, Q_4 कहते हैं।

दशमक– यह आंकड़े की श्रेणी को संपूर्ण दस भागों में विभक्त करती है।

शतमक– आंकड़े की श्रेणी को सौ भागों में व्यक्त करती है।

मानक विचलन- किसी समंक श्रेणी के समांतर माध्य से उसके विभिन्न पद मूल्यों के विचलनों के वर्गों के समांतर माध्य के वर्गमूल को श्रेणी का मानक विचलन या प्रमाप विचलन कहते हैं।

माध्य विचलन– किसी समांतर श्रेणी के समांतर माध्य, बहुलक अथवा माध्यिका से श्रेणी के विभिन्न पद मूल्यों के विचलनों के समांतर माध्य को माध्य विचलन कहते हैं।

सहसम्बन्ध (Correlation)

सांख्यिकी में सहसंबंध के अंतर्गत यह ज्ञात किया जाता है कि दो या दो से अधिक समंक श्रेणियों के चर मूल्यों में कोई पारस्परिक संबंध है या नहीं। यदि कोई परस्पर संबंध है तो उसकी दिशा या परिमाण क्या है। यदि दो समंक श्रेणियों के चर मूल्य स्वतंत्र रूप से घटते बढ़ते हैं अर्थात एक श्रेणी के चर मूल्यों में वृद्धि या ह्रास का दूसरी श्रेणी के चर मूल्यों की वृद्धि या ह्रास पर कोई प्रभाव नहीं होता तो उन समंक श्रेणियों में संबंध का अभाव माना जाएगा।

सहसंबंध दो प्रकार का होता है– 1. धनात्मक क्रिया या प्रत्यक्ष सहसंबंध, 2. ऋणात्मक या विलोम या अप्रत्यक्ष सहसंबंध।

सहसंबंध को हम कुछ विधियों से ज्ञात करते हैं– 1. कार्ल पियर्सन सहसंबंध गुणांक विधि 2. स्पीयरमैन की कोटि अंतर विधि।

समाश्रयण रेखा (Regression Line)

यदि सामान्य सहसंबंध का बोध होने के पश्चात यह जानना हो कि एक चर में परिमाण में परिवर्तन होने पर दूसरे चर में कितना अपेक्षित परिवर्तन होगा तो इसके लिए समाश्रयण रेखा खींचने की आवश्यकता होती है। समाश्रयण गुणांक ज्ञात करना होता है। समाश्रयण रेखा, प्रकीर्ण रेखा अत्युत्तम रेखा होती है। इसकी गणना न्यूनतम वर्ग विधि से की जाती है।

कारक विश्लेषण (Factor Analysis)

भौगोलिक अंतर संबंध जटिल होते हैं। किसी क्षेत्र में तत्व विशेष की व्याख्या मात्र दो चरों में सहसंबंध से नहीं की जा सकती है। इसके लिए अनेक कारकों में परस्पर सहसंबंध ज्ञात करना होता है। अनेक कारक ऐसे होते हैं जिनमें परस्पर सहसंबंध उच्चस्तरीय होता है और वे साथ ही साथ अन्य तत्वों को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए मानव विकास स्तर, प्रति व्यक्ति आय, औद्योगिक विकास, ऊर्जा की उपलब्धता, शिक्षा का स्तर,

अवस्थापना का स्तर, स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धि आदि अनेक कारकों पर निर्भर करता है।

आधुनिक विधियां

आधुनिक युग में आंकड़ा संग्रह, संप्रेषण का चित्रण सरल हो गया है। किसी भी तत्व की जानकारी प्राप्त करने के लिए निकट पहुंच आवश्यक नहीं हैं। कोई तत्व कितना ही अगम्य हो उसके बारे में दूर संवेदन के द्वारा जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

दूर संवेदन का तात्पर्य उन विधियों से है जिनमें किसी लक्ष्य को पहचानने तथा उसके लक्षणों को मापने के लिए विद्युत चुंबकीय ऊर्जा जैसे प्रकाश, ऊष्मा व रेडियो तरंगों का प्रयोग किया जाता है। दूर संवेदन में आंकड़ा अर्जन और आंकड़ा विश्लेषण प्रक्रियाएं महत्वपूर्ण होती हैं।

(1) आंकड़ा अर्जन (Data Acquisition)– आंकड़ा अर्जन का अर्थ उन विधियों से है जिनका प्रयोग करके किसी संसाधन, वस्तु या क्षेत्र की जानकारी जुटाई जाती है। सूचनाएं दो प्रकार से प्राप्त होती हैं- (अ) चित्रीय (ब) अंकीय।

आंकड़ा अर्जन 6 अवस्थाओं में पूर्ण होता है।

प्रथम- ऊर्जा के किसी स्रोत की प्राप्ति होना... सूर्य एक प्राकृतिक स्रोत है या किसी अप्राकृतिक स्रोत जैसे विद्युत् बल्ब आदि। सूर्य के प्रकाश में की गई फोटोग्राफी निष्क्रिय फोटोग्राफी और विद्युत बल्ब के प्रकाश में की गई फोटोग्राफी सक्रिय फोटोग्राफी कहलाती है। द्वितीय– सूर्य से विकरित विद्युत चुंबकीय ऊर्जा तरंगों के रूप में संचरण करती है। तृतीय– पृथ्वी पर पहुंचने वाली ऊर्जा धरातल के पदार्थों से अन्योन्यक्रिया करती है। चतुर्थ– धरातल तथा आपतित ऊर्जा की अन्योन्यक्रिया से विद्युत चुंबकीय आवेग उत्पन्न होते हैं। इन आवेगों को किसी संवेदक तक पहुंचने के लिए परावर्तित तथा उत्सर्जित प्रकाश के रूप में वायुमंडल से पुनः संचरण करना पड़ता है। पंचम– धरातल से आने वाले विद्युत चुंबकीय आवेगों को ग्रहण करने के लिए दूर संवेदन में दो प्रकार के स्थानीय प्लेटफार्म चुने जाते हैं– (1) वायु आधारित प्लेटफार्म जैसे गैस के गुब्बारे, वायुयान (2) अंतरिक्ष आधारित प्लेटफार्म जैसे रॉकेट, अंतरिक्ष यान, कृत्रिम उपग्रह। षष्टम– कैमरा भी संवेदक है जिससे धरातल या दृश्य क्षेत्र का सीधा फोटोग्राफ प्राप्त हो जाता है। इसके विपरीत अन्य प्रकार के संवेदक धरातल से परावर्तित विद्युत चुंबकीय आवेगों को अंकों के रूप में आरेखित करते हैं। अंकों के रूप में भेजे गए दत्त उत्पाद को भू-आधारित दत्त प्राप्ति केंद्रों में कम्प्यूटर अनुकूल टेप पर साथ-साथ रिकॉर्ड करते रहते हैं।

(2) आंकड़ा विश्लेषण (Data Analysis)– वायुमंडल या अंतरिक्ष आधारित संवेदकों द्वारा भेजे गए दत्त उत्पाद में दृश्य क्षेत्र के सभी विवरण अंकित होते हैं। इन विवरणों की पहचान के लिए पर्याप्त ज्ञान, अभ्यास, मेहनत और अनुभव की आवश्यकता होती है। कम्प्यूटर अनुकूलन टेप पर अंकित अंकीय डाटा को कम्प्यूटर व अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की सहायता से प्रतिबिंबों में परिवर्तित किया जाता है। इसके उपरांत विभिन्न प्रकार के दर्शन उपकरणों जैसे स्टीरियोस्कोप स्टीरियोमीटर आदि व अन्य तकनीकों की मदद से सभी प्रकार के वायुव फोटोचित्रों का विश्लेषण किया जाता है।

दूर संवेदन में चित्रीय आंकड़ा प्राप्त करने की दो विधियां होती हैं– 1. फोटोग्राफी विधि, 2. इलेक्ट्रॉनिक विधि।

फोटोग्राफी विधि में किसी सामान्य कैमरे के भीतर एक ऐसी पारदर्शी फिल्म का प्रयोग करते हैं जिसकी सतह पर प्रकाश के प्रति संवेदनशील पदार्थ का महीन लेप चढ़ा होता है। यह लेप दृश्य क्षेत्र से परावर्तित विद्युत चुंबकीय ऊर्जा के भिन्न-भिन्न आवेगों से भिन्न-भिन्न मात्रा में रासायनिक अभिक्रिया करके फिल्म की सतह पर उस दृश्य क्षेत्र का नेगेटिव चित्र अंकित कर देता है।

इलेक्ट्रॉनिक विधि में चित्रीय उत्पाद प्राप्त करने के लिए सुग्राही फिल्म की बजाय किसी इलेक्ट्रॉनिक संवेदक का प्रयोग किया जाता है। इलेक्ट्रॉनिक संवेदक को तापीय संवेदक भी कहते हैं। वीडियो कैमरा ऐसे संवेदकों का उदाहरण है।

अपनी प्रगति जांचिए

5. स्थानीय विश्लेषण की प्रकृति और प्रक्रिया में किस विज्ञान का प्रयोग होता है?
   (क) वर्गीकृत विज्ञान (ख) ऐतिहासिक विज्ञान
   (ग) क्षेत्रीय या स्थान-संबंधी विज्ञान (घ) उपर्युक्त सभी।
6. स्थानिक वितरण की विशेषताओं में शामिल है-
   (क) आवृत्ति (ख) अक्षांश-देशांतर
   (ग) ऊंचाई (घ) उपर्युक्त सभी।

3.5 स्थानिक विश्लेषण की प्रकृति और प्रक्रिया

ज्ञान से तात्पर्य एक ऐसे त्रिविमीय विन्यास से है जिसे पूर्णरूप से समझने के लिए हमें तीन दृष्टिकोणों से निरीक्षण करना चाहिए। इनमें से किसी भी एक बिन्दु वाला निरीक्षण एक पक्षीय ही होगा और वह संपूर्णता को प्रदर्शित नहीं करेगा। एक बिन्दु से हम वस्तुओं के संबंध देखते हैं। दूसरे से काल के संदर्भ में उसका विकास और तीसरे से क्षेत्रीय संदर्भ में उनके क्रम और वर्गीकरण का निरीक्षण करते हैं। इस प्रकार प्रथम वर्ग के अंतर्गत वर्गीकृत विज्ञान (Classified Science), द्वितीय वर्ग में ऐतिहासिक विज्ञान (Historial Sciences), और तृतीय वर्ग में क्षेत्रीय या स्थान-संबंधी विज्ञान (Spatial sciences) आते हैं।

वर्गीकृत विज्ञान पदार्थों या तत्वों की व्याख्या करते हैं अत: इन्हें पदार्थ विज्ञान (Material Sciences) भी कहा जाता है। ऐतिहासिक विज्ञान काल के संदर्भ में तत्वों या घटनाओं के विकासक्रम का अध्ययन करता है। क्षेत्रीय विज्ञान तत्वों या घटनाओं का विश्लेषण स्थान या क्षेत्र के संदर्भ में करते हैं। पदार्थ विज्ञानों के अध्ययन का केन्द्र बिन्दु 'क्यों ', 'क्या' और 'कैसे' है। ऐतिहासिक विज्ञानों का केन्द्र बिन्दु 'कब' है तथा क्षेत्रीय विज्ञानों का केन्द्र बिन्दु 'कहां' है।

स्थानिक विज्ञानों (Spatial Sciences) को दो प्रधान वर्गों में विभक्त किया जाता है-

(1) खगोल या अंतरिक्ष विज्ञान (Astronomy) जिसके अंतर्गत आकाशीय पिण्डों का अध्ययन किया जाता है।

(2) भूगोल (Geography) से तात्पर्य पृथ्वी के तल पर तथ्यों तथा घटनाओं के वितरण के अध्ययन से है। इस प्रकार हम पाते हैं कि भूगोल एक भूविस्तारीय विज्ञान

(Chorological science) है जो 'कहां' की खोज पृथ्वी के तल पर करता है। 'पृथ्वी के तल' का अभिप्राय केवल पृथ्वी की ऊपरी सतह से ही नहीं है बल्कि इसके भूतल से संलग्न उस स्थल, जल तथा वायुमण्डल को भी समाहित किया जाता है जहां तक किसी माध्यम से मनुष्य की पहुंच है। इस प्रकार भूतल के अंतर्गत तीन प्रकार के क्षेत्र शामिल हैं–

(1) पृथ्वी की ऊपरी सतह तथा उसके नीचे की पतली भूपर्पटी।

(2) भूतल के ऊपर स्थित निचला वायुमण्डल।

(3) पृथ्वी पर स्थित जलीय भाग।

इन तीनों क्षेत्रों को क्रमशः स्थल मंडल (Lithosphere), वायुमण्डल (Atmosphere) और जल मंडल (Hydrosphere) के नाम से जाना जाता है।

स्थानिक संगठन

स्थान और स्थानिक संगठन हमेशा ही सभी ज्ञानविदों का ध्यान केंद्रित करता रहा है। भूगोल में स्थान से अभिप्राय किसी क्षेत्र से है न कि किसी खगोलीय या अमूर्त तत्व से।

भूगोल में स्थानिक संगठन की संकल्पना का विकास 1970 के दशक से तीव्रता से प्रारंभ हुआ। भौगोलिक दृष्टिकोण के संदर्भ में किसी क्षेत्र में समाज या समुदाय की क्रियाओं और प्रयोग के परिणामस्वरूप उत्पन्न संबंधित स्थानिक प्रतिरूप जो वहां निवास करने वाले व्यक्तियों या पर्यावरण के मध्य प्रतिक्रिया का परिणाम होता है, स्थानिक संगठन के रूप में पहचाना जाता है। सर्वप्रथम अमेरिकी भूगोलवेत्ता उलमान, 1957 ने अपनी पुस्तक 'अमेरिकन कमोडिटी' में भौगोलिक क्षेत्रों की पारस्परिक निर्भरता को स्पष्ट करने के लिए स्थानिक प्रतिक्रिया शब्दावली का प्रयोग किया था। इसके उपरांत उन्होंने इसे अधिक स्पष्ट रूप से 1980 में समझाया।

स्थानिक संगठन का इतिहास

स्थान का प्रयोग और अभिप्राय समय के साथ बदलता रहा है–

प्राचीन काल : स्थान से संबंधित विचार बहुत समय से इंसान की सोच का अहम हिस्सा रहा है। स्थान से संबंधित विचार सबसे पहले ग्रीक और चीन के साहित्य में व्यक्त मिले हैं। सबसे पहले इरटोस्थेनेज ने अक्षांश और देशांतर रेखाओं के जाल पर आधारित एक मानचित्र बनाने का आधार दिया और 'कहां' का सटीक जवाब देने का प्रयत्न किया इसके अलावा उन्होंने पृथ्वी का सही माप भी सबसे पहले बताया। उसके बाद इसी दिशा में महत्वपूर्ण कार्य करते हुए वृत्त को 360^0 में बांटा। टॉलमी ने इसे आधार बना कर अक्षांश और देशांतर रेखाओं पर आधरित मानचित्र बनाए। रोमन साम्राज्य के बढ़ते प्रभाव की वजह से मानचित्रों की मांग बढ़ी और भूगोलविदों ने अब 'कहां' के स्थान पर 'कहां पर क्या है' पूछने की शुरुआत की।

उधर दूर पूर्व में चीनी भूगोल भी स्थानिक भूगोल में उन्नति कर रहा था। दूसरी और तीसरी शताब्दी में चीनी भूगोलवेत्ताओं ने आयताकार जाल और अंशांकित मापकों का इस्तेमाल करना शुरू कर दिया था।

मध्य काल : टॉलमी की मृत्यु के उपरांत, संसार के मानचित्र पर स्थानों के सही निर्धारण करने की प्रवृत्ति में कमी आ गई थी क्योंकि रोमन साम्राज्य का पतन हो गया था और लोगों का विश्वास ईसाई धर्म की तरफ हो रहा था। इसी कारण यूरोप के मध्य काल में संसार को समझने और परिभाषित करने के वैज्ञानिक और गणितीय तरीकों का स्थान धर्मशास्त्र ने ले लिया था।

रोमन साम्राज्य के ध्वस्त होने के बाद गतिशीलता में भी कमी आई जिसके फलस्वरूप भूगोल के विकास में भी उत्तरोत्तर कमी आती गई। परंतु मध्यकाल में मुस्लिम देशों में स्थानों के निर्धारण के बारे में सही जानकारी की जरूरत महसूस की जाने लगी। इसकी कई वजह थी–

1. मुस्लिम साम्राज्य का बढ़ना।
2. मुस्लिम साम्राज्य के द्वारा यात्राओं को बढ़ावा देना।
3. पूरे संसार में वाणिज्य सम्बन्ध स्थापित करना।

संसार के विभिन्न स्थानों की सही जानकारी प्राप्त करने के लिए टॉलमी के स्थानिक कार्य का अरब भाषा में अनुवाद किया जाने लगा। इसके अलावा रुचि और वाणिज्य ने यात्राओं को उत्साहित किया। हज को हर मुस्लिम व्यक्ति के जीवन में एक बार आवश्यक माना गया है। इब्न-बतूता और अल-बरूनी दो मशहूर अरब यात्री हुए हैं और इनके यात्रा वृतांतों में स्थानों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। इन यात्रियों के लेखों में संसार के विभिन्न स्थानों की सही जानकारी लिखी हुई थी।

खोज काल

प्राचीन और मध्य काल में व्यक्तिगत स्थानों का निर्धारण करना पहले क्रम का कार्य था। लेकिन बाद में किसी स्थान की सापेक्षिक स्थिति का अध्ययन महत्वपूर्ण हो गया था। क्योंकि संसार का मानचित्र पूर्ण हो गया था और निरपेक्ष स्थितियों की पूर्ण जानकारी उपलब्ध थी– अन्वेषण समय वाणिज्य का समय था और किसी स्थान की यात्रा के समय और खर्च को कम करना महत्वपूर्ण था।

टॉलमी के साहित्य की दोबारा खोज होने और अनुवाद होने से और सामुद्रिक टेक्नोलॉजी और समुद्री यात्राएं होने से, भूगोल के क्षितिज के एक साथ इकट्ठा होने से सुनहरे युग का सूत्रपात हुआ। नए स्थानों की खोज होने से 16 वीं और 17 वीं शताब्दी में एटलस और मानचित्रों को दोबारा बनाया गया। 18 वीं शताब्दी तक अपेक्षित स्थिति के स्थान पर सापेक्षिक स्थिति ज्यादा महत्पूर्ण हो गई थी क्योंकि यात्रा में समय, दूरी और खर्च में बचत करना महत्वपूर्ण था।

आधुनिक काल

आधुनिक काल में किसी स्थान की अपेक्षित स्थिति बिल्कुल ही महत्वपूर्ण नहीं रह गई थी। कार्ल रिटर (1769-1859) और हम्बोल्ट (1759-1859)ने भूगोल की क्रियाविधि और इसका स्थान आधुनिक विज्ञानों में निर्धारित कर दिया था। 1800 से लेकर 1950 तक स्थानों को उनकी विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत किया गया। अब इस विज्ञान का आधार व्यक्तिगत स्थानों से हटकर प्रदेशीकरण और विभिन्न प्रदेशों में परस्पर-संबंध

पर केंद्रित हो गया। इसके उपरांत भौगोलिक प्रश्नों पर ज्यादा ध्यान दिया जाने लगा जिससे उपकल्पना, नियम और सिद्धांतों का प्रतिपादन होने लगा।

इस प्रकार का बदलाव स्थानों को स्थानिक अवलोकन की तरफ ले गया।

टिप्पणी

विद्वान वैयक्तिक स्थानों की अपेक्षा स्थानों के समूह (प्रदेशों) का अध्ययन करने लगे। अध्ययन का केंद्र वैयक्तिक स्थान की अपेक्षा प्रदेशों और उनके पारस्परिक संबंधों पर आधारित हो गया। विद्वानों ने स्थानों को उनकी विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत करना प्रारम्भ कर दिया।

– विद्वानों ने 'क्या, क्यों और कहां' पर ध्यान केंद्रित करना आरम्भ किया और ऐसे सवालों के जवाब ढूंढ़ने की कोशिश करने लगे।

– स्थानिक वितरण को समझने के लिए नियमों और सिद्धांतो की आवश्यकता महसूस की जाने लगी।

समसामयिक काल

भूगोल में सापेक्षिक सन्दर्भ में बदलाव में अभी भी उन्नति हो रही थी। किसी स्थान की स्थिति और दूरी नापने के मापन में भी समय के अनुसार बदलाव हो रहे थे। 20वीं शताब्दी के मध्य तक दूरी के माप जैसे मील, किलोमीटर आदि में कोई बदलाव नहीं था। लेकिन अब विद्वान् नए आयाम पर विचार करने लगे। जैसे-जैसे यात्रा में लगने वाला समय जो कि बढ़ सकता है या घट सकता है जैसे- 1 घंटा समय यात्रा या 5 मिनट्स यात्रा। इस विचार ने नए रास्ते खोल दिए। अब 'क्या, कब, कहां, और क्यों' के जवाब में अनन्त अवधारणाएं हो सकती हैं और इनका जवाब देने के लिए 'क्यों और कैसे' का जवाब देना अनिवार्य है।

इसी समय भूगोल की विषयवस्तु में बदलाव आया! भूगोलवेत्ता अपने आप को भौतिक वैज्ञानिक के स्थान पर सामाजिक वैज्ञानिक के रूप में मानने लगे। 'क्या, कहां है' इसके जवाब के लिए सामाजिक, सांस्कृतिक पहलू की खोज आवश्यक है। इसीलिए आज किसी घटना विशेष की आधार सामग्री (data) प्राप्त करना काफी जटिल हो गया है।

स्थान की संकल्पना

स्थान की संकल्पना को कई प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है–

स्थान

स्थिति (सापेक्षिक और निरपेक्ष स्थिति)

वितरण

प्रारूप।

भूगोल में स्थान, अवस्थिति, स्थिति, स्थल, व्यवस्था और वितरण आदि प्रश्न बहुतायत में पूछे जाते हैं।

स्थान (Space) : स्थान से अभिप्राय है पृथ्वी की सतह। यानी कि पृथ्वी का टुकड़ा जिस पर कोई घटना आदि पाई जाती है।

अवस्थिति (Location) : अवस्थिति से अभिप्राय है किसी घटना या स्थान की विशेष स्थिति दो प्रकार की होती है–

टिप्पणी

निरपेक्ष अवस्थिति (Absolute Location)**:** यह किसी स्थान की वह अवस्थिति है जिसे हम अक्षांश और देशान्तर के संदर्भ में व्यक्त करते हैं। यह विशिष्ट, भौतिक, वास्तविक, आनुभविक और आमतौर पर स्थिर होती है। उदाहरण के रूप में 51|5074^0 उत्तरी अक्षांश 0|1278^0 पश्चिमी देशांतर लंदन की निरपेक्ष अवस्थिति है। 31|9505^0 दक्षिणी अक्षांश और 115|8605^0 पूर्वी देशांतर पर्थ (ऑस्ट्रेलिया का शहर) की अक्षांश और देशांतर के संदर्भ में अवस्थिति है।

इसको साधारण शब्दों में समझ सकते हैं कि आपका घर कौन से कस्बे में, कौन से शहर में और कौन से देश में स्थित है।

सापेक्षिक अवस्थिति (Relative Location) **:** इसमें किसी स्थान की किसी दूसरे स्थान के संदर्भ में अवस्थिति को व्यक्त किया जाता है। उदाहरण के लिए दिल्ली उत्तर भारत में स्थित है और कोलकाता से दो घंटे की हवाई दूरी पर स्थित है। इसको हमने दिल्ली की अक्षांश और देशान्तर दूरी में व्यक्त न करके इसको कोलकाता के संदर्भ में व्यक्त किया है तो यह सापेक्ष अवस्थिति है।

सापेक्षिक अवस्थिति को हम किलोमीटर, मील इत्यादि के अलावा और भी बहुत तरह से व्यक्त कर सकते हैं, जैसे कि 2 स्थानों के बीच में ट्रेन का किराया या हवाई जहाज का किराया का खर्च आदि। दो स्थानों की निरपेक्ष दूरी स्थिति यद्यपि वही रहती है पर सापेक्षिक अवस्थिति बदल सकती है। उदाहरण के तौर पर हम दिल्ली और जयपुर को लेते हैं। इन दोनों स्थानों की निरपेक्ष अवस्थिति वही है लेकिन दिल्ली से जयपुर जाने में बैलगाड़ी से 1 महीना लगता था पर अब हवाई जहाज से मात्र 20 मिनट्स लगते हैं। और हाईवे के द्वारा 5:30 घंटे लगते हैं।

भूगोल के विद्वानों का मुख्य ध्येय मनुष्य के स्थानिक व्यवहार का अध्ययन है। इसको सापेक्षिक अवस्थिति के अध्ययन से समझा जा सकता है। मनुष्य एक स्थान से दूसरे स्थान पर व्यापार, मनोरंजन, यात्रा आदि करने से पहले लागत, दूरी, अभिगम्यता, समय आदि को ध्यान में रखता है। कई स्थान पास होते हुए भी दूर होते हैं और कुछ स्थान दूर होते हुए भी पास होते हैं।

स्थिति (Situation) **:** किसी स्थान की स्थिति किसी और स्थान के संदर्भ में व्यक्त की जाती है जैसे कि चंडीगढ़ चंडी मंदिर के पास स्थित है और पहाड़ियों से घिरा हुआ है।

स्थिति को अक्षांश और देशांतर के संदर्भ में और किसी खास पॉइंट के संदर्भ में व्यक्त किया जाता है।

वितरण (Distribution) **:** मनुष्य द्वारा बनाए गए अधिवास, सड़कें, अस्पताल, औद्योगिक क्षेत्र, दुकानें, हॉस्टल, रेलमार्ग, स्कूल, कॉलेज, खेत आदि मनुष्य की पृथ्वी पर स्थानिक उपस्थिति के तत्व हैं। और हर तत्व का आकार, आकृति, बनावट आदि होती है और इनकी अलग पहचान होती है। ये सभी तत्व एक दूसरे के साहचर्य में पाए जाते हैं। वितरण का अर्थ है किसी तत्व का स्थान पर पाया जाना जैसे कि उद्योगों का एक साथ पाया जाना औद्योगिक क्षेत्र कहलाएगा और उद्योगों के वितरण को व्यक्त करेगा। इसी प्रकार से अधिवासों के वितरण का अध्ययन किया जाता है। अधिवासों के वितरण के अध्ययन के लिए अनेक सांख्यिकी एवं गणितीय तकनीकों का इस्तेमाल किया जाता है। उदाहरण

टिप्पणी

के लिए निकटतम पड़ोसी विश्लेषण पद्धति का प्रयोग इस संदर्भ में जिफ महोदय ने किया। इसके आधार पर अधिवासों को यादृच्छिक, नियमित और संकुलित आदि में वर्गीकृत किया गया। और भूगोल में प्रत्येक तत्व का किसी स्थान पर अवस्थित होने के कारणों का भी अध्ययन किया जाता है।

वितरण तीन प्रकार का होता है– असतत, सतत, आकस्मिक।

असतत वितरण : असतत वितरण में अनेक प्रकार के तत्व साथ पाए जाते हैं जैसे घर, उद्योग, पेट्रोल स्टेशन, पार्क आदि।

सतत वितरण : इस प्रकार के वितरण में कोई तत्व या घटना किसी और तत्व या घटना के साथ संबंधित होती है जैसे कि वर्षा आर्द्रता पर निर्भर करती है।

आकस्मिक वितरण : आकस्मिक का अर्थ अनिश्चित है, जो निश्चित नहीं होता है। आकस्मिक वितरण तब होता है जब वितरण का परिमाण समय या क्षेत्र में व्यक्त किया जाता है। जैसे कृषि उत्पादन को प्रति एकड़ या जनसंख्या वितरण को घनत्व के आधार पर किया जाता है, या दूरी को प्रति घंटे में मापा जाता है। ये अनिश्चित वितरण के उदाहरण हैं।

असतत और सतत वितरण में किसी घटना का होना महत्वपूर्ण है न कि उसका मूल्य, मात्रा, परिमाण आदि। अनिश्चित वितरण गतिशील होते हैं और बहुत शीघ्र बदल जाते हैं। जैसे दूरी को ही लें तो किसी स्थान की दूरी समय के सन्दर्भ में बदल जाती है। इसी प्रकार से घनत्व और उत्पादन भी शीघ्र ही बदल जाते हैं।

स्थानिक वितरण की विशेषताएं

स्थानिक का मतलब होता है कि किसी घटना या तत्व का स्थान पर पाया जाना। भूगोलवेत्ता किसी तत्व के वितरण के अध्ययन के लिए आवृत्ति को ध्यान में रखते हैं। किसी स्थान की अक्षांशीय और देशांतरीय दूरी के परिप्रेक्ष्य में किसी स्थान की स्थिति ज्ञात की जाती है। प्रारंभ में भूगोलवेत्ता केवल दो आयामों को ध्यान में रखते थे अक्षांश और देशांतर। पर बाद में अक्षांश और देशांतर के साथ ऊंचाई को भी संज्ञान में लिया गया।

प्रत्येक तत्व के वितरण में क्षेत्रीय विभिन्नता पाई जाती है। प्रत्येक तत्व की गहनता और प्रतिरूप में एक स्थान से दूसरे स्थान में अंतर पाया जाता है। सभी तत्व सभी स्थानों पर एक ही मात्रा या गहनता में नहीं मिलते हैं। चाहे प्राकृतिक तत्व हों या मानवकृत तत्व सभी में विभिन्नता पाई जाती है।

क्षेत्रीय वितरण और प्रक्रियाएं इन विभिन्नताओं को जन्म देती हैं, वे भूगोलवेत्ताओं द्वारा अध्ययन की जाती हैं। भूगोलवेत्ता बहुत बड़े क्षेत्र और बहुत छोटे क्षेत्र का अध्ययन नहीं करते।

स्थानिक विश्लेषण का प्रतिरूप

प्रतिरूप का मतलब है कि वितरण किस प्रकार स्थापित है। प्रतिरूप आवृत्तियों का आवर्ती संघ है जो कारण प्रक्रियाओं को इंगित कर सकता है। चार प्रकार के प्रतिरूप पाए जाते हैं–

1. स्थिर
2. गतिशील
3. नेटवर्क

टिप्पणी

4. मानक।

1. **स्थिर प्रतिरूप :** यह एक ऐसा वितरण है जो एक समय विशेष में पाया जाता है। जैसे कि किसी बड़े शहर में हॉस्पिटल, शॉपिंग सेंटर या कोई और वितरण किसी खास समय में पाया जाता है।
2. **गतिशील प्रतिरूप :** इस प्रकार के वितरण में प्रतिरूप हमेशा विभिन्न समय में बदलता रहता है। उदाहरण के रूप में जनसंख्या वितरण प्रतिरूप, जनसंख्या वृद्धि प्रतिरूप, नगर वृद्धि प्रतिरूप, सड़क गहनता प्रतिरूप आदि।
3. **नेटवर्क प्रतिरूप :** इस प्रकार के प्रतिरूप में विभिन्न स्थान विभिन्न बिन्दुओं और रेखाओं के सहारे जुड़े होते हैं। उदाहरणस्वरूप षट्भुजीय, वृत्तीय, आयताकार, रेखीय प्रतिरूप परिवहन नेटवर्क में पाये जाते हैं।
4. **मानक प्रतिरूप :** इस प्रकार के प्रतिरूप सैद्धांतिक रूप से विद्यमान रहते हैं, वास्तविक रूप से नहीं। इस तरह के प्रतिरूप कुछ अवधारणाओं पर आधारित होते हैं। इस तरह के प्रतिरूपों का कुछ सिद्धांतों के द्वारा अध्ययन किया जाता है जैसे वॉन थूनेन, बर्गस, एडवांर्ड उल्मान, होयट, क्रिस्टालर, हर्रिस आदि द्वारा विभिन्न प्रकार के प्रतिरूपों का अध्ययन विभिन्न प्रकार की कुछ अवधारणाओं को मानकर किया गया।

स्थानिक संगठन की संकल्पना

भूगोल विभिन्न तत्वों की अवस्थिति और पृथ्वी पर उनकी व्यवस्था का अध्ययन करता है और उन क्रियाओं का भी अध्ययन करता है जिनके परिणामस्वरूप ये तत्व वहां विद्यमान रहते हैं। परम्परागत रूप से भौतिक और मानवीय कारकों का अध्ययन किया जाता था। फील्डिंग (Fielding) (1974) ने मानवीय कारकों के अध्ययन पर जोर दिया। मानव व्यवहार स्थानिक संगठन को प्रभावित करता है।

मानवीय व्यवहार किसी क्षेत्र के स्थानिक संगठन में निरंतरता को प्रभावित करता है तथा किसी क्षेत्र में निरंतरता मानव द्वारा स्थान के प्रभावी उपयोग को दर्शाती है।

संचय, दूरी और अभिगम्यता, उपयोग, अंत्यक्रिया और संतुष्टि ऐसी संकल्पनाएं हैं जो मनुष्य के स्थानिक संगठन के व्यवहार को प्रभावित करती हैं और एक दूसरे से संबंधित हैं। मनुष्य का व्यवहार इनके द्वारा आसानी से समझा जा सकता है।

संचय या गुच्छ

किसी स्थान पर कुछ चीजें एक दूसरे के सहयोग, आश्रय और साहचर्य पर निर्भर करती हैं। इसलिए ये तत्व या क्रियाएं एक साथ, एक जगह पर स्थापित होने का प्रयास करती हैं जैसे कि मानव बस्तियां, उद्योग और मानवीय क्रियाएं इत्यादि। मानव बस्तियां नदी घाटियों के अति उपजाऊ क्षेत्रों में स्थापित होती हैं और मनुष्य से संबंधित अन्य महत्वपूर्ण क्रियाएं जैसे औद्योगिक और वाणिज्य क्रियाएं भी इन्हीं स्थानों पर स्थापित होने का प्रयत्न करती हैं। जैसे भारत में उत्तर भारत के मैदानों में भारत की लगभग 50 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है और इसीलिए भारत के औद्योगिक प्रदेश भी उत्तरी भारत में संचित हैं। और बड़े-बड़े शहर भी इन मैदानों में पाए जाते हैं। विश्व में जहां पर उद्योग लगे हुए हैं या कोई खनिज निकाले जाते हैं वहां पर भी मानव बस्तियां गुच्छित हो जाती हैं।

टिप्पणी

दूरी और अभिगम्यता

किसी स्थान की अभिगम्यता और दूरी स्थानिक संगठन को प्रभावित करती हैं। मनुष्य के आर्थिक, सामाजिक और मानसिक व्यवहार पर दूरी का प्रभाव देखने को मिलता है। उपभोक्ता उन स्थानों को पसंद करते हैं जहाँ पर क्रियाओं का संकुल होता है और प्रचालक उन स्थानों पर आर्थिक क्रिया स्थापित करते हैं जो मनुष्य की पहुँच में हों। इसीलिए शहर के केंद्रीय स्थल सबसे ज्यादा आर्थिक क्रिया के लिए जाने जाते हैं और और इन स्थानों का सबसे ज्यादा महंगा किराया होता है।

बहुत से भूगोल के सिद्धांतों में दूरी और अभिगम्यता के सिद्धांत को कृषि और शहरों के आंतरिक भागों के उपयोग को समझने के लिए प्रयोग किया गया है। वॉन थ्यूनेन, क्रिस्टालर, बरगिस आदि ने इन संकल्पनाओं का प्रयोग अपने सिद्धांतों में किया है, जो सबसे निकट और अभिगम्य स्थान होता है, उसका मूल्य या किराया सबसे ज्यादा होता है। इसलिए सबसे विशिष्ट कार्य शहर के केंद्रीय स्थल पर स्थापित होते हैं। जितनी ज्यादा अभिगम्यता उतनी ही ज्यादा पहुँच किसी स्थान की होती है। परंतु आज के युग में यह बात बिल्कुल ही उलट गई है क्योंकि आज परिवहन क्रांति के उपरांत अभिगम्यता का मतलब दूरी से नहीं रह गया है। समय, पैसा और प्रयास को कम करने का मतलब अभिगम्यता से है। बहुत से स्थान समीप होते हुए भी अभिगम्य नहीं होते और बहुत से स्थान दूर होकर भी अभिगम्य होते हैं।

दूरी की अनुभूति भी दूसरा पहलू है। भौतिक दूरी, मानव द्वारा निर्धारित की गई मानसिक दूरी की तरह नहीं होती है। मनुष्य के मानस पटल पर स्थानिक संरचना, भौतिक संरचना से अलग होती है। यही मानसिक दूरी किसी स्थान के उपयोग को महत्वपूर्ण तरीके से प्रभावित करती है।

उपयोगिता

उपयोगिता का मतलब है किसी वस्तु या सेवा का लाभप्रद/उपयोगी होना। यह सभी मूर्त और अमूर्त वस्तुओं जैसे किसी उत्पाद, शिक्षा आदि पर लागू होता है। इसे मुद्रा या अन्य किसी भी मूल्य में नापा जा सकता है। एक उद्योगपति के लिए उपयोगिता का मतलब है ऐसे किसी स्थान का चुनाव करना जहां पर उसकी लागत कम हो और लाभ ज्यादा हो और एक किसान के लिए उपयोगिता का मतलब है ऐसी फसल और पशुओं को साथ में रखना जिससे उसको ज्यादा उत्पाद प्राप्त हो। और एक आम व्यक्ति के लिए उपयोगिता का मतलब है ऐसे स्थान का चुनाव करना जो उसके कार्यस्थल, सम्बन्धियों और बच्चों के स्कूल आदि के समीप हो। किसी वस्तु की उपयोगिता अलग-अलग व्यक्तियों के लिए अलग-अलग होती है।

परस्पर क्रिया

स्थानिक संगठन के बहुत से तत्व परस्पर क्रिया या आदान-प्रदान पर निर्भर करते हैं। यह स्थानिक संगठन के सभी छोटे और बहुत बड़े, हर स्तर पर पाई जाती है। परस्पर क्रिया इस बात को दर्शाती है कि क्यों शहर के बड़े केंद्र दूसरे केंद्रों से ज्यादा विकसित हैं।

परस्पर क्रिया की संकल्पना स्थानिक संगठन के हर स्तर पर पाई जाती है। यह छोटे से समूह से लेकर बड़ी-बड़ी राजनीतिक इकाइयों के बीच में पाई जाती है। परस्पर

क्रिया से लोगों के बीच में संबंध मजबूत होते हैं। यह संबंध मौखिक, अमौखिक संदेशों, वस्तुओं के आदान-प्रदान के द्वारा, अनुग्रह द्वारा, दोस्ती आदि से सुदृढ़ होते हैं। परस्पर क्रिया के द्वारा उद्देश्य, मूल्य और अभिवृत्ति की स्थापना होती है जिससे मनुष्य का व्यवहार संचालित होता है। यह ऐसी चीजों की अनुमति देता है जिन्हें समाज की स्वीकृति होती है और इसी स्वीकृति से मनुष्य के व्यवहार का संचालन होता है और स्थानिक संगठन का प्रतिरूप और व्यवस्था निर्धारित होती है।

संतुष्टि

मनुष्य अपनी उपलब्धियों और कार्य निष्पादन से संतुष्ट होता है लेकिन संतुष्टि की कोई सीमा नहीं है। यह मनुष्य की अपने बौद्धिक स्तर, उपलब्ध संसाधन, उपलब्ध तकनीक पर भी निर्भर करता है। और कोई भी संतुष्टि मनुष्य की सभी जरूरतों को पूरा नहीं कर पाती है परंतु बहुत सारे उपलब्ध विकल्पों में से कुछ विकल्प चुनने की आजादी मिल जाती है। उदाहरण के लिए अगर हम एक घर की तलाश करते हैं तो स्कूल की निकटता, बाजार की निकटता, दोस्त, रिश्तेदार, अपने ऑफिस से दूरी, कीमत आदि को ध्यान में रखते हुए कोई बेहतर विकल्प चुनते हैं। परन्तु हमें कभी भी पूरी संतुष्टि नहीं मिलती है।

टी हैंगरस्टैंड (1960) ने अपनी पुस्तक 'Innovation Diffusion as a Spatial Process' में बताया 'संगठन के विकास में सूचनाओं और निर्णयों के विसरण का महत्वपूर्ण स्थान होता है।'

पीटर हैगेट (1983) ने मानवीय समाज के स्थानिक तंत्र के चार खंड बताए–

1. अन्तरतम स्थान
2. वैयक्तिक स्थान
3. सामाजिक स्थान
4. सार्वजनिक स्थान।

मनुष्य अपने कार्यस्थल पर गमन करता है। यह कार्य स्थल खेत, कार्यालय, कारखाना, शिक्षण संस्थान, व्यावसायिक प्रतिष्ठान कोई भी हो सकता है और कार्य स्थल तक जाने के लिए विभिन्न मार्गों, विभिन्न परिवहन साधनों का निर्माण भी मनुष्य करता है। मनुष्य के आवास स्थल से कार्य स्थल के मध्य अंत्यक्रिया आरंभ हो जाती है और स्थानिक संगठन अपने पर्यावरण, मनुष्य के बौद्धिक कौशल, तकनीकी ज्ञान से प्रभावित होता है। अतः सभी क्षेत्रों में स्थानिक संगठन एक समान पाया जाता है। संगठन के मूल तत्व हैं–

– कार्यस्थल
– आवागमन
– यातायात मार्ग
– अंत:क्रिया
– केंद्र स्थल
– पदानुक्रम
– दूरी क्षय
– स्थानिक संगठन।

टिप्पणी

पीटर हैगेट (1977) ने अपनी पुस्तक 'लोकेशन एनालिसिस इन ह्‌मूयन ज्योग्राफी' के प्रथम खंड में स्थानिक संगठन के छः तत्व बताए–

1. अंतरक्रिया
2. जाल
3. केंद्र
4. पदानुक्रम
5. धरातल
6. विसरण

अपनी प्रगति जांचिए

7. विज्ञान की विशेषताओं से संबंधित है-
   (क) संशयवाद एवं प्रमाणिकता
   (ख) परिशुद्धता और व्यवस्थितता
   (ग) अवलोकन तथा कारण-कार्य संबंध
   (घ) उपर्युक्त सभी।

3.6 वैज्ञानिक व्याख्या और इसका मार्ग

भूगोल को प्राकृतिक विज्ञानों की तरह ही विज्ञान की श्रेणी में रखा जाता है। परन्तु बहुत से भूगोलवेत्ता इसे सही नहीं मानते हैं क्योंकि उनका कहना है कि भूगोल में हम मानव और उसके व्यवहार का अध्ययन करते हैं और मानवीय अध्ययन का परीक्षण कभी भी प्रयोगशाला में नहीं किया जा सकता है।

वैज्ञानिक विधि का प्रथम कार्य अनुभवजन्य घटनाओं की व्याख्या करना है। वैज्ञानिक पद्धति का तात्पर्य अनुसंधान की ऐसी पद्धति से है जिसके द्वारा निष्पक्ष और व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त होता है और भूगोल में भी निष्पक्ष और व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। चाहे वह मानवीय व्यवहार को समझना है या प्राकृतिक तत्वों को समझना है।

गुडे और हॉट (Goode and Haut) के अनुसार, "विज्ञान समस्त अनुभवसिद्ध संसार के प्रति दृष्टिकोण की एक पद्धति है। विज्ञान की लोकप्रिय परिभाषा व्यवस्थित विज्ञान का संचय है।"

विज्ञान की विशेषताएं (Characteristics of Science)

विज्ञान की विशेषताएं निम्न हैं–

1. **संशयवाद** (Scepticism)– विज्ञान का सबसे पहला आधार संशयवाद है। इसके अंतर्गत किसी भी वस्तु, परिस्थिति, किसी भी तत्व के बारे में संशय होना ही विज्ञान होने की तरफ पहला कदम है क्योंकि उसके बाद ही अनुभव के आधार पर खोज प्रारम्भ की जाती है।

2. **प्रामाणिकता (Validity)–** विज्ञान को प्रमाण की आवश्यकता होती है और प्रमाण के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाता है। भूगोल में कई सदियों तक प्रचलित था कि सूर्य पृथ्वी के चारों ओर घूमता है। कॉपरनिकस ने सबसे पहले यह व्यक्त किया कि सूर्य नहीं पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है।

3. **परिशुद्धता (Accuracy)–** विज्ञान में परिशुद्धता का होना अनिवार्य है। विज्ञान में किसी भी प्रकार की त्रुटि का होना असंभव होता है। जो भी ज्ञान होता है वह प्रत्यक्ष होता है और उसको प्रमाणित किया जा सकता है। विज्ञान में ज्ञान संदेह से परे होता है। जैसे कोई भी वृत्त 360 डिग्री में बांटा जा सकता है।

4. **व्यवस्थितता (Systematization)–** विज्ञान में सभी तरह का ज्ञान व्यवस्थित होता है। व्यवस्थितता का मतलब होता है संबंध होना, पूर्ण होना और संगत होना। विभिन्न सिद्धांत एक दूसरे से संबंधित होते हैं पूर्ण होते हैं और किसी स्थिति को पूर्ण रूप से स्पष्ट करते हैं।

5. **अवलोकन (Observation)–** विज्ञान में व्यवस्थित व पक्षपात रहित अवलोकन किया जाता है। प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा किए गए अवलोकनों से प्राप्त सामग्री या तथ्यों को वर्गीकृत किया जाता है और इन्हीं वर्गीकृत तथ्यों से सिद्धांत व नियम बनाए जाते हैं।

6. **करणीय सम्बन्ध (Causality)–** विज्ञान में किसी भी तथ्य की जांच के लिए करणीय संबंधों का अध्ययन किया जाता है। एक तत्व का दूसरे तत्व पर क्या प्रभाव पड़ता है यह महत्वपूर्ण खोज विज्ञान में की जाती है।

7. **भविष्यवाणी (Predictability)–** विज्ञान केवल नियमों की रचना, व्याख्या और उसे व्यवस्थित ही नहीं करता अपितु भविष्य में ये नियम किस प्रकार से लागू होंगे यह भी बताता है।

8. **सार्वभौमिकता (Universality)**– विज्ञान का आधार कार्य और कारण पर आधारित होता है और विज्ञान के नियम सभी जगह सार्वभौमिक होते हैं। किसी भी जगह इनको जांचने पर अलग परिणाम प्राप्त नहीं होते हैं।

9. **आनुभविक (Empirical)–** विज्ञान भौतिक जगत का व्यवस्थित और आनुभविक ज्ञान होता है। इस ज्ञान को अनेक परीक्षणों के बाद प्राप्त किया जाता है। विज्ञान अनुमान, अटकल, संशय, कल्पना पर आधारित नहीं होता।

10. **तार्किकता (Logicality)–** विज्ञान विभिन्न नियमों को तथ्यों और तार्किकता के आधार पर प्रस्तुत करता है। कोई भी नियम कार्य और कारण की कसौटी पर परखा जाता है।

स्पष्टीकरण की परिभाषा एवं महत्व (Meaning of Explanation and need of explanation)

स्पष्टीकरण का मतलब है 'क्यों' और 'कैसे' का संतुष्टिपूर्ण और तार्किकपूर्ण जवाब देना।

टॉलमीन (Toulmin), 1960 के अनुसार, स्पष्टीकरण की इच्छा कुछ अनुभव के लिए आश्चर्य की प्रतिक्रिया से उत्पन्न होती है। उनके अनुसार स्पष्टीकरण तब उत्पन्न होता है जब हमें किसी दी गई परिस्थिति के वास्तविक अनुभव और अपेक्षा में अंतरद्वंद्व

टिप्पणी

होता है। उस समय हम इस अंतरद्वंद्व की ओर ध्यान केंद्रित करते हैं और स्पष्टीकरण की ओर उन्मुख होते हैं। टॉलमीन इसे एक उदाहरण के द्वारा समझाते हैं। वे एक सीधी छड़ी लेते हैं, उसको पानी में डूबाते हैं। पानी में यह छड़ी तिरछी दिखाई देती है, तो कुछ कहते हैं कि इसमें क्या खास है और कुछ कहते हैं बहुत मजेदार है और कुछ कहेंगे बहुत ही अद्‌भुत और हैरान करने वाली बात है और यह अंतिम जवाब ही स्पष्टीकरण की ओर ले जाता है। और इंसान यह जानने की कोशिश करता है कि ऐसा क्यों हुआ, क्या वो सच में तिरछी थी अगर नहीं थी तो कैसे तिरछी दिखाई दे रही थी और हम स्पष्टीकरण खोजने लगते हैं, और हम घटना को स्नेल के नियम (प्रकाश के नियम) द्वारा स्पष्ट करते हैं।

स्पष्टीकरण की चाह, अवसाद या तनाव को कम करती है क्योंकि मनुष्य असल कारणों को पता करने की कोशिश करता है। ये प्रश्न भूगोल में बहुत महत्वपूर्ण होते हैं कि वास्तविकता और अपेक्षा में क्या फर्क होता है। शहरों के वितरण को रैंक आकार वितरण के अनुसार लोग पेपर पर दिखाते हैं तो वितरण एक सीधी रेखा के बहुत करीब पाएंगे। हम इस पर कैसे प्रतिक्रिया करते हैं? हम ऐसे किसी सरकारी आदेश के बारे में नहीं जानते हैं जो यह तय करता हो कि किसी शहर और कस्बे में कितने लोग रहते हैं। हम प्रवास या जनसंख्या वृद्धि की कोई सचेत मानवीय प्रक्रिया नहीं जानते हैं जो कि शहर के आकार को जिफ के रैंक आकार नियम के अनुसार बनाती हो। इस प्रकार की घटनाएं प्रायः वास्तविकता और अपेक्षा में अंतरद्वंद्व उत्पन्न करती हैं और हम ऐसी घटनाओं का सही और संतुष्ट करने वाला जवाब ढूंढ़ते हैं। बहुत से भूगोलवेत्ताओं ने इसी प्रकार की घटनाओं के जवाब या स्पष्टीकरण ढूंढ़ने का प्रयत्न किया।

नगेल (Nagel) के अनुसार, "वैज्ञानिक स्पष्टीकरण का मुख्य लक्ष्य है व्यक्तिगत घटनाओं, आवर्ती प्रक्रियाओं या व्यक्तिगत चर के साथ-साथ सांख्यिकीय नियमितता के लिए क्रमबद्ध और तार्किकपूर्ण स्पष्टीकरण प्रदान करना।"

ब्रेथवेट (Braithwaite) के अनुसार, ''वैज्ञानिक अन्वेषण का उद्देश्य अनुभवजन्य घटनाओं या वस्तुओं के व्यवहार को आवरण प्रदान करते हुए सामान्य नियमों की स्थापना करना है और इस प्रकार अलग-अलग ज्ञात घटनाओं के बारे में हमारे ज्ञान को जोड़ने और घटनाओं की विश्वसनीय भविष्यवाणी करने में सक्षम बनाता है।''

वास्तविक संसार के बारे में दिए गए विज्ञान के कथनों को हम पदानुक्रम में लगा सकते हैं। निचले क्रम के कथन को हम 'तथ्यपूर्ण कथन' कह सकते हैं, मध्यवर्ती कथन को हम 'सामान्यीकरण या अनुभवजन्य कथन' और सबसे उच्च क्रम के कथन को 'सामान्य या सामान्य सिद्धांत' कहते हैं।

स्पष्टीकरण की ऐसी समावेशी प्रणाली की मुख्य उपलब्धि है कि अधिक व्यापकता के कथन को कम व्यापकता के कथन से जोड़ते हुए अन्त में बोध धारण आंकड़ों में बदल देती है।

इस तरह के कथनों का पदानुक्रम जो भौतिक सिद्धांत में विकसित हुआ है, कामेनी (Kameny) 1959 से लिया गया है और चित्र में प्रदर्शित किया गया है–

टिप्पणी

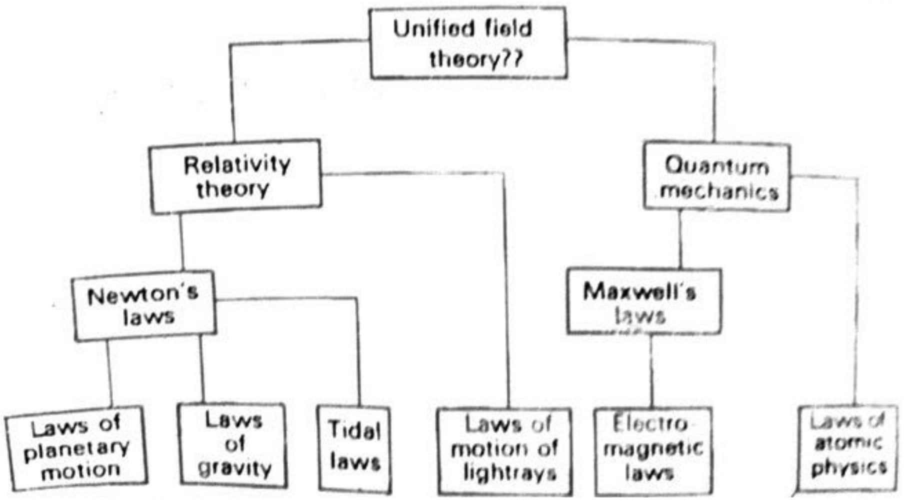

चित्र : वैज्ञानिक नियमों की एक सरलीकृत पदानुक्रमित संरचना (कामेनी के बाद 1959, 168)

वैज्ञानिक स्पष्टीकरण के मार्ग (Scientific Route to Explanation)

कोस्टलर (Koestler), 1964 के अनुसार वैज्ञानिक स्पष्टीकरण, सृजन करने की कला का परिणाम है जिसमें बहुत से मार्ग हैं जिसमें हम कुछ कथनों के पक्ष में तर्क देते हुए उनको स्वीकार करते हुए उसको वैज्ञानिक नियम का दर्जा देते हैं। सामान्य रूप से दो मार्ग हैं जिनके द्वारा वैज्ञानिक नियम बनाए जाते हैं। पहला है आगमन (Induction) पद्धति जिसमें बहुत से विशेष उदाहरणों के द्वारा वैश्विक कथन बनाए जाते हैं। दूसरा है निगमन (Deduction) पद्धति जिसमें प्राथमिक सार्वभौमिक कथन से विशेष घटना के बारे में कथन।

1. मार्ग (Route) 1

डेटा (आंकडे) हमें वैज्ञानिक समझ के लिए न्यूनतम स्तर की जानकारी प्रदान करता है। यह जानकारी जब कुछ भाषा में बदल जाती है, तो न्यून स्तर वाले बयान का एक समूह बन जाता है जिसे हम कुछ समय के लिए तथ्यात्मक कह सकते हैं।

इसको आंशिक रूप से शब्दों, संकेतों से परिभाषित करते हैं फिर इसको परिभाषित करते हुए मापन और वर्गीकृत किया जाता है। इसके बाद समानता के नियमों के अनुसार इसको समूह और श्रेणियों में रखते हैं। विज्ञान के आरंभिक विकास में आंकड़ों को क्रम और वर्गीकरण में रखना प्राथमिक कार्य होता था और वैज्ञानिक व्याख्या वहुत ही निम्न स्तर पर थी।

घटनाओं के समूहों और समूहों के बीच साहचर्य के अध्ययन के लिए, नियमितताओं की एक श्रृंखला सामने आ सकती है। घटना के दो वर्गों के बीच एक नियमित साहचर्य एवं अनुभवजन्य नियम बन सकता है (चित्र में प्रदर्शित किया गया है)।

इस प्रकार से एकत्र किए गए अनुभवजन्य नियमों से ज्ञान की उत्पत्ति होती है जो वैज्ञानिक स्पष्टीकरण हेतु इस्तेमाल की जा सकती है। इस मार्ग में हर कदम आगमनिक निष्कर्ष पर आधारित होता है। इस प्रकार से स्थापित किए गए नियमों को आगमनिक नियम भी कहा जाता है।

टिप्पणी

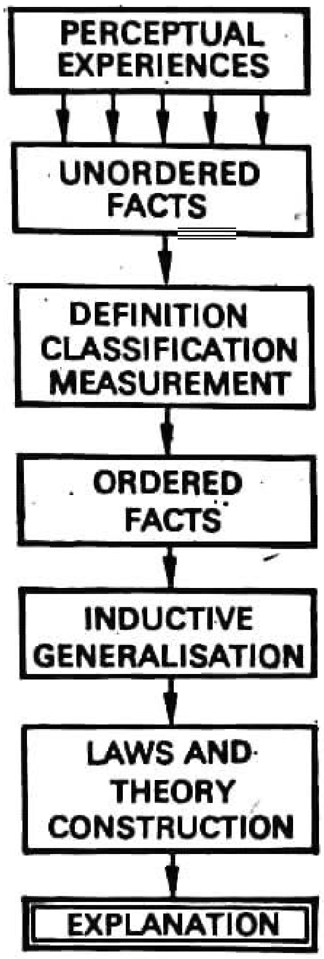

चित्र : वैज्ञानिक सपष्टीकरण के लिए 'बेकॉनियम' मार्ग (मार्ग 1)

कुछ विद्वानों का मानना है कि यह आगमनिक मार्ग वैज्ञानिक नियमानुसार नहीं है। इस मार्ग को सबसे पहले फ्रांसिस बकॉन ने सुझाया था और उन्हीं के नाम पर इसे बेकॉनियन मार्ग कहा जाता है। बेकॉनियन मार्ग इस प्रकार से है-

1. दिमाग को सभी पूर्वधारणाओं से मुक्त करना।
2. ज्यादा से ज्यादा तथ्य संगृहीत करना।
3. तथ्यों को उनकी विशेषताओं के आधार पर सारणीकरण करना। इस प्रक्रिया को 'द्राक्षा संचयन' कहते हैं।
4. समझने की प्रक्रिया या उपकल्पना बनना।
5. उपकल्पना को सही या गलत साबित करने के लिए प्रयोग करना। इस प्रक्रिया को 'खंडन या मिथ्याकरण या असत्यकरण' कहा जाता है। अगर उपकल्पना असत्य सिद्ध नहीं होती है कुछ सिद्धांत ही नियम बन पाते हैं। (चित्र 2a में प्रदर्शित किया गया है।)

यह मार्ग यह नहीं बताता है कि वैज्ञानिक किस तरह प्रक्रिया पूर्ण करें। इस दृष्टिकोण या मार्ग में विशेष घटना से सामान्यीकरण किया जाता है और यह सामन्यीकरण

उस विद्वान के विवेक पर निर्भर करता है जो इस प्रक्रिया को सम्पन्न करता है और हम उसे स्वीकार भी कर लेते हैं। यह इस मार्ग का सबसे हानिकारक पक्ष है।

टिप्पणी

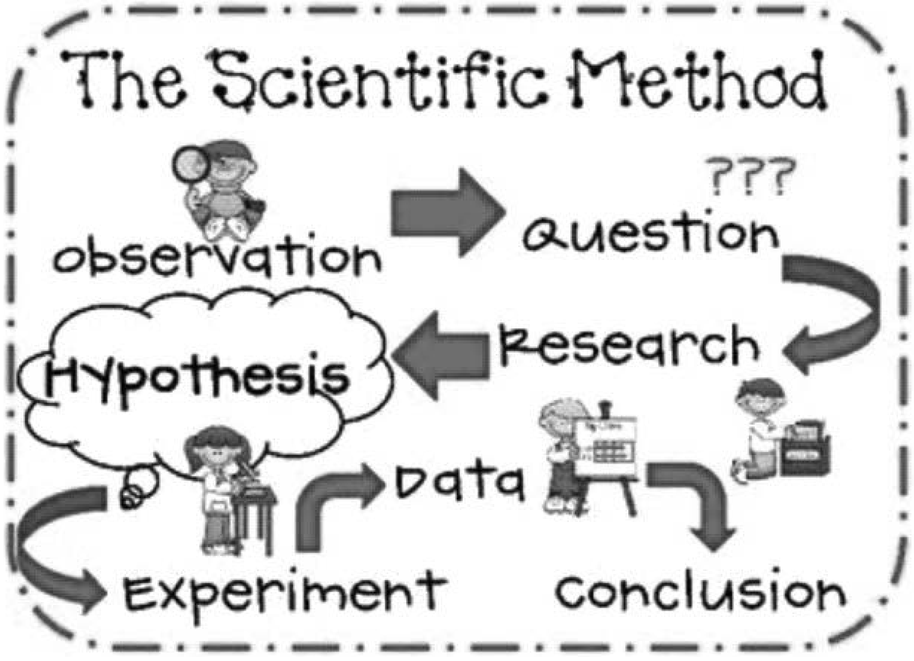

चित्र

2. मार्ग (Route) 2

दूसरा मार्ग जिससे हम वैज्ञानिक निष्कर्षों का औचित्य सिद्ध कर सकते हैं यह स्पष्ट रूप से स्वीकार करता है कि अधिकांश वैज्ञानिक ज्ञान प्राथमिक प्रकृति का होता है। जिस विषय में हम जानकारी लेना चाह रहे हैं, उसका हमें सहज ज्ञान होना चाहिए। हमें इतना सहज ज्ञान होना चाहिए कि वास्तविकता कैसी है। यही सहज ज्ञान हमें सिद्धांत बनाने में मदद करता है। उस सिद्धांत में एक तार्किक संरचना होनी चाहिए जिसमें स्थिरता और कथनों का एक समूह हो जो सिद्धांत में निहित सार धारणाओं को विवेक अनुभव द्वारा अर्जित ज्ञान से जोड़ते हैं। सिद्धांत हमें परिकल्पना के सेट को कम करने में सक्षम करेगा, अनुभवात्मक व्याख्या दी जाये तो उससे बोध अनुभव (self perception) का आंकड़ों के विरुद्ध परीक्षण किया जा सकता है। जितने ज्यादा परिकल्पना परीक्षण होंगे उतना ही सिद्धांत की वैधता पर विश्वास बढ़ेगा। अगर हम एक सिद्धांत का और परीक्षण करना चाहते हैं तो अन्य प्रकार के मॉडल का (अनुमान किया मॉडल) सहारा लेंगे, जो सिद्धांत को एक अलग रूप में व्यक्त करता हो- जैसे कि गणितीय संकेतन में। कुछ परिस्थितियों में मॉडल बिल्डिंग में प्रायोगिक डिजाइन प्रक्रिया विकसित करने की मात्रा हो सकती है, और इस प्रक्रिया का एक प्राथमिक कार्य नियमों को निर्धारित करना है, जिसमें हम परिभाषित कर सकते हैं, वर्गीकृत कर सकते हैं, उन चर को माप सकते हैं जो सिद्धांत के परीक्षण के लिए प्रासंगिक हैं (निम्न चित्र में प्रदर्शित किया गया है)।

टिप्पणी

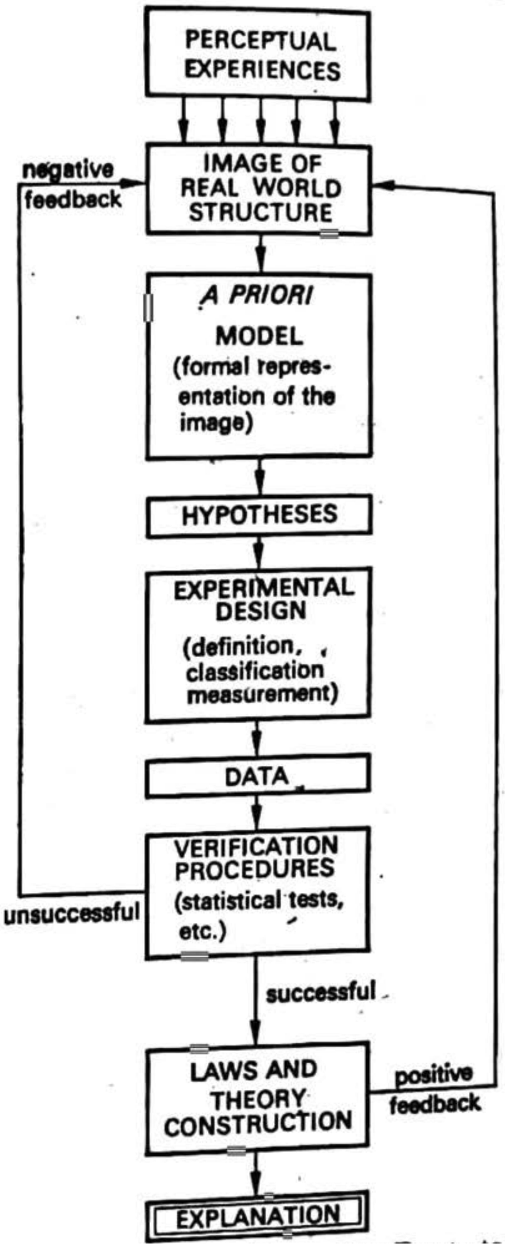

***चित्र :** वैज्ञानिक व्याख्या का एक वैज्ञानिक मार्ग*

इस तरह के प्रायोगिक डिजाइन का उपयोग करके हम सिद्धांत में निहित परिकल्पनाओं की पुष्टि करने के लिए प्रमाण एकत्र कर सकते हैं। लेकिन हम कभी भी किसी व्यक्ति की परिकल्पना को एक पूर्ण अर्थ में प्रमाणित नहीं कर सकते हैं। हम सब एक निश्चित मात्रा में सिद्धांत में विश्वास स्थापित कर सकते हैं। सिद्धांत में निहित कथन जिसे काफी समर्थन मिलता है, उसे हम वैज्ञानिक नियम कह सकते हैं।

परिकल्पना और वैज्ञानिक नियम में केवल कुछ डिग्री कॉन्फिडेंस का ही फर्क होता है। Deductive approch में अवस्थाएं कुछ ऐसी होती हैं–

सिद्धांत .... परिकल्पना .... प्रेक्षण .... परीक्षण .... पुष्टि/अस्वीकृति

Theory ---- Hypothesis ---- observation ---- test ---- confirmation/rejection

इसे एक उदाहरण से समझते हैं–

सभी आदमी मरणशील हैं और रवि एक आदमी है अतः रवि मरणशील है। निगमनात्मक मार्ग में परिकल्पना सही होनी चाहिए।

जैसे सभी मनुष्य मरणशील हैं और रवि भी मनुष्य हैं यह सही है। निगमनात्मक विधि में अगर एक बात सारे वर्ग के लिए सही है तो उस वर्ग में आने वाले हर सदस्य पर वह बात लागू होगी। अगर सामान्यकरण ठीक नहीं है तो भी तार्किक निष्कर्ष निकाला जा सकता है, वह असत्य हो सकता है। उदाहरण के लिए कथन हो सकता है। सभी गंजे व्यक्ति दादा हैं और रविंदर गंजा है इसलिए वह दादा है– यह तार्किक रूप से ठीक है परन्तु सत्य नहीं है क्योंकि वास्तविक कथन गलत है।

बम्ब्रू (Bambrough, 1964) 'कोई भी कथन जिसके लिए अंतिम कारण निगमनिक कारण नहीं हैं। निगमन के पास प्रारंभिक आधारों की सच्चाई या वैधता के बारे में कहने के लिए कुछ भी नहीं है।'

अर्थात निगमन किसी भी कथन के आधार को सही या वैध साबित नहीं कर सकता है।

तार्किक निष्कर्ष के इस रूप की आवश्यक कमजोरी यह है कि सही आधार कथनों से गलत निष्कर्ष निकालना संभव है।

ह्यूम (Hume) ने कहा है कि एक प्रयोग को हम हजारों बार करते हैं और एक जैसा परिणाम पाते हैं लेकिन फिर भी यह विश्वास से नहीं कह सकते कि अगली बार उस प्रयोग को उसी परिस्थिति में करते हैं तो वैसा ही परिणाम प्राप्त हो।

पॉपर (Popper), 1965 ने इसके इस्तेमाल को पूरी तरह से इस आधार पर खारिज कर दिया कि यह अतिसुविधाजनक है और यह तार्किक विसंगतियों की ओर ले जाएगा।

निगमनात्मक रूप को वैज्ञानिक ज्ञान के अंतिम उत्पाद के रूप में माना जाना चाहिए ना कि उस सांचे के रूप में, जिसमें सभी वैज्ञानिक विचार एक जांच की शुरुआत से डाले जाते हैं। लेकिन यह भी मानते हुए कि एक निगमनात्मक सैद्धांतिक संरचना सफलतापूर्वक विकसित हुई है, आगमनात्मक मार्ग अभी भी सैद्धांतिक संरचना की अभिव्यक्ति और सत्यापन के कुछ चरणों में एक महत्वपूर्ण कार्य करती है। यह दो विशेष पहलुओं में अपना महत्व बनाए हुए है।

1. सत्यापन की समस्या– एक सिद्धांत के सत्यापन या पुष्टि को आगमनात्मक अनुमान पर विश्वास करना होता है। हम इस मुद्दे पर तीन विभिन्न विचारधाराओं के बीच व्यापक रूप से अंतर कर सकते हैं।

(अ) विज्ञान के कुछ दार्शनिकों ने ध्यान दिया कि किसी भी सिद्धांत के सभी संभावित परीक्षण नहीं हो सकते है, जो उस सिद्धांत का मूल्यांकन प्रमाणों के सन्दर्भ में सही सिद्ध होने की सम्भावना व्यक्त कर सके। नागेल 1939, कर्नप 1950, हमपेल 1965 ने इस समस्या का अध्ययन किया। इन लेखकों का उद्देश्य आगमनात्मक तर्क की एक प्रणाली प्रस्तुत करना है, जिससे वैज्ञानिक प्रतिस्पर्धी सिद्धांतों और स्पष्टीकरण की वैकल्पिक प्रणाली को उद्देश्यपूर्वक चुन सकें।

टिप्पणी

पुष्टि के इस तरह के तर्क का प्रावधान दो समस्याओं का सामना करता है। पहला यह है कि किसी दी गई परिकल्पना के लिए प्रासंगिक परीक्षण को कैसे परिभाषित किया जाए और दूसरा यह है कि हम उन प्रेरक नियमों को स्थापित करें जिनसे हम उस परिकल्पना की पुष्टि कर सकें।

(ब) पॉपर (1965) ने सत्यापन के स्थान पर असत्यकरण की धारणा को चुना।

(स) कुहन का सुझाव है सिद्धांत या परिकल्पना की स्वीकृति या अस्वीकृति तर्क की बजाय विश्वास का विषय है। सत्यापन और पुष्टिकरण प्रक्रिया नियमों का अंश है जो एक वैज्ञानिक समुदाय प्रमुख प्रतिमानों के एक भाग के रूप में स्वीकार करता है।

सामान्य वैज्ञानिक गतिविधि की अवधि के दौरान, वैज्ञानिक केवल उन समस्याओं से निपटते हैं, जिनका इन नियमों के संदर्भ में समाधान किया जा सकता है। जो विसंगतियाँ उत्पन्न होती हैं, वे एक नए प्रतिमान के उदय के लिए उत्तरदायी होती हैं।

2. निगमनात्मक प्रणाली के भीतर आगमनात्मक कथन की समस्या– सत्यापन की समस्या वैज्ञानिक प्रकृति की समझ के लिए बहुत सामान्य महत्व की है। एक प्रतिबंधित समस्या अनिवार्य रूप से निगमनात्मक तर्कों के भीतर निहित आगमनात्मक कथन की भी है। आगमन और निगमन को पारस्परिक रूप से विज्ञान के निष्कर्ष में एक दूसरे से विशेष मानने को भ्रामक माना गया है।

हालांकि इस बात पर सहमति है कि वैज्ञानिक ज्ञान को काल्पनिक निगमनात्मक सिस्टम पर आयोजित किया जाना चाहिए और उस प्रणाली में निहित नियम को निगमन व्याख्यात्मक प्रक्रिया द्वारा सर्वोत्तम रूप से लागू किया जाना चाहिए है, ऐसे बहुत अवसर आते हैं जब निगमन ढांचे में आगमन चरण अपनाए जाते हैं।

(अ) **आगमन व्यवस्था में सम्भावना कथन का उपयोग**- हैंपल (1965) ने व्यक्तिगत घटनाओं या अनंत घटनाओं की तार्किक व्याख्या करने के लिए सम्भावना नियम की तरफ ध्यान आकर्षित किया।

(ब) **अधूरी सैद्धांतिक प्रणाली–** निगमन निष्कर्षों की प्राप्ति के लिए प्रारंभिक स्थिति या प्रारंभिक कथनों में पूर्णता की आवश्यकता होती है। व्याख्या के दृष्टिकोण बिंदु से सभी प्रासंगिक प्रारंभिक स्थितियों को जानने की आवश्यकता होती है। अगर सभी सम्बंधित आरम्भिक स्थितियों को निर्दिष्ट नहीं किया जाए, तो व्याख्या अधूरी होगी और आरम्भिक स्थिति और ज्ञात नियम में विश्वास निष्कर्ष में परिवर्तित नहीं हो पाएगा।

भूगोल में वैज्ञानिक विधि की प्रासंगिकता

उपयोगी और विश्वसनीय ज्ञान प्राप्त करने के तरीके के रूप में भूगोल के लिए वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोग के संबंध में आलोचनाओं के बावजूद, वैज्ञानिक तरीके, भौगोलिक ज्ञान, अनुसंधान और प्रशिक्षण दोनों कारणों से भौतिक और मानव भूगोल में महत्व रखते हैं।

1. वैज्ञानिक पद्धति में भौगोलिक घटनाओं की प्रकृति के बारे में सुसंगत और परीक्षण योग्य सिद्धांत प्रदान करने की क्षमता है।

2. वैज्ञानिक पद्धति आकर्षक बनी हुई है क्योंकि यह कई मामलों में रोजमर्रा की जिंदगी में विकसित विचार संरचनाओं का एक संहिताबद्ध और तार्किक रूप से सही विस्तार है, जिसमें अनुभव की रोशनी में सिद्धांतों या परिकल्पनाओं को सही करने की इच्छा शामिल है।
3. आंशिक रूप से ऊपर दिए गए इन दो बिंदुओं के परिणामस्वरूप, सामाजिक और प्राकृतिक प्रणालियों के प्रबंधन के उद्देश्य के लिए समाज द्वारा एक वैज्ञानिक प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता होती है और अगर भूगोल ऐसा ज्ञान प्रदान करने में सफल नहीं रहता है, तो कुछ अन्य विषय इस कार्य को पूर्ण कर सकते हैं।

भूगोल में वैज्ञानिक विधि के अनुप्रयोग में कुछ समस्याएं

बीसवीं सदी के मध्य में युद्ध के बाद के भूगोल ने वैज्ञानिक पद्धति के अनुप्रयोग के संबंध में निरंतर बहस देखी। इस मुद्दे पर दो भिन्न मत थे। एक पक्ष ने तर्क दिया कि वैज्ञानिक पद्धति को भौतिक और मानव भूगोल दोनों में प्रयोग किया जाना चाहिए।

दूसरी ओर, कुछ भूगोलवेत्ताओं ने दावा किया था कि यह विषय कुछ मायने में एक असाधारण विषय था जिसे वैज्ञानिक पद्धति की बाधाओं से कुछ मुक्त किया जाना चाहिए। हालांकि इसे पूरी तरह से मुक्त नहीं किया जा सकता है। हालांकि, बहस की यह शुरुआत उन्नीसवीं सदी के दशकों में हुई थी।

प्रतिवाद और द्वंद्ववाद के बावजूद, 1960 की अवधि में अर्ध-वैज्ञानिक तरीकों का उपयोग करते हुए नियमों और मॉडल-आधारित भौगोलिक अनुसंधान पर जोर दिया जाने लगा।

इसके लिए दार्शनिक और पद्धतिगत आधार को एंग्लो-अमेरिकन विरासत और परंपरा के कई युवा भूगोलविदों द्वारा आगे बढ़ाया गया था। मानव और भौतिक भूगोल दोनों में कई पाठ्यपुस्तकों ने सिद्धांत, कानून, परिकल्पना, माप और सांख्यिकीय परीक्षण की आवश्यकता पर जोर दिया।

भूगोल में इस विधि के प्रयोग में कठिनाई

भूगोल में इस विधि का प्रयोग करने में निम्न कठिनाइयां आती हैं:-

1. भूगोलवेत्ता, कई वर्षों से, 'विशिष्टता' शब्द से जुड़े थे क्योंकि पृथ्वी की सतह पर भौगोलिक घटनाएं अद्वितीय और अलग हैं, साथ ही चरित्र और कारण में भी जटिल हैं। निष्कर्ष यह है कि भूगोल अद्वितीय घटनाओं से संबंधित है, और नियमों तथा सिद्धांतों के रूप में सामान्यीकरण विफल होंगे या इन्हे आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है।
2. भौगोलिक प्रणालियों की खुली प्रणाली होने का एक दूसरा परिणाम प्रायोगिक परीक्षणों को पूरा करने में कठिनाई है। भौगोलिक प्रणाली का विशाल आकार (वायुमंडल, नदी बेसिन, एक शहर) प्रयोगशाला प्रयोग को असंभव बनाता है।
3. भौगोलिक प्रणाली के बहु-चर प्रकृति का तीसरा परिणाम अन्य विषयों के सिद्धांतों का उपयोग करना है। यह अन्य विषयों के सामान्य सिद्धांत से भूगोल की विशिष्ट समस्या के भौगोलिक संबंधों की व्याख्या करने का प्रयास करता है।

4. एक अन्य समस्या जो भूगोल में वैज्ञानिक विधि को लागू करने में उत्पन्न होती है, वह है प्रेक्षक द्वारा देखी गई घटना के साथ हस्तक्षेप। प्रयोगशाला विज्ञान में यह समस्या सामने आई है, लेकिन डिजाइन द्वारा यह प्रयोग कम करना संभव है ताकि प्रभाव को कम किया जा सके। ऐसा भौतिक भूगोल में होता है।

अपनी प्रगति जांचिए

8. स्पष्टीकरण की चाह का क्या परिणाम होता है?

   (क) अवसाद में कमी (ख) तनाव में कमी

   (ग) कारण-कार्य संबंध में स्पष्टता (घ) उपर्युक्त सभी।

3.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (घ)
2. (घ)
3. (घ)
4. (ग)
5. (घ)
6. (घ)
7. (घ)
8. (घ)

3.8 सारांश

भूगोल मानव और उसकी क्रियाओं पर वातावरण के प्रभाव का अध्ययन करता है। भूगोल को प्राकृतिक और सामाजिक विज्ञान में बांटा गया है। इसके लिए अनेक विधियों और उपागमों का प्रयोग किया जाता है। भूगोल को पृथ्वी तल का विज्ञान माना गया है और यह विभिन्न तत्वों में अंतरसम्बन्ध का विवेचन करने के लिए क्रमबद्ध, प्रादेशिक, विवरणात्मक और विश्लेषणात्मक आदि उपागमों का सहारा लेता है और विभिन्न तत्वों का सूक्ष्म अध्ययन करने के लिए विभिन्न विधियों का प्रयोग करता है। भूगोल की विधियों में समय अनुसार परिवर्तन आता रहा है। भूगोल के अध्ययन के लिए फील्ड सर्वेक्षण अति महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी के आधार पर विभिन्न मानचित्र बनाए जाते हैं और किसी तत्व की गहन समीक्षा इन्हीं मानचित्रों के आधार पर की जाती है। क्षेत्र अध्ययन में सामाजिक और जनसंख्या से सम्बंधित आंकड़ों के लिए प्रतिदर्श विधि का अनुसरण किया जाता है क्योंकि समग्र जनसंख्या का अध्ययन संभव नहीं होता है प्रतिदर्श अध्ययन के लिए नमूना चयन करके प्रतिदर्श उत्तरदाताओं से प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार विधि से सूचनाएं संगृहीत की जाती हैं और उन सूचनाओं के आधार पर मानचित्र बनाए जाते हैं और सूचनाएं आजकल दूर संवेदन से भी प्राप्त की जाती हैं और भूगोल में इस

टिप्पणी

नई तकनीक का भरपूर प्रयोग हो रहा है। चाहे वह कृषि क्षेत्र हो, प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग या संरक्षण हो, नदियों के मार्ग का अध्ययन हो, मौसम या जलवायु का अध्ययन हो, हिमनदियों का अध्ययन हो, समुद्र का अध्ययन हो।

भूगोल में 'कहाँ' प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण होता है। भूगोल एक स्थानिक विज्ञान है और पृथ्वी पर पाए जाने वाले स्थानों की सूक्ष्मता से जांच करती है और उनको प्रभावित करने वाले कारकों की पड़ताल की जाती है। भूगोल के विभिन्न तत्वों के विवरण का अध्ययन करना भूगोल का मुख्य कार्य है। कौन सा तत्व किस प्रकार व्यवस्थित है और उसके वहां व्यवस्थित होने के कारकों का अध्ययन गहराई से किया जाता है। इन तत्वों का प्रारूप विभिन्न प्रकार से पाया जाता है। भुगोल में मुख्यतः 4 प्रकार के प्रारूप पाए जाते हैं। भूगोल में स्थानिक संगठन को भौतिक और मानवीय कारक प्रभावित करते है। स्थानिक संगठन को उपयोगिता, दूरी, अभिगम्यता, पारस्परिक क्रिया, संतुष्टि आदि कारक बहुत ज्यादा प्रभावित करते है।

भौगोलिक अध्ययन में वैज्ञानिक व्याख्या दो प्रकार से की जाती है– एक है आगमनात्मक विधि और दूसरी है निगमनात्मक विधि। आगमन विधि में हम तथ्य संगृहीत करते हैं फिर सारणीयन करते हैं, उपकल्पना का निर्माण करते हैं और फिर उस उपकल्पना को सिद्ध करने के लिए प्रयोग करना और उपकल्पना को सत्य या असत्य सिद्ध करना।

निगमन विधि में हमें जिस विषय में जानकारी लेनी है उस विषय का सहज ज्ञान हमें होना चाहिए और यह ज्ञान हमें self perception से लिए गए ज्ञान को विवेक द्वारा अर्जित ज्ञान से जोड़ता है। इस विधि में हमारे समक्ष एक सिद्धांत होता है, फिर उपकल्पना बनाई जाती है और उससे सम्बंधित अवलोकन किए जाते हैं और फिर प्रयोग और अन्त में उपकल्पना को सत्य या असत्य सिद्ध किया जाता है और भूगोल में हम वैज्ञानिक विधि का भरपूर प्रयोग करते हैं क्योंकि यह घटनाओं के बारे में सुसंगत सिद्धांत और रोजमर्रा जिन्दगी में विकसित संरचनाओं का एक संहिताबद्ध और तार्किक ज्ञान देती है। लेकिन उसको भूगोल में प्रयोग करने से कुछ समस्याएं भी आती हैं जैसे कि भूगोल अद्वितीय घटनाओं से सम्बंधित है और यहां सामान्यकरण के सिद्धांत सफल नहीं हो सकते और भूगोल में खुले और विस्तृत प्रणाली होते हैं उनका विकल्प लैब नहीं हो सकता है।

भूगोल का स्वरूप बदलता रहता है और काल विशेष की ज्वलन्त समस्याओं का अध्ययन अपनी विश्लेषण क्षमता, परिप्रेक्ष्य परिधि और उपलब्ध ज्ञान के आधार पर किया जाता है। भौगौलिक चिंतन के अध्ययन से पता चलता है कि भूगोल की प्रकृति प्राकृतिक व सामाजिक विज्ञान में द्विविभाजित है। दोनों की विषय वस्तु भिन्न है इसलिए इनके अध्ययन से विधियों और उपागम में द्वैतवाद कई बार प्रमुखता से उभर कर सामने आया है। काल विशेष के अनुरूप कभी गहन तो कभी सम्यक संश्लेषण को बढ़ावा दिया गया। परंतु भूगोल की विषय वस्तु और स्वरुप यथा संभव अक्षुण्ण रहे। भूगोल को पृथ्वी तल का विज्ञान, विभिन्न तत्वों में अंतरसम्बन्ध का विवेचन, प्रादेशिक समाकलन, संश्लेषनोन्मुख, प्रादेशिक समस्याओं का समाकलन और निराकरण का विज्ञान माना गया है।

भूगोल को अन्य प्रकृति विज्ञानों की भांति ही सामान्य विज्ञान माना गया है यह भी अन्य विज्ञानों की भांति स्थानिक आंकड़े एकत्रित करता है और उन्हें दर्शाने के लिए

मानचित्रों का सहारा लेता है। भूगोल का कई अंतरसम्बंधित उपागमों द्वारा अध्ययन किया जाता है जैसे कि क्रमबद्ध, प्रादेशिक, विवरणात्मक और विश्लेषणात्मक आदि।

प्रायोगिक आगमन विधि में कुछ नियन्त्रित प्रयोग किए जाते हैं और उनके आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं । भूगोल जैसे सामाजिक विज्ञान में नियन्त्रित प्रयोगों के लिए बहुत कम क्षेत्र उपलब्ध होता है, इसलिए प्रयोगात्मक आगमन विधि का प्रयोग भूगोल में बहुत सीमित मात्रा में ही किया जा सकता है। सांख्यिकीय आगमन विधि के अन्तर्गत सम्बन्धित घटनाओं के बारे में विभिन्न क्षेत्रों के आंकड़े एकत्रित किए जाते हैं और उनका वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया जाता है, तथा सांख्यिकीय उपकरणों की सहायता से सामान्य निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

क्षेत्र अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारतीय सर्वेक्षण विभाग के धरातल पत्रकों तथा वायु चित्रों या उपग्रह छायाचित्रों में दृश्य तत्वों का भौतिक सत्यापन करना है। इससे इनका विवेचन आसान हो जाता है और त्रुटि की गुंजाईश नहीं रहती। इसके लिए सम्बंधित मानचित्र और छायाचित्र की उत्तर दिशा का मिलान करना अनिवार्य है। पहले उन तत्वों का मिलान करते हैं जिनको सरलता से पहचाना जा सकता है। ऐसे दो बिंदुओं को सीधी रेखा से मिलाकर इसे इस तरह से घुमाते हैं कि उन्हीं दो बिंदुओं की धरातल पर स्थिति के समकक्ष हो जाये।

क्षेत्र सर्वेक्षण अथवा द्वितीय स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों और सूचनाओं को मानचित्र पर प्रदर्शित किया जाता है। इसके अंतर्गत हम पृथ्वी या उसके किसी एक भाग को कुछ रूढ़ चिह्नों और मापक द्वारा एक समतल सतह पर कुछ प्रक्षेपों द्वारा प्रदर्शित करते हैं।

मानचित्र में प्रदर्शित की गई सूचनाएं उसके पैमाने,रूढ़ चिह्न, मानचित्र की विधि, निर्माणकर्ता के कौशल और प्रक्षेप पर निर्भर करती हैं। वृहद पैमाने पर अधिक तत्वों को प्रदर्शित किया जा सकता है। पृथ्वी तल का मानचित्रण थिओडोलाइट, प्लेन टेबल आदि विभिन्न प्रकार के यंत्रों द्वारा, छवि चित्रों, रेखांकन से किया जा सकता है।

अक्षांश और देशांतर रेखाओं का जाल और कुछ रूढ़ चिह्नों के द्वारा मानचित्र को बनाया जाता है।

अब छाया चित्रों और कंप्यूटर प्रोग्रामिंग द्वारा मानचित्र बनने लगे हैं। मानचित्रण की विधि, क्षेत्र के आकार, शुद्धता और समाविष्ट सूचनाओं की मात्रा पर निर्भर करती है।

भूगोल में 1960 के दशक में सांख्यिकीय क्रांति प्रारंभ हुई भूगोलवेताओं को इसकी प्रेरणा वियना सर्किल के विद्वानों के इस निष्कर्ष से मिली कि कोई भी विषय विज्ञान की कोटि में तब तक शामिल नहीं किया जा सकता जब तक कि वह मूल्य निरपेक्ष, प्रत्यक्ष अवलोकन आधारित एवं वस्तुनिष्ठ न हो।

सांख्यिकीय विधि से तात्पर्य है आंकड़ों का संग्रहण, संघनन, परिष्करण, मानकीकरण, मूल्यांकन एवं विश्लेषण। भूगोल के क्षेत्र में अध्ययन की जाने वाली लगभग प्रत्येक समस्या में सांख्यिकीय विधियों का समावेश हो जाने से उसका गुणात्मक लक्षण मात्रात्मक लक्षण में परिवर्तित हो गया।

ज्ञान से तात्पर्य एक ऐसे त्रिविमीय विन्यास से है जिसे पूर्णरूप से समझने के लिए हमें तीन दृष्टिकोणों से निरीक्षण करना चाहिए। इनमें से किसी भी एक बिन्दु वाला

टिप्पणी

निरीक्षण एक पक्षीय ही होगा और वह संपूर्णता को प्रदर्शित नहीं करेगा। एक बिन्दु से हम वस्तुओं के संबंध देखते हैं। दूसरे से काल के संदर्भ में उसका विकास और तीसरे से क्षेत्रीय संदर्भ में उनके क्रम और वर्गीकरण का निरीक्षण करते हैं। इस प्रकार प्रथम वर्ग के अंतर्गत वर्गीकृत विज्ञान (classified science), द्वितीय वर्ग में ऐतिहासिक विज्ञान (historial sciences), और तृतीय वर्ग में क्षेत्रीय या स्थान-संबंधी विज्ञान (spatial sciences) आते हैं।

भूगोल में स्थानिक संगठन की संकल्पना का विकास 1970 के दशक से तीव्रता से प्रारंभ हुआ भौगोलिक दृष्टिकोण के संदर्भ में किसी क्षेत्र में समाज या समुदाय की क्रियाओं और प्रयोग के परिणाम स्वरुप उत्पन्न संबंधित स्थानिक प्रतिरूप जो वहां निवास करने वाले व्यक्तियों या पर्यावरण के मध्य प्रतिक्रिया का परिणाम होता है, स्थानिक संगठन के रूप में पहचाना जाता है सर्वप्रथम अमेरिकी भूगोलवेत्ता उलमान, 1957 ने अपनी पुस्तक अमेरिकन कमोडिटी में भौगोलिक क्षेत्रों की पारस्परिक निर्भरता को स्पष्ट करने के लिए स्थानिक प्रतिक्रिया शब्दावली का प्रयोग किया था इसके उपरांत उन्होंने इसे अधिक स्पष्ट रूप से 1980 में समझाया।

भूगोल को प्राकृतिक विज्ञानों की तरह ही विज्ञान की श्रेणी में रखा जाता है। परन्तु बहुत से भूगोलवेत्ता इसे सही नहीं मानते हैं क्योंकि उनका कहना है की भूगोल में हम मानव और उसके व्यवहार का अध्ययन करते हैं और मानवीय अध्ययन का परीक्षण कभी भी प्रयोशाला में नहीं किया जा सकता है।

वैज्ञानिक विधि का प्रथम कार्य अनुभवजन्य घटनाओं की व्याख्या करना है। वैज्ञानिक पद्धति का तात्पर्य अनुसंधान की ऐसी पद्धति से है जिसके द्वारा निष्पक्ष और व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त होता है और भूगोल में भी निष्पक्ष और व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। चाहे वह मानवीय व्यवहार को समझना है या प्राकृतिक तत्वों को समझना है।

3.9 मुख्य शब्दावली

- **क्रमबद्ध भूगोल :** क्रमबद्ध भूगोल के अंतर्गत अध्ययन क्षेत्र को एक पूर्ण इकाई मानकर उसके विभिन्न भौगोलिक तत्वों या प्रकरणों का क्रमिक रूप से अध्ययन किया जाता है।
- **प्रादेशिक उपागम :** प्रादेशिक उपागम में संपूर्ण क्षेत्र को विभिन्न प्रदेशों में विभाजित करके प्रदेश के सभी तत्वों का संश्लेषण किया जाता है।
- **निगमनिक विधि :** इस विधि में सामान्य नियमों या स्वयंसिद्ध बातों को आधार मानकर तर्क की सहायता से निष्कर्ष निकाले जाते हैं।
- **आगमन विधि :** इस विधि में विशिष्ट घटनाओं अथवा तथ्यों का अवलोकन एवं अध्ययन करके प्रयोग के आधार पर सामान्य निष्कर्ष निकाले जाते हैं।
- **माध्य :** किसी तत्व के विभिन्न मानों को जोड़कर उसके योग को कुल संख्या से विभाजित कर देने पर जो मान प्राप्त होता है उसे माध्य कहते हैं।

- **प्रसार :** प्रसार फैलाव का सरलतम मापक है जो आंकड़ों के अधिकतम और न्यूनतम के अंतर को दर्शाता है।

- **वैज्ञानिक पद्धति :** वैज्ञानिक पद्धति का आशय उस अध्ययन से है जिसके द्वारा विज्ञान का निर्माण और विस्तार होता है।

3.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु-उत्तरीय प्रश्न

1. स्थानिक से आप क्या समझते हैं?
2. प्रादेशिक उपागम से क्या तात्पर्य है?
3. प्रायोगिक आगमन और सांख्यिकीय आगमन विधि में अंतर बताइए।
4. प्रश्नावली तैयार करते समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिए।
5. धरातल पत्रक से क्या अभिप्राय है?

दीर्घ-उत्तरीय प्रश्न

1. स्थानिक वितरण की प्रकृति एवं स्वरूप का सविस्तार विश्लेषण कीजिए।
2. भूगोल के अध्ययन की विभिन्न विधियों के बारे में विस्तार से बताइए।
3. स्थानिक विश्लेषण की प्रकृति और प्रक्रिया पर प्रकाश डालिए।
4. वैज्ञानिक व्याख्या और इसके मार्गों की विवेचना कीजिए।

3.11 सहायक पाठ्य सामग्री

एस. डी. कौशिक, डी. एस. रावत (2014-15) भौगोलिक विचारधाराएं एवं विधितन्त्र, मेरठ

डॉ. हुसैन, भौगोलिक चिंतन का इतिहास, रावत पब्लिकेशन, जयपुर

डॉ. आर. एस. माथुर, डॉ. जैनेन्द्र गुप्ता, भौगोलिक विचारधाराएं, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर

चन्द्रशेखर यादव (2012), भौगोलिक विचारों का इतिहास, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, दिल्ली

Chorley, R. J and Hagget, P- (1965), Models in Geography, London.

Dickinson, R. E. (1969), The maker of Modern Geography, London.

Dikshit, R. D. (1999), Geographical Thought : A Contextual History of Ideas, New Delhi

Foucault, M. 1980, Power / Knowledge, Brighton

Gold, J.R. (1980), An Introduction to Behavioural Geography, Oxford

Golledge, R. J., et - al - (1972), Behavioural Approaches in Geography : An overview, The Australian Geographer, 12, pp 159&79

Gould, P. R. (1966), On Mental maps in Downs, R. M

Gregory, D., (1978), Dealogy Science and Human Geography, London, pp - 135&136

Gregory, D. (1981), Human Agency and Human Geography, Transaction, Institute of British Geographers

Gregory, D. (1989), The crisis of modernity/ Human geography and critical social theory, in Peet, R and Thrift, N. J. (eds) New Models in Geography, vol - 2, London. Haggett, P- Cliff, A. D. and Allan, F. (1977), Locational Models

Soja, E. (1989), Modern geography, Western Marxism and reconstructing of critical social theory, in Peet, R and Thift, N. (eds) New Model in Geography, vol -2, London

Taylor, G. (1919), Geography in Twentieth Century, London

टिप्पणी

इकाई 4 मॉडल, मात्रात्मक क्रांति और आधुनिक विषयवस्तु

संरचना

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 भूगोल में सिद्धांत और मॉडल
4.3 भूगोल में मात्रात्मक क्रांति
4.4 प्रत्यक्षवाद और व्यवहारवाद
4.5 भूगोल में उत्तर आधुनिकवाद
4.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.7 सारांश
4.8 मुख्य शब्दावली
4.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.10 सहायक पाठ्य सामग्री

4.0 परिचय

एक भूगोलवेत्ता स्थान और समय के अनुसार पृथ्वी पर पाए जाने वाले तत्वों की प्रवृत्ति और स्वरूप की पहचान करने की कोशिश करता है। अकसर ये सिद्धांत समाजशास्त्री, अर्थशास्त्री, इतिहासकार, पुरातत्वविद, राजनीतिज्ञ, वैज्ञानिक, चिकित्सकों और प्रशिक्षित भूगोलविदों के सिद्धांतों से निकालकर विकसित किये जाते हैं।

इन मॉडलों और सिद्धांतों ने एकत्र आंकड़ों का सामान्यीकरण और सरलीकरण करने की कोशिश की। मॉडल दृश्यता (विजुअलाइजेशन) प्रदान करने में मदद करते हैं लेकिन यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि वे केवल सामान्यीकरण ही करते हैं।

इस इकाई में आप भूगोल के सिद्धांत और मॉडल, भूगोल में मात्रात्मक क्रांति, प्रत्यक्षवाद और व्यवहारवाद तथा भूगोल में उत्तर आधुनिकवाद विषयों का अध्ययन कर पाएंगे।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- भूगोल में सिद्धांत और मॉडल की अवधारणा और महत्व को समझ पाएंगे;
- भूगोल में मात्रात्मक क्रांति का अर्थ समझ पाएंगे;
- प्रत्यक्षवाद और व्यवहारवाद के महत्व को जान पाएंगे;
- भूगोल में उत्तर आधुनिकवाद से परिचित हो पाएंगे।

4.2 भूगोल में सिद्धांत और मॉडल

टिप्पणी

किसी भी मॉडल का मुख्य लक्ष्य सामान्यीकरण प्रदान करना है और कोई मॉडल ही विशिष्ट परिस्थितियों का सटीक प्रतिनिधित्व करेगा। मॉडल केवल निर्देशित करता है कि जब मॉडल का परीक्षण किया जाए तो स्थिति का परीक्षण किया जा सकता है। यह देखने के लिए कि मॉडल कैसे लागू होता है या विशिष्ट स्थिति में इसे लागू करने के लिए किन बदलावों को करना आवश्यक है।

कृषि क्रांतियां : पहली कृषि क्रांति (नवपाषाण क्रांति) 10,000 साल पहले शुरू हुई और कृषि समाजों की शुरुआत हुई।

दूसरी कृषि क्रांति (औद्योगिक क्रांति) यूरोप में 1750 के आसपास शुरू हुई। बढ़ते औद्योगिक केंद्रों के समर्थन के लिए खाद्य उत्पादन बढ़ाने के लिए मशीनों का उपयोग बढ़ा।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद तीसरी कृषि क्रांति (हरित क्रांति) शुरू हुई। नॉर्मन बोरलॉग के नेतृत्व में गैर पश्चिमी क्षेत्रों में आधुनिक पश्चिमी मशीनों, खेती के तरीकों द्वारा कृषि करना आरंभ हुआ।

चौथी कृषि क्रांति (जैविक क्रांति) 2000 के दशक में शुरू हुई। इसमें प्राकृतिक रूप से भोजन उपजाने के लिए कई राज्यों ने पहल की।

कृषि मॉडल

कृषि मॉडल पुरानी दुनिया और नई दुनिया के बीच पौधों, जानवरों और रोगाणुओं के हस्तांतरण को दर्शाता है

वॉन थ्यूनेन द्वारा प्रतिपादित कृषि मॉडल विभिन्न कृषि प्रथाओं और भूमि मूल्य तथा परिवहन लागत के मध्य संबंधों के आधार की व्याख्या करता है।

संस्कृति– कार्ल शॉवर ने सांस्कृतिक परिदृश्य के विचारों को प्रस्तावित किया, जिसमें मानव गतिविधियां भौतिक परिदृश्य पर अपने आप को अध्यारोपित करती हैं। सांस्कृतिक समूह अपनी छाप भौतिक पर्यावरण पर छोड़ता है।

संस्कृति : संक्रामक प्रसार

सांस्कृतिक प्रसार मॉडल में जहां सांस्कृतिक विशेषता एक केंद्र से आसपास के लोगों तक तेजी से फैलती है, इसे अपने आसपास के लोगों तक फैलाते हैं।

संस्कृति : पदानुक्रमित प्रसार

संस्कृति प्रसार मॉडल में सांस्कृतिक लक्षण कुलीनों के बीच उत्पन्न होते हैं और फिर समाजों के निचले स्तर / निचले स्तर वाले शहरों में फैलते हैं।

संस्कृति : स्थानांतरण विचलन

सांस्कृतिक प्रसार मॉडल संस्कृति के प्रसार और लोगों के भौतिक आंदोलन के बीच संबंध को प्रदर्शित करता है।

संस्कृति : प्रेरक विसरण

सांस्कृतिक प्रसार मॉडल, सांस्कृतिक प्रसार को दर्शाता है, लेकिन सांस्कृतिक लक्षण क्षेत्रीय स्वाद / भिन्नता के अनुकूल होते हैं। विचार तो स्थिर रहते हैं लेकिन हर क्षेत्र के अनुरूप थोड़े बदलाव आ जाते हैं।

विकास : 1980 में ब्रान्ड्ट प्रमेय, ब्रान्ड्ट लाइन दुनिया को विकसित उत्तर और कम विकसित दक्षिण के बीच विभाजित करती है।

विकास : मानव विकास सूचकांक जीवन प्रत्याशा शिक्षा (स्कूली शिक्षा के वर्ष, प्रत्याशित स्कूली शिक्षा के वर्ष) और सकल राष्ट्रीय आय (क्रय शक्ति समानता को समायोजित करता है) को मापता है।

विकास : लॉश का लाभप्रदता मॉडल।

निर्माण संयंत्रों को उस स्थान पर लगाया जाता है जहां से लाभ को अधिकतम कर सकते हैं।

विकास : आर्थिक विकास के चरणों को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है:-

1. परम्परावादी समाज
2. प्राथमिक क्षेत्र
3. उद्योग
4. परिपक्वता

विकास : वेलेंस्टीन विश्व प्रणाली (वर्ल्ड सिस्टम) सिद्धांत विश्व को एकीकृत आर्थिक प्रणाली के रूप में वर्गीकृत करता है जिसमें विभिन्न देशों की अलग-अलग भूमिकाएं हैं और एक-दूसरे पर निर्भर हैं तथा विश्व को कोर, परिधि, अर्धपरिधि में विभाजित करता है।

उद्योग/सेवाएं :

बोरचर्ट Borchert के संक्रमण का युग

1967 में अमेरिकी भूगोलवेत्ता जॉन बोरचर्ट के अनुसार, ''अमेरिकी औद्योगिक युग विकसित शहरीकरण और परिवहन पर आधारित था।''

क्लार्क का औद्योगिक श्रम विभाजन :

क्लार्क का औद्योगिक श्रम विभाजन दो अलग-अलग क्षेत्रों में विभाजित था पहला श्रम का विभाजन (प्राथमिक, माध्यमिक, तृतीयक चतुर्थक, पंचम) और दूसरा जिम्मेदारी।

औद्योगिक सेवाएं : वेबर का सबसे कम लागत वाला मॉडल/औद्योगिक स्थान उत्पादन के केंद्रों और बाजारों से दूरी के साथ वजन बढ़ने वाले और वजन खोने वाले उद्योगों के बीच परिवहन सामग्री की लागत के संबंध की व्याख्या करता है।

राजनीतिक भूगोल : रिमलैंड सिद्धांत

हैलफोर्ड मैकिण्डर का दावा है कि जो भी केंद्र के क्षेत्र को नियंत्रित करता है वह दुनिया को नियंत्रित कर सकता है। निकोलस स्पाइकमैन ने रिमलैंड सिद्धांत या मॉडल

को प्रस्तावित किया। उनके अनुसार हृदयभूमि को नियंत्रित करने में रिमलैंड की भूमिका महत्वपूर्ण थी।

जनसंख्या जनसांख्यिकीय संक्रमण मॉडल : यह मॉडल विकास और जन्म दर में परिवर्तन और जनसंख्या वृद्धि के बीच संबंध को स्पष्ट करता है।

जनसंख्या : माल्थस सिद्धांत : यह सिद्धांत जनसंख्या वृद्धि दर और प्रभाव की व्याख्या करता है।

जनसंख्या पिरामिड सिद्धांत : पिरामिड जनसांख्यिकीय आंकड़ों के मानचित्रण के तरीके हैं जो जनसंख्या के रुझानों और पैटर्न की कल्पना करते हैं।

शहरीकरण

केंद्र स्थान सिद्धांत : यह जनसंख्या केंद्रों के स्थान के संबंध में व्यवसायों के स्थान के बीच संबंध की व्याख्या करता है।

गेलेक्टिक सिटी मॉडल : छोटे किनारे वाले शहर जो बेल्टवे या राजमार्गों द्वारा दूसरे शहर से जुड़े होते हैं।

कंसेंट्रिक जोन मॉडल : यह मॉडल मान्यताओं के आधार पर शहर का केंद्र है और शहर से घर की दूरी बढ़ने पर घर के मूल्य/किराए बढ़ जाते हैं।

गुरुत्वाकर्षण मॉडल : शहरी केंद्रों के बीच बातचीत की गणना आकार और दूरी से की जा सकती है।

परिधीय मॉडल : शहरी क्षेत्र जिसमें आंतरिक उपनगरीय क्षेत्र होते हैं, जो बड़े उपनगरीय आवासीय और व्यावसायिक क्षेत्रों से घिरा होता है, जो बेल्ट वेज या रिंग रोड द्वारा एक साथ बंधे होते हैं।

मल्टीपल न्यूक्लियर मॉडल : कारों के बढ़ते महत्व और आने-जाने का हिसाब। विभिन्न नाभिकों का निर्माण जो एक दूसरे का समर्थन करते हैं।

अंतरंग शहर : सबसे बड़ा शहर, महत्व और आबादी के मामले में अगले शहर जितना बड़ा है।

सेक्टर मॉडल : विभिन्न क्षेत्र पर्यावरणीय कारकों के संयोग से विभिन्न गतिविधियों में भाग लेते हैं।

रैंक आकार नियम : यदि किसी देश के सभी शहरों को सबसे बड़े से सबसे छोटे क्रम में रखा जाता है, तो हर एक की आबादी पूर्ववर्ती शहर के आधे आकार की होगी।

भूगोल के प्रतिरूप (मॉडल)

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात भूगोल की परिभाषा, पद्धति, और उसके विषय में बड़ा परिवर्तन आया। विषय को सुदृढ़ आधार प्रदान करने के लिए बहुत सारे अन्य विषयों से सहायता ली गई।

मॉडल एक ऐसी तकनीक है जिसके द्वारा विश्व की छोटी से छोटी कठिनाई को मॉडल द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है। मॉडल द्वारा किसी भी बड़ी से बड़ी आकृति को लघु रूप में दर्शाया जाता है

भिन्न-भिन्न भूगोलवेत्ताओं ने मॉडल को अलग-अलग प्रकार से परिभाषित किया है–

स्किलिंग (Skilling 1964) के अनुसार, ''मॉडल एक सिद्धांत नियम, परिकल्पना अथवा संरचित विचार है।''

भूगोल में मॉडल के निर्माण का प्रयोग मुख्य रूप से मात्रात्मक क्रांति के साथ 1960 के दशक में हुआ।

सर्वप्रथम एडवर्ड एकरमैन ने भूगोल में गणितीय विधि और मॉडल निर्माण के लिए कदम बढ़ाया। उसके पश्चात शोर्ले, पीटर हैगट ने मॉडल पर कई महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखीं। प्रेड और मोरिल ने भी नियमों की खोज में महत्वपूर्ण योगदान दिया। भौतिक भूगोल में मॉडल निर्माण कार्य की सबसे पहले शुरुआत हुई और बाद में मानव भूगोल में भी इसकी शुरुआत हुई।

अकॉफ (Ackoff) के अनुसार, ''किसी सिद्धांत अथवा नियम को तर्कसंगत उपकरणों और गणित के प्रयोग द्वारा औपचारिक प्रस्तुतीकरण को ही मॉडल कहा जाता है।''

हेंस यंग और पेच (Haines Young and Petch) के अनुसार, "मॉडल किसी ऐसी विधि या यांत्रिक उपायों को कहा जाता है जो पूर्वानुमान उत्पन्न करें।"

भौगोलिक यथार्थ, मानव दृश्य व प्रकृति-मानव संबंध को सरल बनाकर आदर्श रूप से प्रस्तुतीकरण ही मॉडल प्रक्रिया कहलाता है।

मॉडल/प्रतिरूप का महत्व

पृथ्वी एक ऐसा दस्तावेज है जो मानव-प्रकृति के संबंधों का अध्ययन करने के लिए आवश्यक है। पृथ्वी पर सांस्कृतिक व प्राकृतिक विषमताओं का विकास हुआ है, जिससे पृथ्वी पर इन दोनों के बीच सबंध भी काफी जटिल पाए जाते हैं। पृथ्वी, स्थान व समय अनुसार परिवर्तनशील है। इसको समझने के लिए बहुत सारे साधन हैं। मॉडल एक ऐसा साधन है जो पृथ्वी पर विकसित जटिलताओं को परिकल्पना व सिद्धांतों के परीक्षण द्वारा समझाता है और मॉडल पूर्वानुमान के उपाय हैं।

आर.एन. सिंह व एस. डी. मौर्य के शब्दों में, "मॉडल वास्तविकता का वैचारिक, सैद्धांतिक प्रदर्शन है जो किसी आरेख, अनुरूप अथवा समीकरण के रूप में हो सकता है। मॉडल के प्रयोग का उद्देश्य किसी भौगोलिक स्थिति, तथ्य या विचार को और अधिक सरल एवं सुग्राह्य रूप से प्रस्तुत करना होता है जिससे उसको समझने और अध्ययन करने में सुगमता हो।"

शॉर्ले व हैगेट के अनुसार, "मॉडल पर्यवेक्षित तथा सैद्धांतिक स्तरों के मध्य पुल का निर्माण करते हैं और सरलीकरण, लघुकरण, प्रत्यक्षीकरण, प्रयोग, क्रिया, विस्तार वैश्वीकरण, सिद्धांत रचना तथा व्याख्या से संबंधित होते हैं।"

पीटर हैगेट के अनुसार, "मॉडल वास्तविक जगत का आदर्शीकृत प्रदर्शन होता है जिसका निर्माण इसके निश्चित गुणों को प्रदर्शित करने के लिए किया जाता है।"

मॉडल के गुण

टिप्पणी

मॉडल किसी जटिल या विस्तृत स्थिति को सरल व लघु रूप में प्रदर्शित करने का एक व्यवस्थित रूप है। इसकी प्रमुख विशेषताएं हैं–

1. मॉडल सदृश्य होते हैं, तथा तत्वों के एक समूह को दृश्य और सुग्राह्य बनाते हैं।
2. मॉडल वास्तविकता के समस्त लक्षणों को प्रकट नहीं करता क्योंकि यह वास्तविक जगत का रूप होता है।
3. मॉडलों की सहायता से उपलब्ध आंकड़ों द्वारा अधिकतम सूचनाएं प्राप्त की जाती हैं।
4. मॉडल वास्तविक जगत की जटिलता और विस्तार को कम करके उसे सरल व सुग्राह्य बनाते हैं।
5. मॉडल द्वारा सूचनाओं को परिभाषित, एकत्रित और व्यवस्थित किया जाता है।
6. मॉडल वास्तविक जगत के कुछ पहलुओं, तत्वों को ही प्रदर्शित करते हैं।
7. मॉडल प्रतिरूप या सांकेतिक किसी भी प्रकार के हो सकते हैं।
8. किसी भी प्रकार के मॉडल वास्तविक जगत से अलग होते हैं केवल कुछ ही मॉडल वास्तविक जगत के अधिक निकट होते हैं।
9. मॉडल वास्तविकता के आदर्शीकृत या सामान्यीकृत स्वरूप को ही प्रदर्शित करते हैं।
10. मॉडल परिकल्पनाओं के निर्माण के लिए प्रोत्साहित करते हैं। सामान्यीकरण द्वारा नियमों तथा सिद्धांतो के निर्माण करने में सहायक होते हैं।

अन्य प्राकृतिक विज्ञानों की तरह ही भूगोलवेत्ता भी नियम व सिद्धांत निरूपण करने में विश्वास करते हैं। पृथ्वी पर पाई जाने वाली मानवीय व प्राकृतिक घटना के मध्य अंत्यक्रिया का ज्ञान प्राप्त करने के लिए मॉडल आवश्यक है। भूमि की सतह पर दृश्य वस्तुओं एवं मानवीय क्रियाओं से जटिल यथार्थ बनता है। इसे समझने के लिए पूर्वानुमान महत्वपूर्ण होते हैं जो कि मॉडलों द्वारा व्यक्त किये जाते हैं। मॉडलों का प्रयोग करने के कई महत्वपूर्ण कारण हैं–

1. पूर्वानुमानों, दृश्य घटनाओं का अनुरूपण, अंतर्वेशन, आंकड़ों का जनन व आकलन के लिए मॉडल का प्रयोग लाभदायक है। इसकी सहायता से जनसंख्या के घनत्व, वृद्धि, भूमि उपयोग, फसल गहनता, जनसंख्या का प्रतिरूप, वितरण, औद्योगीकरण नगरीकरण, मलिन बस्तियों जैसी घटनाएं आसान शब्दों द्वारा व्यक्त की जा सकती हैं। यह मौसम की भविष्यवाणी करने, जलवायु परिवर्तन करने, पर्यावरण प्रदूषण, मिट्टी कटाव, आकृतियों के विकास में भी उपयोगी सिद्ध होते हैं।
2. उद्योगों से संबंधित अवस्थितिजन्य सिद्धांतों, कृषि भूमि उपयोग के सिद्धांतों, प्रवास प्रारूपों, भू आकारों के विकास के चरणों का पूर्वानुमान मॉडलों की सहायता से

आसानी से लगाया जा सकता है क्योंकि मॉडल के द्वारा व्याख्या, विश्लेषण और भौगोलिक तंत्र को सही ढंग से व्यक्त किया जाता है।

3. तंत्रों के स्थानापन्न प्रक्षेपों के लिए विकल्प मॉडल प्रयोग किए जा सकते हैं। जिन घटनाओं को प्रत्यक्ष रूप से नहीं देख सकते, उनको व्यक्त करने के लिए विकल्पीय मॉडल बनाकर घटना परीक्षण किया जा सकता है।
4. भौगोलिक आंकड़ों का विस्तार, विविधता, उनका चयन और उनके बीच पाए जाने वाले सहसंबंधों की खोज करने के लिए मॉडल की आवश्यकता होती है।
5. मॉडल क्रिया एक प्रकार से सूक्ष्म भाषा है जिसको सामाजिक और भौगोलिक वैज्ञानिक ही समझ सकते हैं।
6. मॉडल द्वारा सामान्य व विशेष नियमों का निर्माण और सिद्धांत की रचना में सहायता मिलती है।
7. सैद्धांतिक कथनों के आनुभविक यथार्थ को मॉडल स्पष्ट बनाता है।
8. मॉडल एक तंत्र के प्रधान गुण व लक्षणों और उनके पर्यावरण के साथ संबंधों का अध्ययन करने में कारगर होते हैं।

मॉडल/प्रतिरूप के लक्षण

मॉडल के मुख्य लक्षण निम्नलिखित हैं-

1. मॉडलों के कुछ लक्षण अधिक महत्वपूर्ण और कुछ कम महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि यह चयन क्रिया पर आधारित हैं।
2. मॉडलों को अनुरूपताए भी कहते हैं क्योंकि यह यथार्थ जगत से भिन्न होते हैं। ये केवल मिलती-जुलती तस्वीर ही होते हैं।
3. मॉडल वास्तविक जगत के कुछ लक्षणों को सरलता से अवगत कराता है जिससे निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।
4. मॉडल में पूर्वानुमान के सुझाव भी अंतर्निहित होते हैं। अतः मॉडल वास्तविक जगत के पूर्वानुमान ही हैं।
5. उपलब्ध आंकड़ों में अधिकतम सूचनाओं के विश्लेषण से मॉडल बनते हैं।
6. मॉडल सूचनाओं को परिभाषित, संगृहीत करने का ढांचा प्रस्तुत करता है।
7. मॉडल समानता रखने वाली वस्तुओं के समूह की तुलना करने में सहायक होते हैं।
8. मॉडल परिकल्पनाओं की रचना करने में सहायक होते हैं।
9. कोई विशेष घटना या दृश्य पृथ्वी तल पर किस प्रकार घटित हुई, मॉडल इसकी व्याख्या करने में सहायक होते हैं।
10. मॉडल पृथ्वी की सतह व मानव पर्यावरण के जटिल संबंधों को व्यक्त करने के लिए उपयुक्त हैं।
11. मॉडल सिद्धांत रचना व नियम बनाने की प्रथम सीढ़ी है।

12. दृश्य वस्तु समूह में से इच्छित वस्तु समूह को छांटने में मॉडल सहायक होते हैं।

मॉडल के प्रमुख प्रकार

टिप्पणी

मॉडल वास्तविकता का काल्पनिक चित्रण है। यह एक विस्तृत रचना का संक्षिप्त रूप है। संक्षिप्तीकरण की मात्रा व अनुपात के अनुसार इनमें गुण का निर्धारण होता है। यहां विभिन्न आधारों पर मॉडल का वर्गीकरण इस प्रकार से है–

गुण तथा कार्य के आधार पर मॉडल

गुण व कार्य के आधार पर मॉडल को तीन प्रकार से विभाजित किया जा सकता है–

1. संकेतात्मक/प्रतीकात्मक मॉडल
2. मूर्तिमान मॉडल
3. अनुरूप मॉडल

प्रतीकात्मक मॉडल– इस मॉडल में वास्तविकता का अभाव होता है। इसमें वास्तविक तत्वों को गणितीय संकेतों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। स्थूलता को सूक्ष्म से सूक्ष्मतम रूप में प्रस्तुत करने का यह सर्वोत्तम उपाय है। इसे गणितीय मॉडल भी कहते हैं। प्रतीकात्मक मॉडल में मुख्य गणितीय सूत्रों व समीकरणों का प्रयोग किया जाता है। इस मॉडल में प्रदर्शित तत्वों को चरणों के रूप में मान लेते हैं। उसके अंतरसंबंधों को गणितीय समीकरण के रूप में प्रकट करते हैं।

जैसे वृत्त की परिधि $=2\pi r$ एक मॉडल है जो वृत्त की त्रिज्या और परिधि को व्यक्त करता है।

प्रतीकात्मक मॉडल में संक्षिप्तीकरण सर्वाधिक पाया जाता है। जिसमें भौगोलिक वास्तविकता का अभाव रहता है।

मूर्तिमान मॉडल– इसमें वास्तविकता के तत्वों को शामिल करते हैं। इस मॉडल के निर्माण में उन समस्त तत्वों का प्रयोग किया जाता है जिनसे वास्तविक जगत का निर्माण हुआ है। मूर्तिमान मॉडल त्रिविमीय आकृति के होते हैं जो वास्तविक स्वरूप को लघुतम रूप में प्रदर्शित करते हैं। इन मॉडलों में किसी मनुष्य, पशु, किसी भवन आदि को प्रदर्शित करने वाले संरचनात्मक मॉडल आते हैं, जैसे ग्लोब पृथ्वी को प्रदर्शित करने के लिए इस प्रकार के मॉडल का सर्वोत्तम उदाहरण है। पृथ्वी का सही प्रतिनिधित्व करने के लिए ग्लोब का निर्माण किया गया। यह पृथ्वी के लघुतम रूप को प्रदर्शित करता है। यह मॉडल पृथ्वी के प्रमुख लक्षणों को ही प्रदर्शित करने में सक्षम होता है।

इसी प्रकार से त्रिविमीय मानचित्र भी मूर्तिमान मॉडल होते हैं क्योंकि ये पृथ्वी के उच्चावच को प्रदर्शित करते हैं।

अनुरूप मॉडल– अनुरूप मॉडल में वास्तविक तथ्यों को अनुरूप तथ्यों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। जैसे मानचित्र पर जनसंख्या वितरण को बिंदुओं द्वारा, जनसंख्या घनत्व को छायांकन द्वारा दिखाया जाता है। बिन्दु आरेख में अधिक जनसंख्या वाले स्थान को अधिक बिंदुओं के द्वारा और कम जनसंख्या वाले स्थान को कम बिंदुओं के द्वारा दिखाया जाता है। छायांकन विधि में अधिक जनसंख्या घनत्व वाले स्थान को गहरी छाया के द्वारा और कम जनसंख्या घनत्व वाले स्थान को हल्की छाया के द्वारा लिखा जाता है। आरेख, चित्र, मानचित्र आदि अनुरूप मॉडल के अन्य उदाहरण हैं।

सूचना की प्रकृति के आधार पर मॉडल

सूचना की प्रकृति के अनुसार मॉडल दो प्रकार के होते हैं–

1. वर्णनात्मक मॉडल
2. मानकीय / नियामक मॉडल।

1. वर्णनात्मक मॉडल– वर्णनात्मक मॉडल में आनुभविक सूचनाओं का संगठन और आंकड़ों का अभिकल्प किया जाता है और आंकड़ों का वैज्ञानिक वर्गीकरण भी करते हैं अत: इन्हें प्रायोगिक डिजाइन मॉडल भी कहते हैं।

2. मानकीय मॉडल– यह मॉडल कुछ उद्घाटित अथवा घटित होने वाली कल्पित घटनाओं की भविष्यवाणी से संबंधित होता है।

मॉडलों का सामान्य वर्गीकरण

सामान्यकृत मॉडलों का प्रयोग मानव पर्यावरण के अंतर संबंधों की जटिलता और विभिन्न प्रकार के तंत्रों को स्पष्ट करने हेतु किया जाता है। भूगोलवेत्ताओं ने अपने समकक्ष विभिन्न भौतिक व सामाजिक विज्ञानों से अनेक प्रकार के मॉडलों को उद्धरित किया है।

भौगोलिक अध्ययनों में प्रयोग किये जाने वाले मॉडलों को उनके उपयोग, स्वरूप, गुण आदि के आधार पर कई भागों में विभक्त किया जाता है–

1. मापक
2. मानचित्र
3. अनुरूप
4. गणितीय मॉडल
   - गुरुत्व मॉडल
   - सम्भाव मॉडल
   - समाश्रयण मॉडल
   - कोटि आकार नियम
5 अनुकरण/छद्मरूप मॉडल
   - निश्चयात्मक मॉडल
   - प्रसंभाव्य मॉडल
6. ऐतिहासिक मॉडल
7. अवस्थितिक विश्लेषण एवं भूमि उपयोग मॉडल

1. मापक मॉडल– इस मॉडल के अंतर्गत वास्तविकता को लघु या प्रत्यक्ष रुप से प्रदर्शित किया जाता है। इस मॉडल के अंतर्गत मॉडल दृश्य तथ्यों या घटनाओं का प्रदर्शन मापक के अनुसार किया जाता है। बड़े तथ्यों को बड़े आकार द्वारा और छोटे तत्वों को छोटे आकार द्वारा दिखाया जाता है। इसलिए इस मॉडल को 'हार्डवेयर मॉडल' भी कहते हैं।

टिप्पणी

मापक मॉडल गतिमान या स्थैतिक दोनों प्रकार के हो सकते हैं। स्थिर जैसे भूगर्भीय मॉडल अथवा सक्रिय जैसे नदी- अवनालिका। किसी प्रदेश या क्षेत्र की प्रादेशिक व स्थानीय स्तर पर धरातल के उच्चावच को प्रदर्शित करने वाला उच्चतामितीय वक्र मापक मॉडल का उत्कृष्ट उदाहरण है। इन मॉडल का प्रयोग भू आकृति विज्ञान अपरदन के कारकों जैसे नदी, हिमनदी, पवन, जलतरंग, भूमिगत जल, समुद्री जल आदि के अपरदन और निक्षेपण द्वारा निर्मित स्थल आकृतियों को प्रदर्शित करने में किया जाता है। वर्तमान समय में इन मॉडलों का उपयोग भूगोलवेताओं के अलावा इंजीनियर, नियोजक, नगर नियोजक आदि द्वारा भी किया जाता है। इन मॉडलों की सहायता से नहर की खुदाई, नदियों के सुधार कार्य, बांध व पुल निर्माण, सड़क निर्माण, बाढ़ नियंत्रण, पोताश्रय निर्माण व रखरखाव, ज्वारीय उभार, भूस्खलन आदि कार्य किए जाते हैं।

2. मानचित्र मॉडल– मानचित्र मॉडल के द्वारा संपूर्ण पृथ्वी या किसी एक भाग को लघुतम रूप में प्रदर्शित किया जाता है। मानचित्रों को निश्चित मापक और प्रक्षेपों के अनुसार निर्मित किया जाता है। मापक लघु, मध्यम और वृहत हो सकता है मापक के छोटा होने के साथ मानचित्र पर प्रदर्शित तत्व अमूर्त हो जाते हैं। मापक के लघु होने से सभी सूचनाओं को मापक के अनुसार नहीं दिखाया जा सकता, इसीलिए कुछ सूचनाएं सांकेतिक भाषा में प्रदर्शित की जाती हैं।

मानचित्र पर विभिन्न प्रकार के भौतिक तत्वों जैसे संरचना, जलाशय, जलवायु, मिट्टी, प्राकृतिक वनस्पति, प्राकृतिक संसाधन उच्चावच, जीव जंतु और मानवीय तत्वों जैसे कृषि क्षेत्रों, औद्योगिक क्षेत्रों, ग्राम, नगर, यातायात के साधन (रेल मार्ग, समुद्री मार्ग, हवाई मार्ग, सड़क मार्ग, पगडंडी) ग्राम, नगर आदि को दर्शाया जाता है।

मानचित्र की रचना किसी एक विमीय जैसे कि समतल कागज पर करते हैं, जो कि त्रिविमीय आकृति यानी कि पृथ्वी को हूबहू प्रदर्शित नहीं कर सकता। इसे केवल ग्लोब द्वारा ही दर्शाया जा सकता है। परंतु लघु आकार और एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने की समस्या होने के कारण इसकी उपयोगिता कम हो जाती है। पृथ्वी के गोलाकार आकृति को समतल पृष्ठ पर उतारने के लिए मानचित्र प्रक्षेपों की आवश्यकता पड़ती है। भूगोल में विभिन्न मानचित्र जैसे वितरण मानचित्र, भू उपयोग मानचित्र, मौसम मानचित्र, स्थलाकृति मानचित्र आदि।

3. अनुरूप मॉडल/स्टॉकस्टिक मॉडल – किसी स्थिति के व्यवहार का अनुकरण करके मॉडल की रचना को अनुकरण कहते हैं। यह अनुकरण सदृश्य स्थिति द्वारा या उपकरण की सहायता से किया जा सकता है। जेम्स हट्टन ने 1795 में भूदृश्य के विकास और विनाश की व्याख्या मानव में रक्त संचरण से तुलना करके की थी।

इसी प्रकार से विलियम मॉरिस डेविस ने स्थलरूपों के विकास को मानव जीवन से तुलना करके 'सामान्य अपरदन चक्र' सिद्धांत का प्रतिपादन किया था।

उनके अनुसार कोई भी नव उत्थित भूसंरचना युवा, प्रौढ़ और जीर्ण अवस्था से होता हुआ अंत में समप्राय मैदान में बदल जाता है।

इसी प्रकार से फ्रेडरिक रेटजेल ने अनुरूप मॉडल के आधार पर 'राज्य एक जीवित जीव के रूप में' राज्य की तुलना जीवित जीव से की।

इसी प्रकार से गुरुत्व मॉडल भी अनुरूप मॉडल का ही एक रूप है जिसके अनुसार दो पिंडों या राशियों में आकर्षण उनके आकार के अनुपात में और उनके बीच पाई जाने वाली दूरी के विलोम अनुपात में होता है।

टिप्पणी

4. गणितीय मॉडल – गणितीय मॉडलों की रचना काफी कठिन होती है और इन मॉडल में अनेक मानवीय तत्व जैसे अभिवृत्तियों, नियामक प्रश्नों आदि से जुड़ी समस्याओं के उत्तर नहीं मिलते। पर ये बहुत विश्वसनीय व वस्तुनिष्ठ होते हैं।

गणित में गणितीय मॉडलों की रचना भौतिक विज्ञानियों ने की थी और भौतिक विज्ञान और भौतिक भूगोल का परस्पर संबंध होने से ये मॉडल भौतिक भूगोल में सफल रहे। परंतु मानव भूगोल की शाखाओं के लिए गणितीय मॉडल अधिक सफलता नहीं पा सके।

कुछ गणितीय मॉडल भौतिक विज्ञान और अर्थशास्त्र से उधार लिए गए और कुछ का निर्माण भूगोलवेत्ताओं ने किया जैसे गुरुत्व मॉडल, कोटि आकार नियम, संभाव्य मॉडल गणितीय मॉडलों का ही रूप है।

- **गुरुत्व मॉडल–** इस नियम के अनुसार दो पिंडों या दो क्षेत्रों के मध्य अंतरक्रिया उनके आकार के प्रत्यक्ष समानुपाती और उनके मध्य दूरी के वर्ग के व्युत्क्रमानुपाती होती है।
- **संभाव्य मॉडल–** इस प्रकार के मॉडल किसी स्थान की या किसी तंत्र विशेष की अन्य किसी स्थान या तंत्र से अंतरक्रिया की विवेचना करता है। इस प्रकार के बहुत से सम्भाव्य मॉडल भूगोल में बने जैसे जनसंख्या सम्भाव्य मॉडल जनसंख्या वितरण की सरंचना की व्याख्या करने में सफल हुआ।
- **समाश्रयण मॉडल** – इनका प्रयोग समाश्रयण विश्लेषण में किया जाता है। यदि किसी एक चर का चर के मूल्य ज्ञात हो तो दूसरे चर के मूल्य की गणना कर ली जाती है जैसे X चर का मूल्य पता है तो Y चर की गणना कर सकते हैं और Y चर मूल्य ज्ञात है तो X का मूल्य निकाल सकते हैं। इस मॉडल का प्रयोग सांख्यिकीय विश्लेषण करने में किया जाता है।

  इसका उद्देश्य एक या अधिक आश्रित चरों पर एक परतंत्र चर की प्रेक्षित मात्रा में भिन्नता की व्याख्या करने के लिए किया जाता है। यदि इसमें एक ही स्वतंत्र चर प्रयुक्त होता है, तो इस विधि को एकल चर विश्लेषण और एक से अधिक चरों का प्रयोग होता है तो उसे बहुचर विश्लेषण कहा जाता है।

  जब इन स्वतंत्र और आश्रित चरों के मूल्यों का प्रदर्शन ग्राफ पर किया जाता है तो इसे रेखीय समाश्रयण कहा जाता है।
- **कोटि आकार नियम** – कोटि आकार नियम का प्रतिपादन जी. के. जिफ ने किया था और नगरीय भूगोल में बहुतायत से प्रयोग किया जाता है। इस मॉडल का प्रयोग जनसंख्या आकार निकालने हेतु किया था। इस मॉडल के अनुसार किसी देश व प्रदेश में सबसे बड़ी नगर की कोटि प्रथम होगी।

5. अनुकरण / छद्मरूप मॉडल – इस मॉडल का प्रयोगात्मक कार्यों में प्रयोग किया जाता है। यह वास्तविक तंत्र को प्रदर्शित करता है। इस मॉडल का प्रयोग भौतिकी और गणित में किया जाता है। यह मॉडल दो प्रकार के होते हैं–

- **निश्चयात्मक मॉडल**- गणितीय कथनों और तार्किक कथनों द्वारा परिणाम प्राप्त किए जाते हैं। इस मॉडल में संभावनाओं का कोई स्थान नहीं होता।
- **प्रसंभाव्य मॉडल**- इस मॉडल में संभावना का प्रयोग किया जाता है। इसमें संभावित संख्याओं का प्रयोग किया जाता है। सांख्यिकी विश्लेषण में प्रयुक्त करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है।

6. ऐतिहासिक मॉडल– ऐतिहासिक मॉडल का निर्माण भूतकालीन घटनाओं के आधार पर किया जाता है। भूतकालीन निश्चित समय बिंदु से वर्तमान तक की घटना के परिप्रेक्ष्य में भविष्यवाणी की जाती है। इसे गत्यात्मक मॉडल भी कहा जाता है। इसका प्रयोग भौतिक भूगोल और मानव भूगोल दोनों में किया जाता है पर अधिकांशत: प्रयोग मानव भूगोल में ही किया जाता है। मानव भूगोल के बहुत से सिद्धांत और नियम ऐतिहासिक तथ्यों और घटनाओं पर आधारित होते हैं। ऐतिहासिक मॉडल के उदाहरण हैं-

जनसंख्या वृद्धि का जनांकिकीय संक्रमण सिद्धांत, नगरीकरण चक्र मॉडल।

किसी ऐतिहासिक घटना का संबंध सदैव समय और स्थान से रहता है। भौगोलिक अध्ययनों में किसी स्थान, घटना विशेष की व्याख्या में ऐतिहासिक मॉडलों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। स्थानिक प्रतिरूप कभी भी स्थैतिक नहीं होते और वर्तमान विवरणों को समझने के लिए उनके विकास की यात्रा की जानकारी बहुत महत्वपूर्ण होती है।

7. अवस्थितिक विश्लेषण और भूमि उपयोग मॉडल– कुछ भूगोलवेत्ताओं ने स्थानिक विज्ञान को समझने के लिए अनेक महत्वपूर्ण मॉडलों का निर्माण किया जैसे वॉन थ्यूनेन का कृषि अवस्थिति सिद्धांत, वेबर का औद्योगिक अवस्थिति सिद्धांत, क्रिस्टल का केंद्र स्थल सिद्धांत, बर्गीस का सकेंद्रीय वलय सिद्धांत और होमर होयट का त्रिज्याखंडीय सिद्धांत आदि।

सिद्धांतों का प्रयोग नगरी भूमि उपयोग या क्रियात्मक आकारिकी को समझने के लिए किया गया।

अवस्थितिक मॉडलों के निर्माण में पीटर हैगेट, शॉर्ले, हैंगरस्ट्रैंड, हार्वे जॉनसन, स्मिथ, गोल्ड आदि भूगोलवेत्ताओं का मॉडलों के निर्माण में महत्वपूर्ण स्थान है।

क्योंकि भूगोल एक स्थानिक विज्ञान है इसी कारण भूमि उपयोग मॉडल का विशेष स्थान है। विभिन्न अर्थशास्त्रियों और समाज विज्ञानियों ने अनेक महत्वपूर्ण मॉडलों का निर्माण करके भूमि उपयोग संबंधी मॉडलों की रचना की। इन्होंने नगर व ग्राम में भूमि उपयोग के स्थानिक प्रतिरूपों को समझने के लिए इस प्रकार के मॉडल की सहायता ली और इन परिणामों को सामान्यीकृत करने में अहम भूमिका निभाई।

मॉडल के अवगुण / हानियां

बहुत से भूगोलवेताओं ने कहा कि मॉडल हमारे लिए हमेशा लाभप्रद नहीं होते हैं–

1. यह यथार्थ विज्ञान और भौतिक भूगोल के अध्ययन के लिए ज्यादा उपयुक्त हैं क्योंकि यह वास्तविक तथ्यों पर आधारित होते हैं और इनके निर्माण में सांख्यिकी एवं गणितीय विधियां अपनाई जाती हैं। परंतु परिवर्तनशील मानव व्यवहार वाले सामाजिक विज्ञान में इनका प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि उनको किसी भी सांख्यिकी विधि के द्वारा नापा नहीं जा सकता।

2. मानव के कुछ तथ्यों जैसे विश्वास, मान्यताएं, आचरण, इच्छाओं, संतुष्टि, आनंद, रुचि, शौक, मनोभाव आदि को किसी भी विधि से मापा नहीं जा सकता। इस प्रकार ये मॉडल मानव भूगोल (क्योंकि मानव और उसका व्यवहार अध्ययन महत्वपूर्ण घटक होता है) का आधा अधूरा ही ज्ञान करवाने में सक्षम है।
3. अधिकांश गणितीय मॉडल को समझने के लिए उन्नत प्रकार की गणितीय विधियों और कंप्यूटर यंत्रों की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए यह मॉडल बहुत ज्यादा जटिल हो जाते हैं जो सामान्य विद्यार्थियों, नीति निर्धारकों आदि को इन मॉडलों को समझने में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है।
4. मॉडल निर्माण के लिए विश्वसनीय आंकड़ों की आवश्यकता होती है क्योंकि विकासशील देशों में आंकड़ों की विश्वसनीयता सही नहीं होती इसलिए ऐसे देशों में इस प्रकार के मॉडलों से प्राप्त परिणाम सही स्थिति नहीं व्यक्त करते।
5. मॉडल निर्माण करने के लिए भौगोलिक जटिलताओं को सरल किया जाता है और ये वास्तविक तथ्यों को अति सरल करने के प्रयास में वास्तविकता से छेड़खानी करके अर्धसत्य को प्रकट करते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

1. निम्न में से किन विशिष्ट स्थितियों में मॉडल लागू हो सकता है?
   (क) कृषि क्रांति तथा वैज्ञानिक विकास प्रसार
   (ख) संस्कृति प्रसार, विकास
   (ग) उद्योग/सेवा क्षेत्र, शहरीकरण
   (घ) उपर्युक्त सभी।
2. ''मॉडल वास्तविक जगत का आदर्शीकृत प्रदर्शन होता है जिसका निर्माण इसके निश्चित गुणों को प्रदर्शित करने के लिए किया जाता है।''-यह किसका कथन है?
   (क) पीटर हैगेट (ख) आर.एन. सिंह व एस.डी. मौर्य
   (ग) शार्ले व हैगेट (घ) इनमें से कोई नहीं।

4.3 भूगोल में मात्रात्मक क्रांति

200 वर्षों से भी अधिक समय से भूगोल का सामान्य अनुमान सिद्धांत भी निरूपण की समस्याओं का सामना कर रहा था। अन्य सभी प्राकृतिक और सामाजिक विज्ञानों में सिद्धांत निरूपण की लंबी परंपरा रही है द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत भूगोल वेत्ताओं ने विशेषकर विकसित देशों के भूगोल वेत्ताओं ने भूगोल के अध्ययन में साहित्य भाषा के प्रयोग के स्थान पर गणितीय विधियों को महत्वपूर्ण माना। परिणामस्वरूप अनुभव आश्रित व वर्णात्मक भूगोल को नकार दिया गया। उसके स्थान पर भूगोल में निरपेक्ष मॉडलों की रचना पर बल दिया जाने लगा। गणितीय और अमूर्त सिद्धांतो के निर्माण में वैज्ञानिक और सांख्यिकीय तकनीकों के प्रयोग की आवश्यकता होती है। सांख्यिकीय विधियों को भूगोल विषय में सिद्धांतों के निर्माण में अधिक उपयोग करने को मात्रात्मक क्रांति के रूप में जाना

जाता है अर्थात भूगोल में सांख्यिकी और गणितीय सूत्रों के उपयोग को मात्रात्मक क्रांति कहा जाता है।

टिप्पणी

बीसवीं शताब्दी के मध्य भौगोलिक चिंतन में प्रमुख मोड़ आया। इससे पहले लगभग 2300 वर्षों में भूगोल में पृथ्वी की जानकारी जुटाना और पृथ्वी पर पाई जाने वाली विशेषताओं का वर्णन करना ही प्रमुख कार्य माना जाता था।

1939 में रिचर्ड हाटशॉर्न ने 'नेचर ऑफ ज्योग्राफी' 1939 के द्वारा भूगोल को प्रदेशों के व्यक्तिगत अध्ययन के रूप में स्थापित कर दिया था और इसे व्यापक स्वीकृति भी मिल चुकी थी।

आयोबा विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक शेफर ने भूगोल के प्रादेशिक विज्ञान और उसके विधि तंत्र पर असंतोष व्यक्त करते हुए अपने पेपर 'भूगोल में अपवाद' में इसका विरोध किया। जिसके फलस्वरूप भूगोल की विषयवस्तु में परिवर्तन आने शुरू हुए और मात्रात्मक क्रांति का आरम्भ हुआ।

भूगोलवेत्ताओं ने इंडियोग्राफिक विज्ञान के स्थान पर भूगोल को नोमोथेटिक विज्ञान के रूप में स्थापित किया। इससे पहले परिवर्तन के बाद के लगभग 60 वर्षों में भौगोलिक चिंतन और विधि तंत्र में एक के बाद एक बहुत सारे परिवर्तन आए। इन परिवर्तनों का मुख्य कारण मात्रात्मक क्रांति के शीघ्र बाद ही जल्द ही इसका परित्याग करना और उससे उत्पन्न दिशाहीनता, अन्य सामाजिक विज्ञान में समान परिवर्तन और तात्कालिक परिवेश में सामाजिक विषय भी रहे।

1950 के बाद भूगोल में कुछ परिवर्तन आए। वे इस अनुक्रम में रहे–

1. मात्रात्मक क्रांति
2. आचारवाद व आचारपरक भूगोल
3. तंत्र विश्लेषण और मानव पारिस्थितिकी का पुनर्जीवन
4. मानववादी भूगोल
5. कल्याण और क्रांतिकारी भूगोल
6. उत्तर आधुनिक भूगोल।

ऑगस्ट कॉम्टे (August komte) का प्रत्यक्षवाद, मानव पारिस्थितिकी भूगोल का डार्विनवाद, मुख्य रूप से मात्रात्मक क्रांति का आधार बने।

भूगोल में मात्रात्मक क्रांति के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं–

1. भूगोल के मात्रात्मक स्वरूप में परिवर्तन लाकर उससे वैज्ञानिक विषय बनाना।
2. स्थानिक प्रति रूपों को तर्कपूर्ण, उद्देश्य अनुसार व अकाट्य विधियों द्वारा विवेचना करना।
3. साहित्यिक भाषा के स्थान पर गणितीय भाषा का प्रयोग करना जैसे किसी स्थान पर बस्तियों की संख्या बताने के लिए क्रिसटालर ने केंद्रीय स्थल सिद्धांत का प्रतिपादन किया।

4. स्थानों की स्थिति को यथार्थ रूप में सामान्य अनुमानों में व्यक्त करना।
5. परिकल्पना परीक्षण करके मॉडल, सिद्धांतों, नियमों का निर्माण करके किसी भी क्रिया का पूर्वानुमान लगाना।

6. विभिन्न आर्थिक क्रियाओं के लिए उपयुक्त दशाओं की पहचान करके, संसाधनों के अधिकतम उपयोग की क्षमता विकसित करना।
7. भूगोल में प्रयोग की जाने वाली विभिन्न विधियों को वैज्ञानिक बनाकर, भूगोल विषय को दार्शनिक व सैद्धांतिक बनाना।

मात्रात्मक क्रांति का इतिहास

सांख्यिकी विधि की शुरुआत 1950 के आरंभिक दशक में हुई। इसमें बहुत ही सरल परिकलनों का प्रयोग किया गया। उसके बाद द्विविचर परावर्तन विश्लेषण आरंभ हुआ। 1960 तक सम-रेखीय मॉडल नहीं बन सके। इसके पश्चात भूगोल रेखीय व आरेखीय मॉडलों तथा जटिल सांख्यिकीय तकनीकों द्वारा भौगोलिक समस्याओं का विश्लेषण किया जाने लगा।

सामाजिक भौतिकी में गणितीय मॉडल विश्लेषण को विशेष स्थान मिला जैसे गुरुत्व और घनत्व मॉडल। बाद में उत्क्रमण अतिवादीकरण की ओर ध्यान आकर्षित हुआ। प्रेरणा का दूसरा स्रोत नव चिरसम्मत अर्थशास्त्र रहा। भूगोल को प्रादेशिक विज्ञान की अवधारणा और स्थितिजन्य सिद्धांत द्वारा प्रभावित किया।

भूगोलवेत्ताओं ने अर्थशास्त्र व समाज विज्ञान से अनेक मॉडलों को लिया जैसे वॉन थ्युनेन का 'गहन कृषि' मॉडल 1826, बेवर का 'औद्योगिक अवस्थिति सिद्धांत' 1909, परंतु क्रिस्टॉलर (1893-1969) पहला भूगोलवेत्ता था जिसने दक्षिणी जर्मनी के केंद्रीय स्थानों के अध्ययन द्वारा 'स्थिति सिद्धांत' को भूगोल में लोकप्रिय बनाया। उसी आधार पर अमेरिका के भूगोलवेत्ताओं ने नगरों के सैद्धांतिक मॉडलों की रचना की। 1958 मे एकरमैन ने अपने शिष्यों को सांस्कृतिक प्रक्रिया व व्यवस्थित भूगोल में मात्रात्मक विधियों के प्रयोग के लिए उत्साहित किया। वेबर (Weaver, 1954) ने मिडिल वेस्ट, USA में मानक विचलन विधि से फसल संयोजन प्रदेश निर्धारित किए और कृषि भूगोल में मात्रात्मक क्रांति आई। हगरस्ट्रैंड (Hagerstrand) विकास का विसरण (diffusion of innovation) की अवधारणा को गणितीय सम्भावना सिद्धांत पर आधारित किया।

आनुभविक अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकाला गया कि मनुष्य का दो नगरीय केंद्रों में संचरण उनकी जनसंख्या के अनुपात में होता है। उनके बीच की दूरी का वर्ग आनुपातिक होता है। स्टीवर्ट ने संकेत दिया कि आनुभविक सामान्यीकरण और न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम के बीच समान आकार तथा संरचनात्मक संबंध है। इसके बाद इस अवधारणा को गुरुत्व प्रतिमान के नाम से जाना जाने लगा। भूगोल की अन्य शाखाओं जैसे जनसंख्या, आर्थिक, प्रादेशिक सांस्कृतिक, राजनैतिक भूगोल में कई मात्रात्मक विधियां धीरे-धीरे स्थान प्राप्त करती गईं।

ब्रिटेन के रिचर्ड चार्ले और पीटर हैगेट ने नई पीढ़ियों के भूगोलवेत्ताओं को इस क्रांति से जोड़कर भूगोल में विभिन्न प्रतिरूपों का गहन अध्ययन प्रस्तुत किया।

टिप्पणी

मात्रात्मक क्रांति की प्रगति

शेफर-हार्टशोर्न वाद-विवाद के तुरंत बाद एकरमैन द्वारा भौगोलिक अध्ययन में क्रमबद्ध भूगोल, सांस्कृतिक भूगोल और मात्रात्मक विधियों के प्रोत्साहन से भूगोल में सिद्धांत निर्माण और मॉडल निर्माण को जल्दी ही प्रसिद्धि मिल गई। लेकिन इससे पूर्व भी भूगोल में अवस्थिति सिद्धांत, नगरों की सरंचना और केंद्र स्थल पर मॉडल बनाये जा चुके थे।

मात्रात्मक क्रांति के स्कूल

मात्रात्मक क्रांति की आरंभिक शुरुआत के बाद अमेरिका के चार स्कूल वाशिंगटन विश्वविद्यालय स्कूल, विस्कांसिन विश्वविद्यालय स्कूल, आयोबा विश्वविद्यालय, सामाजिक भौतिकी स्कूल और स्वीडिश स्कूल ने सैद्धांतिक भूगोल और मात्रात्मक विधि का विकास किया। प्राकृतिक विज्ञान में शिक्षित भूगोलवेत्ताओं व उन विश्वविद्यालय के भूगोलवेत्ताओं द्वारा इसका विकास हुआ जहां सैद्धांतिक अर्थशास्त्र पढ़ाया जाता था।

वाशिंगटन विश्वविद्यालय स्कूल

सिएटल स्कूल में विलियम एल. गिरिजन के नेतृत्व में प्रमुख नगरीय भूगोल, आर्थिक भूगोल के क्षेत्र में मात्रात्मक क्रांति का विकास हुआ। उन्होंने मात्रात्मक विधियों का प्रयोग करके अवस्थिति सिद्धांत बनाए।

1980 में उलमान ने स्थानिक अन्योन्यक्रिया पर मॉडल बनाया। 1960 के दशक में इस विश्वविद्यालय के भूगोल विभाग के विद्यार्थी भूगोल विषय में मात्रात्मक विधि के प्रयोग के सूत्रधार बने। इनमें जे. एल. बेरी. विलियम बुंगे और रिचर्ड मॉरिल जैसे प्रमुख भूगोलवेत्ता थे।

आयोबा विश्वविद्यालय स्कूल में शेफर ने मात्रात्मक क्रांति पर बल दिया लेकिन मात्रात्मक विधियों के विकास का श्रेय हैरोल्ड मैककार्टी को जाता है।

विस्कांसिन विश्वविद्यालय

मेडिसिन स्कूल में जॉन वेबर ने सबसे पहले मात्रात्मक विधियों का प्रयोग फसल संयोजन प्रदेशों की पहचान करने के लिए 1943 में किया। यह प्रयोग उन्होंने अपनी पी एच डी के शोध प्रबंध में किया। बाद में एस.एच. रॉबिंसन और उसी विश्वविद्यालय के मौसम विभाग के ब्रायसन ने मानचित्र कला में सांख्यिकीय विधियों के प्रयोग से महत्वपूर्ण कार्य किये।

सामाजिक भौतिकी स्कूल

इस स्कूल मे वे भूगोलवेत्ता आते हैं जिन्होंने भौतिकी के सिद्धांतों का प्रयोग मानव भूगोल में विभिन्न घटनाओं की व्याख्या करने के लिए किया। इस स्कूल के प्रमुख वैज्ञानिक थे विलियम वॉन्टर्ज और जॉन क्यू. स्टीवर्ट। आनुभविक पर्यवेक्षणों के आधार पर सामाजिक वैज्ञानिकों को पता था कि दो नगरों के बीच लोगों का आना-जाना उस नगर की जनसंख्या के आकार के गुणनफल और उनके बीच की दूरी के वर्ग के विपरीत अनुपात में पाया जाता है। इस अवधारणा को गुरुत्व मॉडल का नाम दिया गया। स्टीवर्ट और वॉन्टर्ज ने भौतिकी के नियमों का प्रयोग करके जनसंख्या विभव पर बहुत से अध्ययन किये।

स्वीडिश स्कूल

इस स्कूल के अग्रणीय भूगोलवेत्ता एडगर कांट थे, जिन्होंने क्रिस्टालर और ऑगस्त लॉश के सिद्धांतों का प्रयोग एस्टोनिया में किया। उनके शोध सहायक हैगेरस्ट्रैंड थे जो जनसंख्या प्रव्रजन की प्रक्रिया पर अनुसंधान करके एक प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता बन गए। उन्होंने नवाचार विसरण प्रक्रम पर ध्यान केंद्रित करते हुए नए क्षेत्रों में प्रसार की प्रक्रिया को अपना अध्ययन केंद्र बन लिया और नवाचार विसरण प्रक्रम पर 1953 में शोध प्रस्तुत किया।

स्वीडन में हैगेरस्ट्रैंड के निर्देशन में सैद्धांतिक गणितीय भूगोल का विकास हुआ। रिचर्ड मॉरिल का शोध प्रव्रजन और नगरीय अधिवासों की अभिवृद्धि तथा बुंगे की ख्याति प्राप्त पुस्तक 'थियोरिटिकल ज्योग्राफी' प्रकाशित हुई।

मात्रात्मक विधियों के लाभ

भूगोल में मात्रात्मक विधियों को प्रयोग करने की कई वजह हैं, जो निम्न प्रकार से है–

1. ये विधियां आनुभविक प्रेषणों पर आधारित होने के कारण सत्यापित की जा सकती है। इनकी दुबारा जांच की जा सकती है।
2. भूगोल विषय में पूर्वानुमान की आवश्यकता होती है, इसके लिए आंकड़ों को अन्तर्वेशित और अनुरूपण करना पड़ता है। इसके लिए ये विधियां अति कारगर साबित होती हैं।
3. सांख्यिकी विधियां, आंकड़ों के समूह को छोटा और व्यवस्थित करती हैं।
4. ये विवरणों और विश्लेषण को विश्वसनीय बनाती हैं।
5. इन विधियों से भूगोल में वस्तुनिष्ठ मापन संभव हो पाया।
6. इन विधियों के द्वारा कई भूमि उपयोग सिद्धांतों की उत्पत्ति हो पाई।
7. इनके द्वारा बने सिद्धांत और मॉडल पूर्वाग्रह और पक्षपात रहित होते हैं।
8. इन विधियों से सिद्धांत निरूपण और नियम बनाए जा सकते हैं।
9. ये तकनीक धर्म, रूढ़ि, किसी भी प्रकार की दुरूहता से निर्लिप्त हैं।
10. इनके द्वारा सैद्धांतिक कथनों को स्थापित किया जा सकता है।

मात्रात्मक विधियों के दोष

भौगोलिक अध्ययन में मात्रात्मक विधियों की आलोचना निम्न कारणों से की जाती है–

1. मात्रात्मक विधियां यथार्थवाद पर आधारित होने की वजह से अध्यात्म और भी धर्म को पूरी तरह से नकारती है। ये किसी भी स्थान को ज्यामिति से जोड़ कर अध्ययन करती हैं किंतु किसी भी स्थान की रूपरेखा केवल ज्यामिति से नहीं समझी जा सकती है क्योंकि कोई भी स्थान मनुष्य और पर्यावरण के आपसी तालमेल पर आधारित होता है।
2. गणितीय भाषा से मनुष्य और वातावरण के तालमेल को नहीं समझा जा सकता है।
3. मात्रात्मक विधियां द्वारा प्रदेश का विश्लेषण करने के लिए अवस्थिति पर जोर दिया जाता है जो भेदभाव को जन्म देती हैं। क्योंकि ये सिद्धांत प्रदेश में कुछ साधनसम्पन क्षेत्रों को पहचान कर वहां उद्योग या अन्य आर्थिक क्रियाओं को प्रोत्साहित करते

टिप्पणी

हैं तथा कुछ साधनविहीन क्षेत्र आर्थिक प्रगति में पिछड़ जाते है और दोनों प्रकार के क्षेत्रों में आर्थिक खाई बढ़ जाती है।

4. सिद्धांतों और मॉडल निर्माण में मनुष्य की इच्छा, धार्मिक विश्वास, आस्था, रीतिरिवाज, भावनाओं, अभिवृत्ति, आशा-निराशा, जीवन मूल्यों, संस्कारों इत्यादि का कोई महत्व नहीं है जबकि मनुष्य और वातावरण इससे पूरी तरह से प्रभावित होता है। ये सिद्धांत केवल किसी स्थिति की एक आधी अधूरी तस्वीर प्रस्तुत करता है। वस्तुनिष्ठ अध्ययन मनुष्य और वातावरण की सही तस्वीर प्रस्तुत नहीं कर पाता है।
5. इन तकनीकों के आने से संसार में स्वचलित मशीनों का प्रयोग बढ़ा और बेरोजगारी भी इससे बढ़ी।
6. मात्रात्मक विधियों का केवल लाभ अर्जित करना ही उद्देश्य बन गया था जबकि मनुष्य लाभ के साथ-साथ अपनी इच्छाओं और भावनाओं की संतुष्टि भी चाहता है। वह केवल अधिकतम लाभ की सोच से ही प्रेरित नहीं होता बल्कि लोक कल्याण की भावना से भी कार्य करता है।
7. सामात्रात्मक तकनीकों की सहायता से निर्मित मॉडलों ने मनुष्य की बुद्धि को कुंद कर दिया और केवल निष्क्रिय एजेंट बनाकर रख दिया।
8. मनुष्य का ध्यान केवल मॉडल निर्माण तक सीमित रहने के कारण उसका ज्ञान भी सीमित होकर रह गया और वह केवल इन मात्रात्मक विधियों के अधीन होकर रह गया।
9. मात्रात्मक विधियों के सही परिणाम के लिए गणित का उच्च स्तरीय ज्ञान होना आवश्यक है और उसके लिए आंकड़े विश्वसनीय होने चाहिए। ऐसी सुविधा विकासशील देशों में उपलब्ध नहीं होती है। इसलिए भौगोलिक यथार्थता की आधी अधूरी प्रस्तुति होती है।
10. किसी प्रदेश को समझने के लिए गुणात्मक कथनों का महत्व भी कम नहीं होता। केवल मात्रात्मक विधियों में अनावश्यक प्रयोगों की जरूरत नहीं होनी चाहिए।
11. जो मात्रात्मक विधियां सही तर्को पर आधारित नहीं होतीं वे पूर्वानुमान के लिए उपयुक्त नहीं होतीं और इनसे अति सामान्यानुमानों का सदैव भय बना रहता है।
12. सांख्यिकीय विधियों पर आधारित मॉडल दृश्य जगत की कुछ विशेषताओं को अति महत्वपूर्ण सिद्ध कर देता है और कुछ विशेषताओं को गौण कर देता है जिससे सभी तस्वीर प्रस्तुत नहीं हो पाती।
13. मानव भूगोल में इन मात्रात्मक तकनीकों द्वारा विश्वव्यापी नियमों का निर्माण संभव नहीं हो पाता। प्रत्येक प्रदेश के लिए मानव समुदायों के व्यवहार को रचे गए जो सांख्यिकी मॉडलों के आधार पर व्यक्त नहीं कर सकते हैं क्योंकि ये विज्ञान के नियमों से चालित नहीं हैं।

मात्रात्मक तकनीकों में अनेक खूबियां और कमजोरी होते हुए भी स्थान विषयक विज्ञान का अमेरिका में उद्घाटन हुआ। 1960 के अंत तक अंग्रेजी भाषी सभी शोध पत्रिकाओं में विश्व के सभी भागों में लेख प्रकाशित हुए जिनमें इन विधियों का जमकर

प्रयोग किया गया। इनसे प्रेरित होकर सिद्धांत बने, मॉडलों की उत्पति हुई। इसमें भी कोई संदेह नहीं कि सिद्धांतों द्वारा वर्तमान जगत के संबंधों को आधा-अधूरा प्रकट किया गया। मात्रात्मक विधियों को व्यवहारवादी और मानवीयवाद की प्रक्रिया बताकर आलोचना की जाने लगी और स्थिति यह बनी कि कुछ दशाओं में विशेष रूप से सामाजिक विज्ञान में

गुणात्मक दृष्टिकोण आवश्यक बन गया। और भूगोल में दोनों विधियों का मिला-जुला स्वरूप प्रयोग किया जाने लगा।

अपनी प्रगति जांचिए

3. 'नेचर ऑफ ज्योग्राफी' पुस्तक के लेखक कौन हैं?

(क) शेफर	(ख) रिचर्ड हाटर्शॉर्न
(ग) डार्विन	(घ) आगस्ट कॉम्टे

4. भूगोल में मात्रात्मक क्रांति में योगदान करने वाले भूगोलवेत्ता हैं-

(क) वॉन थुनेन	(ख) वेबर
(ग) क्रिस्टालर	(घ) उपर्युक्त सभी।

4.4 प्रत्यक्षवाद और व्यवहारवाद

बीसवीं शताब्दी में भौगोलिक चिंतन व विधि तंत्र में प्रमुख मोड़ आया। इससे पूर्व के लगभग 2300 वर्षों के भूगोल में पृथ्वी की जानकारी जुटाई गई, उनका वर्णन किया गया। इस शताब्दी में आधुनिक भूगोल की नींव रखी गई। भौतिक भूगोल का विकास हुआ, निश्चयवाद और संभववाद के विचारों के रूप में मानव पर्यावरण संबंधों का अध्ययन हुआ, भूगोल का व्यावसायिक रूप विकसित हुआ। भूगोल का प्रसार विश्व के बहुत सारे देशों में हुआ। इस समय तक रिचर्ड हार्टशोर्न (1939) द्वारा भूगोल को एक व्यक्तिगत प्रदेशों के अध्ययन करने के दृष्टिकोण से विज्ञान के रूप में स्थापित किया जा चुका था। आयोबा विश्वविद्यालय के प्रोफेसर शेफर ने भूगोल के प्रादेशिक विज्ञान और इसके विधि तंत्र पर सवाल उठाते हुए। अपने पेपर 'भूगोल में अपवादवाद' में प्रकाशित किया जिसके फलस्वरूप भूगोल में अचानक परिवर्तन होकर मात्रात्मक क्रांति का प्रादुर्भाव हुआ और नोमोथेटिक या सामान्य सिद्धांत निर्माण करने वाले विज्ञान के रूप में स्थापित किया गया। इसके बाद 60 सालों की छोटी सी समय अवधि मे अनेक परिवर्तन आये। जैसे मात्रात्मक क्रांति से शीघ्र मोह भंग, इसके परित्याग के बाद दिशाहीनता और तात्कालिक सामाजिक सरोकार वाले विषय भूगोल में शामिल होना।

1950 के बाद भूगोल में चिंतन और विधितंत्र में परिवर्तन इस क्रम से आये– 1. सामात्रात्मक क्रांति 2. आचारवाद और आचारपरक भूगोल 3. तंत्र विश्लेषण 4. मानववादी भूगोल 5.कल्याणकारी और क्रान्तिकारी भूगोल 6. उत्तराधुनिक भूगोल।

प्रत्यक्षवाद

[redacted]

टिप्पणी

प्रत्यक्षवाद या सकारात्मक दर्शन का विश्वास है कि विज्ञान का संबंध केवल अनुभवी तथ्यों से होता है। अनुभवी तत्व वे होते हैं जिनको मानव ज्ञानेंद्रियों से देखा और परखा जा सकता है क्योंकि ये मूर्त होते हैं। भावात्मक नहीं होते हैं। इसलिए इसे अनुभववाद भी कहते हैं। प्रत्यक्षवाद विज्ञान का संबंध मानक प्रश्नों से नहीं होता अर्थात वैज्ञानिक तथ्य क्या है इसकी गवेषणा करता है ना कि क्या होना चाहिए। प्रत्यक्षवाद एक प्रकार का दार्शनिक आंदोलन है और यह धर्म और परंपराओं के विरुद्ध सोच रखता है। इनका आधार और विधि वैज्ञानिक भी वैज्ञानिक है। यह तथ्यों और मूल्यों में भेद कर सकने वाली वैज्ञानिक पद्धति है आगस्ट कॉम्टे ने अध्यात्म को जांच के अन्वेषण की निरर्थक शाखा बताया। वह मानवता के विकास के लिए सामाजिकता को वैज्ञानिक आधार प्रदान करने का हिमायती था। तथ्यों के परीक्षण द्वारा अनुभव करके, उसमें संबंधों पर आधारित ज्ञान प्रत्यक्षवाद का मुख्य उद्देश्य है। इसमें अनुभवी प्रश्नों का हल यथार्थ के दृष्टिकोण पर आधारित है। तथ्य स्वयंसाधन बनते हैं यानी तथ्य अपने आप बोलते हैं। विज्ञान का सम्बन्ध भी वस्तुपरक तत्वों से है। व्यक्तिपरकता का इसमें कोई स्थान नहीं है। यथार्थ वही होता है जो प्रत्यक्ष में दिखता है। हमारी इंद्रियां जो अनुभव कर सकती हैं, वहीं ज्ञान है और वही विज्ञान है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण वस्तुपरक, अपूर्ण से पूर्ण बना और तटस्थ होता है। ये यथार्थ के बारे में सामान्य अनुभवों, सामान्य वैज्ञानिक भाषा, प्रयोगों की पुनरावृत्ति को सुनिश्चित बनाने की विधि में विश्वास करते हैं।

प्रत्यक्षवाद दर्शन एक प्रकार से आदर्शवाद का विरोध करता है क्योंकि आदर्शवाद केवल मानसिक और बुद्धिपरक होता है। यह नियामक और नीतिपरक भी नहीं है। यह मानव मूल्यों, विश्वास, अभिवृत्ति, आस्था, पक्षपात, पूर्वाग्रह, रीति रिवाज, रुचि, परंपरा, लालित्य और सौंदर्यपरक आदि मूल्यों से जुड़े प्रश्नों व समस्याओं का प्रत्यक्षवाद अध्ययन नहीं करता क्योंकि ये सभी निर्णय व्यक्तिवादी सोच से ग्रस्त होते हैं। ये नैतिक मापदंड देशकाल, समाज, कालखंडों के साथ बदलते रहते हैं। इनके बारे में निर्णय वैज्ञानिक आधारों पर संभव नहीं है। प्रत्यक्षवाद का दर्शन वस्तुपरकता, निष्पक्षता, तटस्थता पर आधारित विज्ञान है। प्रत्यक्षवाद में व्याख्या इन आधारों पर की जाती है–

1. अनुभव के आधारों पर।
2. यह एकीकृत वैज्ञानिक विधि है।
3. यह अनुभव के आधार पर बने वैज्ञानिक नियमों व सिद्धांतों से जुड़ा हुआ है।
4. यह नियामक, नीतिसंगत, नैतिकता आदि से स्वतंत्र अध्ययन है।
5. यह वैज्ञानिक व्यवस्था है जिसको बार-बार परीक्षणों के द्वारा स्थापित किया गया।

ऑगस्त कॉम्टे ने इस पद्धति को स्थापित किया और इसका उदय फ्रांस की क्रांति के उपरांत माना जाता है। इसका प्रादुर्भाव निषेधवादी दर्शन की प्रतिक्रिया स्वरूप माना जाता है। निषेधवादी दर्शन रचनात्मकता और प्रयोगात्मकता से रहित था। यह भावनाप्रधान था जो अपनी कोरी कल्पनाओं के विकल्पों द्वारा वर्तमान समस्याओं के हल खोजने में लगा हुआ था। निषेधवाद के विरुद्ध इसका प्रादुर्भाव निषेधवादी दर्शन की प्रतिक्रिया स्वरूप माना जाता है प्रत्यक्षवाद एक प्रकार से खंडन- मंडन, वाद-विवाद से परिपूर्ण सिद्ध हुआ। प्रत्यक्षवाद धार्मिक प्रपंचों, निषिद्ध कर्मों के विरुद्ध था।

वैज्ञानिक समाजशास्त्र के जनक ऑगस्त कॉम्टे (1857) ने प्रत्यक्षवाद के दर्शन को अपनी चार खंडों की पुस्तक 'पॉजिटिव फिलॉसफी' (1830-1842) में प्रस्तुत किया। जिसमें उन्होंने प्रतिपादित किया कि प्राकृतिक तत्वों की तरह ही सामाजिक तत्वों को भी सामान्य नियमों द्वारा समझा जा सकता है। उन्होंने बताया कि विज्ञानों के विकास क्रम में प्रारंभ से अंत तक धार्मिक तत्वमीमांसा (metaphysical अर्थात मानव की इंद्रियों की समझ के बाहर के तत्व) अनुभव अवस्थाएं होती हैं। उन्होंने प्रतिपादित किया कि प्राकृतिक तत्वों की तरह ही सामाजिक तत्वों को भी सामान्य नियमों द्वारा समझा जा सकता है।

वियना सर्कल के वैज्ञानिक जो तार्किक प्रत्यक्षवाद ही कहलाते थे, उन्होंने 1920 से 1925 के मध्य प्रत्यक्षवाद को चरम सीमा तक पहुंचाया। प्रोफेसर एडोल्फ कार्नप इसके अग्रणीय वैज्ञानिक थे, इन्होंने विज्ञान के लिए कुछ नियम स्थापित किए जो निम्नलिखित है:–

1. ज्ञान जीवन मूल्य स्वतंत्र होना चाहिए।
2. परिकल्पना तब कहलाती है जब उसका परीक्षण ना हुआ हो।
   सिद्धांत की कुछ साक्ष्य प्रमाणित परिकल्पनाएं होती हैं।
3. ज्ञान प्राप्ति की एक ही विधि परिकल्पनात्मक-निगमनात्मक होनी चाहिए।
4. तथ्य आनुभविक साक्ष्यों से समर्थित होते हैं।
5. सिद्धांत विश्व्यापी होने चाहिए।
6. ज्ञान तत्वमीमांसा से उन्मुक्त होना चाहिए।
7. परिकल्पनाओं का परीक्षण होना जरूरी है।

प्रत्यक्षवादी सोच तानाशाही शासकों में विकसित सोच के विरुद्ध विकसित हुई। वियना सर्कल तर्कसंगत प्रत्यक्षवादियों का समूह था। ये वैज्ञानिक उन सभी विचारों का विरोध करते थे जिनका आनुभविक रूप से परीक्षण नहीं किया जा सकता था, जैसे कि अध्यात्म आदि। नाजीवादी सोच को प्रत्यक्षवादी तर्कशून्य, पक्षपातपूर्ण और धार्मिक अंधता से परिपूर्ण मानते थे।

प्रत्यक्षवाद की आलोचना

प्रत्यक्षवादियों द्वारा मानव भूगोल में किए गए कार्यों की मानवतावादियों और यथार्थवादियों ने आलोचना की। उनके अनुसार ये कार्य ऐसे नियमों की खोज थी जो साधन सामग्री प्रक्रिया से जुड़े हुए नहीं थे। मानवतावादियों ने भी प्रत्यक्षवादी सोच की आलोचना की क्योंकि उनके रिसर्च कार्यों में मूल्यों और आदर्शों का कोई ध्यान नहीं रखा गया था। मानव जीवन इसके बिना अधूरा होता है। मार्क्सवादियों, वैज्ञानिक पर्यवेक्षकों, मानवतावादी वैज्ञानिकों के अनुसार मूल्यविहीन, गणितीय नियम संभव नहीं है। प्रत्यक्षवादियों का मानना है कि प्रत्येक समस्या का तकनीकी हल संभव है और मूल्यविहीन शोध ही वैज्ञानिक है। परंतु व्यवहारवादियों के अनुसार शोध कार्य में अनेक स्थानों पर व्यक्तिनिष्ठा समाविष्ट हो जाती है। शोध विषयों के चयन से लेकर दृश्य वस्तुओं के वितरण, प्रारूपों की पहचान कर निष्कर्ष निर्धारण प्रक्रिया में कुछ न कुछ अंश में व्यक्तिनिष्ठा प्रवेश कर जाती है जैसे ही परिणाम ज्ञात हो जाते हैं मौजूदा वितरण के विवरण निर्णयकर्ताओं की सोच को

प्रभावित करना आरंभ कर देते हैं कि वितरण कैसा होना चाहिए अर्थात शोधकर्ता उदासीन, तटस्थ, विमुख नहीं रह पाता है।

विज्ञान में एकता भी आलोचना का विषय है। सामाजिक विज्ञान में एकता का विकास हो ही नहीं सकता क्योंकि प्रत्येक विषय की अपनी-अपनी सोच और अधिगम है जिनके द्वारा यह वस्तु, जगत का विश्लेषण करते है। और यह यथार्थता को अपनी-अपनी पद्धतियों, विधियों या अधिगमों द्वारा व्यक्त करते हैं।

प्रत्यक्षवादियों की एक आलोचना प्राकृतिक और सामाजिक विज्ञानों की प्रकृति को एक जैसा मानने पर भी होती है। दोनों अलग-अलग प्रकृति की वैज्ञानिक शाखाएं हैं। इनकी प्रायोगिक प्रक्रियाएं भी भिन्न होती हैं। सामाजिक विज्ञानों की विषयवस्तु का केंद्र मानव है, जिसकी अपनी बुद्धि, कौशल और सोच है। मानव व्यवहार अन्य जीवों के व्यवहार से अलग है। उसकी अपनी धारणाएं, अभिवृत्ति, आस्था, रुचि और अपनी कल्पनाएं हैं और मानव व्यवहार पर आधारित मानव भूगोल व अन्य सामाजिक विज्ञानों के नियम निरूपण में व्यक्तिनिष्ठा का घटक पाना स्वाभविक है।

आचारपरक या व्यवहारवादी भूगोल

प्रत्यक्षवादियों द्वारा विकसित सिद्धांत, मॉडल और व्याख्या में सांख्यिकीय तकनीकों के प्रयोग के प्रति लोगों में असंतोष उत्पन्न होने लग गया जिसे आर्थिक तर्कसंगतता पर आधारित यथार्थ पर संदेह होने लगा। आचारपरक या व्यवहारवादी भूगोल का जन्म मात्रात्मक क्रांति की प्रतिक्रिया से हुआ। यह प्रतिक्रिया दो प्रकार की थी- प्रथम कुछ भूगोलवेत्ताओं ने इसकी आलोचना की और इसके स्थान पर भूगोल में नई शाखाओं के विकल्प खोजे। द्वितीय प्रकार के भूगोलवेत्ताओं में कुछ ऐसे थे जिन्होंने आचारपरक भूगोल को नई शाखा में विकसित किया। 1973 में डेविड हार्वे ने अपनी पुस्तक ''एक्सप्लेनेशन इन जियोग्राफी'' में कहा कि मात्रात्मक क्रांति अपना मार्ग तय कर चुकी है। हमारा यह पैराडाइम भौगोलिक समस्याओं का ठीक प्रकार से समाधान नहीं कर पा रहा है।

मात्रात्मक क्रांति के दौरान उत्पन्न हुए सिद्धांत और मॉडल वास्तविक दिशाओं से मेल नहीं खाते थे। उदाहरण के लिए अवस्थिति सिद्धांत जिसका आधार 'आर्थिक मानव' है। आर्थिक मानव उस मानव को कहते हैं जिनका निर्णय केवल अधिकतम लाभ कमाना होता है तथा ऐसे निर्णय लेने में सक्षम होता है जिससे अधिकतम लाभ अर्जित किया जा सके और वह सभी लागत कारकों की पूर्ण जानकारी रखता है। उनके द्वारा भविष्य में उच्चतम लाभ की सही गणना और भविष्यवाणी भी हो सकती है। भूगोलवेत्ताओं में अनुभूति हुई कि ऐसा मानव वास्तव में होता ही नहीं है। अवस्थिति सिद्धांत में भूगोलवेत्ताओं ने बताया कि इस सिद्धांत की आधारभूत मान्यता 'आर्थिक मानव' है जिसका वास्तविकता में अस्तित्व होता ही नहीं है।

इसलिए इस मान्यता पर आधारित सिद्धांत भी वास्तविकता से मेल नहीं खाएंगे क्योंकि वास्तविक मानव जिसके निर्णय लेने से मानव भूगोल की आकृतियां और प्रक्रियाएं अस्तित्व में आती हैं उनकी व्याख्या मानव भूगोल का कार्य है। आर्थिक मानव होता ही नहीं है इसके अतिरिक्त यदि मानव तार्किक निर्णय भी ले तो इस तार्किक निर्णय का आधार उसकी अपनी बुद्धि से समझे गए पर्यावरण से प्रभावित होता है

टिप्पणी

यह बोधगत पर्यावरण वास्तविक पर्यावरण से भिन्न होता है। बोध (perception) भौतिक वस्तु या दशा की व्यक्तिगत मानसिक तस्वीर होती है। एक ही वस्तु भिन्न लोगों के लिए भिन्न होती है एक समान नहीं होती है। उदाहरण के लिए एक खिलाड़ी मैदान को खेल की दृष्टि से और एक प्रकृति प्रिय उसे प्रकृति की दृष्टि से देखेगा।

यदि मानव एक आर्थिक प्राणी है तो उसके सभी निर्णय एवं व्यवहार लाभ के लिए होने चाहिए। अगर ऐसा होता तो बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में बाढ़ के खतरे के बावजूद इन स्थानों पर लोग अपना अधिवास बनाकर नहीं रहते। मात्रात्मक सिद्धांतों की बात करें तो इन लोगों को बाढ़ से प्रभावित क्षेत्रों में अधिवास बनाने नहीं चाहिए। समाज की स्थानिक संरचना एवं तंत्र की स्पष्ट व्याख्या करने के लिए व्यक्तिनिष्ठ बोध और व्यक्तिगत निर्णयों को शामिल किया जाने लगा। वोलपर्ट ने 1964 में अपने शोध लेख में स्वीडन के किसानों के विषय में 'सर्वोत्तम कृषि' के स्थान पर साइमन की शब्दावली 'संतोषी कृषि' का इस्तेमाल किया।

व्यवहारवादी अधिगम आगमनात्मक प्रक्रिया (inductive process) पर आधारित है। यह एक मनोवैज्ञानिक सोच है जिसके तहत मनुष्य अपने वातावरण के साथ अंत:क्रिया करता है। मनुष्य अपने वातावरण को प्रभावित करता है और अपने वातावरण से खुद भी प्रभावित होता है और अंत:क्रिया के बाद कुछ प्रतिमान, कुछ चित्र उसके दिमाग में बनते हैं। मनुष्य के निर्णयों और अनुक्रियाओं पर उसके स्थानिक वातावरण के अवबोध का पूरा प्रभाव रहता है। भूगोल में व्यावहारिक अधिगम का आगमन 1960 में आरंभ हुआ। तर्कों से बोझिल बने अर्थ प्रधान व्यक्ति के विरुद्ध जन्मी सोच से इसका प्रादुर्भाव हुआ। इसके अनुसार समान प्रकृति और धरातल पर आधारित नियामक मॉडलों द्वारा विश्व के दर्शन जगत की वास्तविकता का ज्ञान संभव नहीं है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, उसकी अपनी सांस्कृतिक सोच है। उसके निर्णय सामाजिक दायरे में रहकर और उनसे प्रभावित होते हैं। स्थिर समान धरातल पर आधारित मॉडल और उनकी मात्रात्मक व्याख्या वास्तविक स्थिति को स्पष्ट नहीं कर सकती है।

उदारवादी अधिगम के मुख्य उद्देश्य

उदारवादी अधिगम के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं:–

1. मानवतावादी मॉडल और सिद्धांतों का विकास करना।
2. वस्तुनिष्ठ बोध द्वारा वातावरण और व्यक्ति द्वारा लिए गए निर्णय एवं प्रक्रिया को सुस्पष्ट करना।
3. बड़े नमूने के स्थान पर छोटे नमूनों को या एक व्यक्ति का चयन करके सिद्धांत बनाना।
4. व्यवहार व मानवीय निर्णयों पर सामाजिक सिद्धांतों और मनोवैज्ञानिक व्यक्तिनिष्ठा से स्थानिक यथार्थ को प्रकट करना।
5. मानवीय क्रियाओं और व्यवहार के लिए प्रक्रियात्मक व्याख्या पर ध्यान देना।
6. मानव व्यवहार को समझने के लिए प्राथमिक आंकड़ों पर आधारित अध्ययन पर जोर देना।

7. सिद्धांत बनाने और समस्या समाधान के लिए अंत:ज्ञान-विषयक (interdisciplinary) अधिगम का प्रयोग करने पर जोर देना।

उपर्युक्त उद्देश्यों की सार्थकता के तर्क हैं–

टिप्पणी

1. व्यक्तियों में वातावरणीय प्रतिमाएं उनके ज्ञान, बोध से जन्मी हैं।
2. शोधकर्ता ऐसी प्रतिमाओं की परिशुद्धता के साथ पहचान कर सकते हैं।
3. वातावरणीय प्रतिमाओं और मानव के निर्णयों व वास्तविक व्यवहार क्रिया में निकट संबंध होता है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

आचारपरक भूगोल का लंबा इतिहास रहा है, प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से यह सोच कांट के समय से ही प्रयोग में आती रही है। 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक में फ्रेंच भूगोलवेत्ता रेक्लेस के अनुसार, ''मानव आपने वातावरण के प्रति कभी उदासीन नहीं रहा है।'' अमेरिकी भूगोलवेत्ता मानव को भू-आकृतियों का जनक मानते थे। मानव भूगोलवेत्ता अपने अध्ययन का केंद्र मानव को मानते थे। संभववादी दार्शनिक सोच का आधार भी उपयुक्त अवसर के चयन में मानव के बुद्धि कौशल और व्यवहार में निहित था। अमेरिकी ऐतिहासिक भूगोलविद कार्ल साउर का मत था कि प्राकृतिक पर्यावरण में बदलाव और सदुपयोग में मानव का महत्वपूर्ण योगदान है। राइट (Wright 1947) ने भी व्यवहारवादी अधिगम के अंतर्गत मानव और प्राकृतिक पर्यावरण की अंत:क्रिया पर जोर दिया। भौगोलिक ज्ञान के अध्ययन में यात्रा संबंधी साहित्य, अखबार, पत्रिकाएं, उपन्यास, चित्रकला, काव्य संग्रह आदि को शामिल मानते थे। उसके पश्चात तर्क में प्रथम व्यावहारिक प्रतिरूप प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने प्रतिरूप में स्पष्ट किया कि एक ही भौगोलिक पर्यावरण में निवास करने वाले भिन्न लोगों के सामाजिक-आर्थिक, सांस्कृतिक और नृजाति पृष्ठभूमि वाले लोगों के लिए एक समान सूचना का अर्थ भिन्न-भिन्न हो सकता है। साउर, राइट आदि भूगोलवेत्ताओं के अनुसार, ''व्यक्ति अपनी अभिरुचियों, आदतों, अभिवृत्तियों और अनुभवों के अनुसार व्यवहार करता है।

यह क्रियाएं कभी भी विवेकपूर्ण और तर्कसंगत नहीं होती हैं। वोलपर्ट (wolpert) का मत है कि जीव अपने मन व इच्छाओं का स्वामी होता है।

मनुष्य अपने वातावरण के प्रति बोध या अपने दिमाग में बनी प्रतिमाओं के आधार पर अपने वातावरण के साथ व्यवहार, अंत:क्रिया करता है। वह केवल लाभ और धन कमाने के लिए ही कार्य नहीं करता। बहुत सारे कार्यों में उनकी संतोषवृत्ति को देखा जा सकता है। समाज का प्रत्येक व्यक्ति स्थान, वातावरण, और संसाधन के विषय में उपलब्ध सूचनाओं के आधार पर भिन्न-भिन्न प्रकार की अनुक्रिया करता है। एक समान पृष्ठभूमि पर रहने वाले लोगों का नजरिया अलग-अलग होता है, जैसे कोई व्यक्ति अपने खेत में गन्ना उगाने में, कोई धान, कोई गेहूं, कोई सब्जी, कोई चारा, कोई मक्का, कोई फूल उत्पादन में अभिवृत्ति रखता है। इन सभी व्यक्तियों के निर्णय अपने मानस में बने मानचित्र (mental map) पर आधारित होते हैं।

चित्र : बोल्डिन (Bouldin, 1952) के अनुसार मानव-वातावरण संबधं का एक परम्परागत मॉडल)

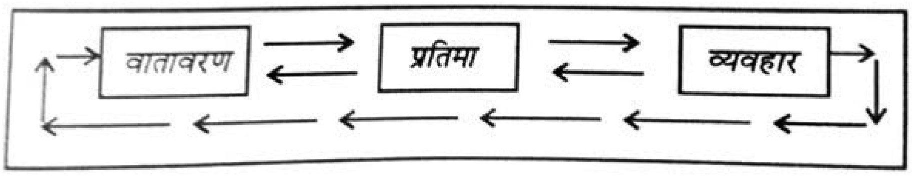

उपर्युक्त मॉडल में बोल्डिन ने दिखाया कि समयावधि के दौरान व्यक्ति के मानस पटल पर प्रतिमाओं का अंकन होता रहता है। यही उसके व्यवहार के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी होती है।

डाउन्स (Downs) के अनुसार वास्तविक जगत की सूचना व्यक्ति अपनी अभिवृति, रुचि, विवेक, बुद्धि, आस्था, संस्कृति, धार्मिक विश्वास, रीतिरिवाज आदि के द्वारा सूचनाओं को ग्रहण करता है और मानसपटल पर प्रतिमाओं का अंकन होता है जिसके आधार पर इन सूचनाओं से अपने लिए वातावरण में उपस्थित संशोधनों का चयन करता है और आपने बेहतर उद्देश्य की पूर्ति इन संसाधनों से करता है।

***चित्र** वातावरणीय अवबोध और व्यवहार Downs के अनुसार*

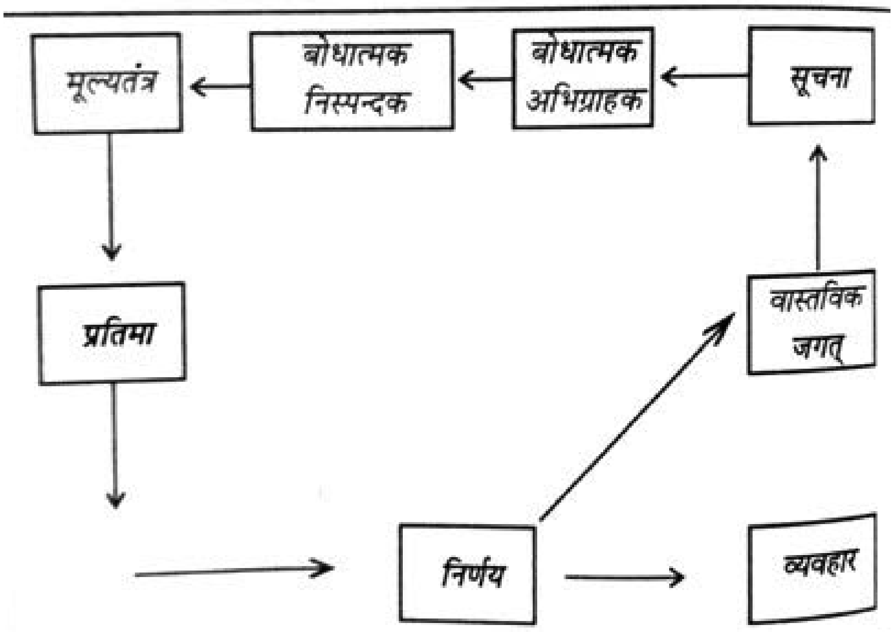

सोन्नेनफील्ड (Sonnenfield, 1972) के अनुसार वातावरण को निम्न प्रकार से समझना चाहिए–

1. भौगोलिक वातावरण (Geographical Environment)
2. कार्यात्मक वातावरण (Operational Environment)
3. प्रत्यक्ष-ज्ञानात्मक वातावरण (Perceptual Environment) जिसका मनुष्य को अवबोध रहता है।

4. व्यवहारवादी वातावरण (Behavioural Environment) जिसके अंतर्गत मनुष्य अनुक्रिया करता है।

पोर्टियस (Porteous, 1977) ने एक अन्य वर्गीकरण प्रस्तुत किया–

1. घटना (प्राकृतिक दृश्य जगत)
2. व्यक्तिगत वातावरण (आनुभविक मानस पटल पर अंकित प्रतिमा)
3. संदर्भीय वातावरण (धर्म, रीतिरिवाज, आस्था, अभिवृत्ति, रुचि से उत्पन्न व्यवहार)

व्यवहारवादी भूगोल मानव और वातावरण के प्रति वैज्ञानिक सोच वाला भूगोल होने के कारण लाभदायक सिद्ध हुआ। यह भौतिक और मानव भूगोल के मानकों पर खरा उतरा।

आचारपरक या व्यवहारवादी भूगोल के दोष

व्यवहारवादी भूगोल की आलोचना की मुख्य वजह इसकी आनुभविक-संश्लेषण विधि में आस्था न होना था। मनुष्य अपने अनुभवों के आधार पर नहीं बल्कि अपने विश्वासों, रीतिरिवाजों, आदतों, रूढ़ियों, संस्कृति आदि से प्रेरित होकर व्यवहार करता है। मनुष्य के व्यवहार का कोई ठोस या सैद्धांतिक आधार नहीं होता।

व्यवहारवादी भूगोल के परिणाम प्रयोगशाला में पशुओं पर प्रयोग करके प्राप्त सूचनाओं पर आधारित थे। ये प्रयोग मानवरूपी न होकर, पशुरूपी अधिक रहे। यानी ये पशुओं के व्यवहार पर अध्ययन करके मानव के व्यवहार को समझ कर व्याख्या करते हैं जबकि मनुष्य और पशु एक समान कैसे व्यवहार कर सकते हैं क्योंकि मानव बुद्धि कौशल रखता है।

इसका एक दोष यह भी है कि इस अधिगम में मानव वातावरण के बारे में स्वरचित प्रतिमाओं और यथार्थ जगत में अंतर नहीं करता है। मानव प्रतिमाओं से प्रेरित व्यवहार करता है, इस पर ज्यादा अध्ययन नहीं किये गए।

इस अधिगम में परिणाम लघु नमूनों (केवल एक व्यक्ति या व्यक्तियों का छोटा समूह) पर आधारित करके उसे पूरे विश्व या समाज का मान्यकरण किया गया और सिद्धांत का रूप दिया गया जबकि लघु समूह से प्राप्त परिणामों से किस प्रकार कोई भी पूर्वानुमान लगया जा सकता है।

इस अधिगम में बताया गया कि मानव की सोच एकांगी है (केवल मानसपटल पर अंकित चित्रों के आधार पर व्यवहार करना) और वह वातावरण के अन्य आयामों जैसे सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक पक्षों के प्रभावों को नजरअंदाज करता है। इससे व्यावहारिक स्थिति और यथार्थ स्थिति में गहरा अंतर पाया जाता है।

व्यवहारवादी भूगोल को और अधिक समर्थ और समृद्ध बनाने के लिए बहु विषयक-वैज्ञानिक स्वरूप दिया जाना चाहिए। गोलेज (Golledge) ने इसे स्वीकारते हुए कहा है कि, किसी निर्णय के निर्माण के लिए स्वेच्छाओं, मान्यताओं, ज्ञान, बुद्धि कौशल, अभिवृत्तियों, रूढ़ियों को अध्ययन में अन्तर्निहित करने पर बल दिया।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

5. प्रत्यक्षवाद में व्याख्या किन आधारों पर की जाती है?
   (क) अनुभव के आधार पर (ख) वैज्ञानिक आधार पर
   (ग) परीक्षणों के आधार पर (घ) उपर्युक्त सभी।
6. निम्न में से व्यवहारवादी भूगोल का दोष क्या है?
   (क) विश्वासों, रीतिरिवाजों, आदतों, रूढ़ियों, संस्कृति आदि से प्रेरित
   (ख) प्रयोगशाला में प्रयोग मानवरूपी न होकर पशुरूपी अधिक
   (ग) लघु नमूनों पर आधारित परिणाम का पूरे समाज व विश्व पर सामान्यीकरण
   (घ) उपर्युक्त सभी।

4.5 भूगोल में उत्तर आधुनिकवाद

1850 से पूर्व का संसार परंपरावादी था। इसका तात्पर्य है कि प्राचीन परंपराओं और जीवन पद्धति पर विश्वास करते हुए उनका अनुसरण किया जाता था। समाज के परम्परावादी संस्थान जैसे चर्च, मंदिर, मठ आदि पर समाज का अंधविश्वास था। उनके खिलाफ जा कर कोई कार्य नहीं किया जाता था। भगवान के अस्तित्व को नकारा नहीं जा सकता था। 1850 से आधुनिक समाज का प्रारंभ हुआ और परंपरागत समाज के आर्थिक विश्वासों के स्थान पर नवाचार और प्रौद्योगिकी परिवर्तन होने लगे। तार्किक, वैज्ञानिक, भौतिकवादी, प्रजातान्त्रिक दृष्टिकोण विकसित हुए तथा विज्ञान के प्रति विकास ने औद्योगीकरण को जन्म दिया। इस आधुनिकता ने 1960 से 1970 के दशक में तीव्र परिवर्तन करके उत्तर आधुनिकतावाद को जन्म दिया। उत्तर आधुनिकवाद के कुछ लक्षण हैं जैसे साम्यवाद का विघटन और कुल बिल्कुल नई प्रगति जैसे सूचना प्रौद्योगिकी- इंटरनेट, अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी- दूर संवेदन का प्रतिनिधित्व करती है। अन्य विज्ञानों व कलाओं की तरह भूगोल भी इन परिवर्तनों से अपने आप को विलग नहीं रख पाया।

उत्तरआधुनिकता

उत्तरआधुनिकता आधुनिक भूगोल में ऐतिहासिकता की प्रक्रिया है। ऐतिहासिकवाद व्यक्तियों और सामूहिक घटनाओं का कालक्रम के अनुसार वर्णन करता है और यह स्थानिकता को नजरअंदाज करता है। किसी भी घटना को केवल समय के संदर्भ में वर्णन से नहीं समझा जा सकता है।

सोजा (Soja, 1989) के अनुसार, 'ऐतिहासिकवाद सामाजिक जीवन पर ऐतिहासिक संदर्भ का अतिवादी दृष्टिकोण है। ये भौगोलिक अथवा आधुनिक स्थानिक सोच को सामाजिक सैद्धांतिक विशेषण के दौरान हाशिए पर धकेल देता है। काल के महत्व में स्थान गौण हो जाता है और सामाजिक जगत की परिवर्तनशीलता का भौगोलिक निर्वचन अस्पष्ट रह जाता है।'

उत्तरआधुनिकता का समर्थन करने वालों का मत है कि सामाजिक व ऐतिहासिक प्रक्रियाओं की रचना भिन्न-भिन्न स्थानों, प्रदेशों में भिन्न-भिन्न स्वरूपों में हुई है इसलिए ऐतिहासिक धारा सर्वत्र समान रूप से प्रभावित नहीं रहती।

भूगोल में उत्तर आधुनिकता का जोर सामाजिक भौगोलिक जांच पड़ताल के दौरान खुलेपन पर आधारित है। हर घटना की जांच काल, स्थान, राजनीतिक व्यवस्थाएं, राजनीतिक शक्तियां कलात्मक शक्तियां आदि के सन्दर्भ में की जानी चाहिए।

डियर (Dear, 1994) के अनुसार, ''उत्तर आधुनिकता सभी ओर है। वह साहित्य, कला डिजाइन, वास्तुकला, दर्शन, जन संचार साधनों, पोशाकों, तौर तरीकों, संगीत, दूरदर्शन सभी में व्याप्त है।''

ऐतिहासिक तथ्यों का समय के अनुसार वर्णन करना बहुत आसान है लेकिन उनको स्थान के संदर्भ में समझना और जानना बहुत कठिन है।

उत्तर आधुनिकवाद को समझने के लिए आधुनिकवाद को समझना जरूरी है।

आधुनिकवाद तथा आधुनिक भूगोल

आधुनिकवाद- परंपरागत समाज में दीर्घकालीन परिवर्तनों के स्वरूप आधुनिकीकरण का जन्म होता है जो मुख्यत: औद्योगिकीकरण के साथ या उसके बाद आरंभ होता है। कृषि प्रधान परंपरागत समाज का परिवर्तन बहुआयामी होता है। इसका प्रारंभ यूरोप में 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हुआ। ज्ञानोदय दर्शन के प्रवर्तकों व अनुयायिओं के द्वारा आधुनिकवाद का जन्म हुआ। आधुनिकवाद में परंपराओं के स्थान पर तर्कों और व्यक्तिवाद को महत्व दिया गया। आधुनिकीकरण में सामाजिक वर्गों के बीच अंतर लुप्त होना, गतिशीलता में वृद्धि, शिक्षा में उन्नति, सामाजिक सेवाओं में वृद्धि और शासकीय कार्यों को अधिक प्रभावी बनाया गया।

आधुनिकवाद आधुनिकीकरण का परिणाम होता है। आधुनिक समाज विशिष्ट क्रियाओं, प्रौद्योगिकी, मनोवृतियों, जीवन मूल्यों, सामाजिक तत्वों से युक्त समाज होता है। आधुनिकता की अभिव्यक्ति दृश्यकलाओं, वास्तुकलाओं, जनसंचार, संगीत आदि में दृष्टिगोचर होती है। यह तार्किकता, वैज्ञानिकता, भौतिकवाद और प्रजातंत्र प्रणाली से युक्त होता है। बढ़ती हुई प्रौद्योगिकी और विज्ञान की वजह से औद्योगिकीकरण होता है और औद्योगिकीकरण से जनसंख्या और नगरीकरण में वृद्धि होती है और प्राकृतिक पर्यावरण को वस्तुओं और वस्तु निर्माण का स्रोत मात्र समझा जाता है।

अंतरराष्ट्रीय व्यापार में वृद्धि, पूंजीवाद का प्रसार, आर्थिक शक्ति में वृद्धि होती है इसके फलस्वरूप बहुत सारे लेखकों के कार्य भी प्रभावित होते हैं। कला के क्षेत्र में भी परिवर्तन आता है, संपन्न वर्ग का ह्रास हो जाता है। ससोजा 1989 के अनुसार, 'आधुनिकता मानव अस्तित्व के तीन निर्माणक तत्वों-स्थान, समय और अस्तित्व के विशिष्ट और परिवर्तनशील अर्थो को समझने की दशा है।'

आधुनिकवाद में धार्मिक विश्वास व मूल्य आधारित कथनों को शामिल किए जाने की अनुमति नहीं थी। केवल वही तथ्य वैज्ञानिक समझे जाते थे जो आनुभविक रूप से प्रमाणित किए जा सकते हो। आधुनिकवाद में बड़े पैमाने के उत्पादन को देखा जा सकता है। इसे फोर्डवाद भी कहते हैं। हेनरी फोर्ड (1863-1947)की फोर्ड मोटर कंपनी जो बड़े

तीव्र पैमाने का उत्पादन, रोजगार से कठिन शर्तें रखती थी, आधुनिकवाद की बड़ी प्रतीक बनी। फोर्ड कंपनी में श्रम को संगठित सेक्टर और ऊंच दक्षता के रूप में विकसित किया गया और कर्मचारियों को एक ही प्रकार के कार्यों की पुनरावृत्ति करवाई गई और उनमें कुशलता उत्पन्न की गई।

फोर्ड कंपनी के कर्मचारियों को उच्च वेतन दिया गया जिससे वह अपने ही द्वारा निर्मित कारों को खरीद सके, इसे फोर्डवाद कहा गया।

बड़े पैमाने पर तीव्र व विशिष्ट उत्पादन एक ही स्थान पर संगठित होकर कार्य कराने की प्रणाली का विभाजन और स्थानिक बिखराव उत्तर फोर्डवाद कहलाता है।

आधुनिकवाद में यूरोप के शक्तिशाली देशों की अफ्रीकी उपनिवेशों पर मजबूत पकड़ थी प्रथम विश्व युद्ध के बाद शक्तियों का विनाश, यूरोप में उच्च रोजगार दर, साम्यवाद और फासीवाद का उदय, यू.एस. संग का विश्व शक्ति बनना, केयनेसियनिज्म (keynesianism) के आर्थिक सिद्धांत, विज्ञान प्रौद्योगिकी में तीव्र वृद्धि समाजशास्त्र मनोविज्ञान में अनुसंधान जैसे लक्षण विश्व का परिचय बन गए।

विभिन्न कलाओं में भावात्मकता के स्थान पर प्रकाश प्रभाव, ज्यामितीय आकृतियां, भवन निर्माण में व्यावहारिक उपयोगिता, शीशे व लोहे के उच्च तकनीकी युक्त विशाल ढांचे आदि अन्य प्रमुख लक्षण थे।

आधुनिक भूगोल

आधुनिक भूगोल का प्रारंभ 1796 से माना जाता है, जब जेम्स कुक ने वैज्ञानिकों के दल के साथ प्रशांत महासागर की समुद्री यात्रा प्रारंभ की। इन वैज्ञानिकों ने भूगोल को वस्तुपरक विज्ञान बनाया।

आधुनिक भूगोल में तीन लक्षण उत्पन्न हुए-

1. यथार्थता का वर्णन
2. आंकड़ों का व्यवस्थित वर्गीकरण
3. तुलनात्मक विधि

भूगोल के विकास की तीन अवस्थाएं थीं। पहली अवस्था में मानव भूगोल, भौगोलिक अध्ययन का एक अहम हिस्सा बना। रेटजेल (Ratzel) ने आधुनिक मानव विज्ञान भूगोल की नींव एंथ्रोपॉजियोग्राफी (Anthropogeography) से रखी। इस पुस्तक में इन्होंने व्यक्ति और प्रजातियों का भौगोलिक अध्ययन किया, और अध्ययन के लिए निगमनात्मक (Deductive) उपागम का इस्तेमाल किया।

आधुनिक भूगोल की दूसरी अवस्था 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से 20वीं शताब्दी के मध्य रही और इस दौरान भूगोल और समाजशास्त्र का अंतर संबंध स्थापित हुआ।

समाजशास्त्र ने समाज की स्थानिक संरचना को अपने विषय में शामिल किया। फ्रांसीसी स्कूल में समाज और प्रकृति के संबंधों को मानव भूगोल का विषय बनाया। इस काल के भूगोलवेत्ता वाइडल-डी-ला-ब्लॉश तथा समाजशास्त्री दुर्खीम ने स्वतंत्र विषय के रूप में विकसित किया।

टिप्पणी

आधुनिक भूगोल की तीसरी अवस्था में अर्थशास्त्र के साथ इसका संबंध स्थापित हुआ 1950 और 1960 के दशक में भूगोल में मात्रात्मक क्रांति के आगमन से सामान्य सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया और विशेष प्रदेशों के अध्ययन के स्थान पर स्थानिक अध्ययन को स्थान दिया गया।

ग्रेगरी ने आधुनिक मानव भूगोल के तीन लक्षणों की पहचान की–

1. ग्रेगरी के अनुसार, मानव विज्ञान, समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र से संबंधित तीनों धराएं प्रकृतिवाद से जुड़ी हैं। भूगोल प्रकृति व मानव दोनों से जुड़ा हुआ है इसलिए उसके विकास में प्रकृतिवाद का अस्तित्व सामान्य है।
2. मानव विज्ञान, समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र अवधारणाओं को मानव भूगोल विज्ञान को विकसित करने के लिए संयुक्त किया गया है। अत: आधुनिक भूगोल संपूर्ण योग की सामान्य व्याख्या में विश्वास करता है। यह किसी भी अपवाद पर ध्यान नहीं देता। सामाजिक विज्ञानों में यह वैज्ञानिक स्वरूप अति सामान्यीकरण को ही व्यक्त करता है।
3. इन तीनों धाराओं की वजह से ही मानव भूगोल अपने चरम उत्कर्ष पर पहुंचा और स्थानिक विज्ञान का जन्म हुआ।

भूगोल में उत्तर आधुनिकवाद का विकास

1980 के उत्तरार्ध में उत्तर आधुनिकवाद मानव भूगोल में एक नए रूप (trend) में आया। ये मानव भूगोल के एक सिद्धांत के रूप में आया। उत्तर आधुनिकवाद, आधुनिकवाद की आलोचनास्वरूप आया और उसने आधुनिकवाद के सारे सिद्धांतों को अस्वीकार कर दिया। यह धारा किसी भी शाश्वत सत्य में विश्वास नहीं करती क्योंकि हर किसी का अपना सत्य होता है और यह सत्य किसी के अनुभव और अपने बौद्धिक विवेक पर आधारित होता है। इसलिए हम किसी के सत्य पर अविश्वास नहीं कर सकते।

किसी भी अन्य वस्तु की तरह विज्ञान (साइंस) भी आस्था का विषय है। हम किसी के भी सत्य को असत्य नहीं मान सकते। उत्तर आधुनिक भूगोल के तीन मुख्य विद्वान् माने जाते हैं– जीन फ्रांकोइस ल्योतार्द (jean francois lyotard), मिशेल फौकाल्ट (Micheal Foucault), जिगमंट बाउमन (Zygmunt Bouman)।

उत्तर आधुनिक भूगोल का बनना आधुनिक भूगोल के विखंडन का मार्ग है। यह मार्ग राजनीतिक अर्थव्यवस्था में पूंजी के विघटन से प्रारंभ होकर सामाजिक सिद्धांत के महत्व को प्रमुखता देने से गुजर कर, महा कथनों (meta & narratives) के स्थान पर विभिन्न संस्कृतियों के अध्ययन की प्रमुखता पर समाप्त होता है।

उत्तर आधुनिक भूगोल के विकास के प्रारंभ आधुनिक भूगोल के शिखर पर पहुंचने के बाद शुरू हुआ। शिखर पर स्थित आधुनिक भूगोल स्थानिक विश्लेषण (spatial analysis) का विज्ञान था तथा तार्किक व आर्थिक मानव की मान्यता पर सिद्धांत निर्माणक विज्ञान (nomothetic science) बन गया। भूगोल के स्वरूप की पहली आलोचना से उत्पन्न पहला विकल्प व्यावहारिक भूगोल था। और इसी समय आदर्शवाद भूगोल पर आधारित मानववादी भूगोल का विकास हुआ।

उत्तर आधुनिक भूगोल की गति 1970 के दशक के उत्तरार्ध से जब शुरू हुई तब मार्क्सवाद की सहायता से भूगोल में समाज के लिए सरोकार व्यक्त किया जाने लगा। लेकिन सोजा (Soja, 1989) इसका मूल 'The Sociological Imagination' (Mill, 1959) को बताता है।

उत्तर आधुनिक भूगोल का मुख्य केंद्र बिंदु विषम स्थानिक विकास बना। फिर भी मार्क्स के सामाजिक समता के सिद्धांत को कोई स्थान नहीं दिया गया, केवल वर्ग संघर्ष पर आधारित रहा। फलस्वरूप 1970 के दशक के अंतिम वर्षो में उत्तर मार्क्सवाद का चिंतन उभरा, जिससे सामाजिक स्थानिक सरंचना निर्माण सिद्धांत बना। समाज समय और स्थान दोनों से बनता है। इससे समाज तथा स्थान अर्थात कारक तथा संरचना का पूर्ववर्ती अलगाव समाप्त हुआ।

बरगर ने स्थान के महत्व को स्पष्ट करते हुए बताया कि स्थान मानव क्रियाओं के परिणामों को अपने अंदर रखता है।

मेण्डल ने अपनी पुस्तक Late Capitalism, 1975 में बताया कि पूँजीवाद का सार तत्व ही है अंतरराष्ट्रीय और अंतरप्रदेशीय विषमता उत्पन्न करना।

उत्तर आधुनिकवाद संरचनात्मक मार्क्सवाद से विकसित हुआ। संरचनावाद की मान्यता है कि सामाजिक संरचना के तत्व समान रहते हैं लेकिन पारस्परिक संबंध बदलते रहते हैं।

समाज में व्यक्तियों के निर्णय जो कि समाज द्वारा निर्देशित होते हैं, सामाजिक संरचना को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार सामाजिक व्यवहार सामाजिक सरंचना को प्रभावित करता है और सरंचना सामाजिक व्यवहार को नियमित करती है।

उत्तर आधुनिकतावाद के विकास में समाज व स्थान के अलगाव तथा द्वैतवाद का अंत 1980 तक समाप्त हो गया था। हेर्मेनेयुटिक्स (Hermeneutics) विधि के भूगोल में आगमन से ऐसा हो पाया। इसका मतलब है कि सिद्धांतों की व्याख्या करना (बाइबिल और दूसरे साहित्यिक लेखों की)। इसके द्वारा मानव क्रियाओं, कृतियों और सरंचना के पीछे छुपे हुए मकसद (intention) को समझने का प्रयास किया जाता है।

भूगोल में इस विधि द्वारा भिन्न-भिन्न समाज और स्थानों का अर्थ निर्णय करना भूगोल का उद्देश्य बन गया। भूगोल में स्थानीय ज्ञान की जानकारी पर बल दिया जाने लगा और इस विधि से भूगोल विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक विषयों से जुड़ गया।

आधुनिकवाद से भूगोल का उत्तर आधुनिकवाद में रूपांतरण समसामयिक पूंजीवादी तंत्र में घटित घटनाओं का परिणाम था। यह क्रमिक विकास का परिणाम था।

ग्रेगॉरी (Gregory) 1989 के अनुसार, 'उत्तर आधुनिकवाद भूतकाल से संबध विच्छेदन नहीं, बल्कि उस पर एक टिप्पणी और व्याख्या है।'

भूगोल में उत्तर आधुनिकवाद (Postmodernism In Geography) समसामयिक भूगोलवेताओं का विशिष्ट है एवं प्रचलित भौगोलिक शब्द बन गया था।

आधुनिकवाद के चरमोत्कर्ष में विश्वव्यापकता (universality) के सिद्धांतों से हटकर स्थान विशिष्टता (space specific) उपागम से उत्तर आधुनिकवाद का प्रारंभ हुआ।

आधुनिकता मानव को वह सब नहीं दे पाई जो उसके उद्देश्य थे या उसकी आशाएं थीं। उत्तर आधुनिकवाद एक नवीन आंदोलन था जिसके कुछ विशिष्ट लक्षण हैं, जैसे– भव्यसिद्धांतों पर संदेह, गवेषणों में विभिन्न मतों के लिए खुलापन, इन सिद्धांतों का आलोचनात्मक विश्लेषण, उत्तर पूंजीवाद का लोचपूर्ण संचय, इतिहास की आलोचना, स्थानीयता को उजागर करना तथा संपूर्ण योग के स्थान पर बिखरेपन पर ध्यान, पूंजीवाद की सामाजिक, आर्थिक विषमता। विशेष स्थानों पर मानव दशा को समझना, स्थानों द्वारा समाज का निर्माण, समसामयिकता पर ध्यान।

1. **भव्य सिद्धांतों पर संदेह–** उत्तर आधुनिकवाद 1950 और 1960 के दशक के सिद्धांतों पर अविश्वास करता है क्योंकि वह सामाजिक वास्तविकता की विश्वव्यापी व्याख्या नहीं करता जैसी उनसे आशा की जाती थी।

   किसी भी घटना के बोध, वर्णन या उसका अर्थ निर्णय करते समय हमारे लिंग, वर्ग और संस्कृति का प्रभाव होता है इसलिए व्याख्या एक नहीं अनेक हो सकती है।

   उत्तर आधुनिकवाद नियम, सिद्धांत, मॉडल बनाने के स्थान पर विशेषता व अनेकता के अध्ययन को अधिक महत्वपूर्ण मानता है।

2. **स्थानीयता को महत्व–** उत्तर आधुनिकवाद इतिहास और समय की तुलना में स्थान को अधिक महत्व देता है।

   समय से ज्यादा स्थान में किसी भी समाज की वास्तविकता छुपी रहती है जिन्हें स्थानीयता के अध्ययन द्वारा समझा जा सकता है। इस प्रकार उत्तर आधुनिकवाद ने इतिहासवाद के प्रभुत्व को कमजोर करके स्थानीयता को महत्व दिया।

   हार्वे ने इतिहासवाद के स्थान पर स्थानीयता को केंद्र में रखा।

3. **विविधता का सम्मान–** उत्तर आधुनिक भूगोल यथार्थता में उपस्थित विविधता की अपेक्षा नहीं करता। स्थानिक विविधता, भिन्नता, अनेकता, और विरोधाभास का आदर कर उनको व्याख्या में स्थान देता है। इसे विज्ञान की एकल सत्यता के दृष्टिकोण को चुनौती दी गई है।

   आधुनिकवाद में समानता व समांगता को पहचानकर सामान्य सिद्धांतों की रचना की जाती थी और अपवादस्वरूप, भिन्नताओं और विशेषताओं को गैर महत्वपूर्ण समझा जाता था तथा आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक जीवन की विषमता को वर्तमान विघटित पूंजीवाद में पूरा सम्मान और महत्व दिया गया और भूगोल बहुलतायुक्त सत्यता वाला विज्ञान बन गया।

4. **मानव निर्णयों में विवेकशीलता को नकारना–** उत्तर आधुनिकवाद भूगोल में तर्कसम्मत मानव निर्णयों व उससे निर्मित प्रतिरूपों को स्वीकार नहीं किया जाता क्योंकि मानव निर्णय अतार्किक, भावनात्मक व दोषपूर्ण हो सकते हैं। वे कभी भी सर्वोत्तम नहीं होते हैं।

   आधुनिक काल में भूतल को समरूप व्यक्त किया जाता था, जिसमें शक्ति, गरीबी, राजनीतिक संघर्ष को व्यक्त नहीं किया जाता। इस प्रकार असत्य संसार के आदर्श मॉडल बनाए जाते थे जिसे उत्तर आधुनिकवाद स्वीकार नहीं करता।

टिप्पणी

5. **सिद्धांत और नियम बनाने को हतोत्साहित करना–** उत्तर आधुनिकवाद भूगोल अलग-अलग सामाजिक समुदाय, विशेष स्थानों के ज्ञान प्राप्त करने में रुचि रखता है। इसके अनुसार– बहुलतायुक्त ज्ञान प्राप्त करना ज्यादा तर्कसंगत है ताकि समाज के विभिन्न लक्षणों और शैली को प्रदर्शित किया जा सके। उनके अनुसार आंकड़ों को संपूर्ण योग में निश्चित करके सामान्य निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए। इसलिए उत्तर आधुनिक वाद के सामान्य सिद्धांतों और नियमों पर विश्वास नहीं करता उत्तर आधुनिकवाद सामान्य सिद्धांतों और नियमों पर विश्वास नहीं था और यह नियम या सिद्धांत बनाने को हतोत्साहित करता है।
6. **सामाजिक मुद्दों को शामिल करना–** उत्तर आधुनिकवाद भूगोल में बहुत सारे सामाजिक सरोकार के विषयों को शामिल किया गया। गरीब, शोषित वर्ग, महिलाओं की समस्याओं पर ध्यान केंद्रित किया गया।
7. **सामाजिक विज्ञानों में भूगोल को केंद्रीय स्थान–** उत्तर आधुनिकवाद भूगोल में स्थानीयता पर विशेष बल दिया गया। इसी वजह से भूगोल को सामाजिक विज्ञानों में महत्वपूर्ण केंद्रीय स्थान प्राप्त हुआ। उत्तर आधुनिक भूगोल समाजिक तत्वों के स्थानीयता के अध्ययन करने का विज्ञान होने के कारण, सामाजिक विज्ञानों में केंद्रीय स्थान प्राप्त कर गया। उत्तर-आधुनिकवाद स्थानीयता को 'सामाजिक उत्पाद को ढालने वाली शक्ति और उत्पाद' दोनों मानता है।
8. **उत्तर आधुनिकवाद की प्रकृति और विधि–** उत्तर आधुनिकवाद भूगोल वृहद स्तरीय अध्ययन की बजाय सूक्ष्म स्तरीय अध्ययनों को प्राथमिकता देता है और व्यक्तिगत नमूना अध्ययन विधि को सर्वश्रेष्ठ समझता है क्योंकि उनके द्वारा उन सामाजिक प्रक्रमों को सरलता से समझा और प्रदर्शित किया जा सकता है जो समाज के भौगोलिक प्रतिरूप बनाते हैं।

   उत्तर आधुनिकवाद भूगोल की प्रकृति सामाजिक सिद्धांत का विज्ञान बन गई और क्षेत्र के स्थान पर मानव अध्ययन को वरीयता मिली। और उस समय के सामाजिक मुद्दों को भूगोल में स्थान मिलने लगा जैसे जनसंख्या वृद्धि, भूख, गरीबी, हिंसा, आपदा आदि।
9. **अस्थिरीकरण को बढ़ावा–** उत्तर आधुनिकवाद महासिद्धांतों और महाकथनों की आलोचनात्मक व्याख्या करते हुए उन पर संदेह व्यक्त करता है। उनके अनुसार किसी भी वैज्ञानिक का किसी भी घटना की व्याख्या करते हुए उसकी संस्कृति, वर्ग, और लिंग, बौद्धिक विकास का प्रभाव इंगित होता है।

उत्तर-आधुनिकवाद और विकास की नई अवधारणा

उत्तर आधुनिक भूगोल विकास के परंपरागत और आधुनिकीकरण को नकारने लगा क्योंकि यह प्राकृतिक संसाधनों के अधिकाधिक शोषण और बड़े पैमाने पर उत्पादन और उपभोक्तावाद को बढ़ावा देता है तथा यह विकास की संकीर्ण विचारधारा थी क्योंकि यह जीवन की बेहतर गुणवत्ता को सुनिश्चित नहीं करता और मानव समाज में तनाव और प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देता है और क्षेत्रीय असमानता को बढ़ाता है।

टिप्पणी

इस सोच से नये सामजिक आंदोलन होने लगे और संसाधनों के समानतापूर्वक वितरण, विवेकपूर्ण उपयोग, गरीबी उन्मूलन, सामजिक समानता, सभी को शिक्षा, ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा आदि पर विचार आने लगे और महसूस किया जाने लगा कि विकास एक बहुआयामी अवधारणा है जिसमें जीवन की गुणवत्ता, गरीबी, भूख, कुपोषण, विषम विकास, पर्यावरण गुणवत्ता, लिंगभेद आदि पर कार्य किए जाने चाहिए।

भूगोल में उत्तर-आधुनिकवाद ऐसे विकास का समर्थक था जिसमें निम्नलिखित तीन पहलू अवश्य होने चाहिए–

1. अंतर्वेशी मानव विकास
2. संपोषणीय विकास
3. संगत भूमंडलीय-स्थानीय विकास

विकास की कोई भी चिंतन प्रक्रिया मानव विकास उन्मुख होनी चाहिए न कि पदार्थ व्यवस्था विकास उन्मुख।

1. अंतर्वेशी मानव विकास

महबूब-उल-हक विकास लोगों की छांट को विस्तृत करता है। जीवन में व्यक्ति जो भी छांट करना चाहे, छांट सके। छांट का दायरा विस्तृत करने की प्रक्रिया ही विकास कहलाती है। महबूब-उल-हक इस अवधारणा का अग्रज विचारक है। पॉल स्ट्रीटन ने मानव विकास के अध्ययन की मूल्यांकन रिपोर्ट में मानव विकास के विस्तृत आशय स्पष्ट किए हैं–

- यह समस्त देशों के लोगों के लिए होता है, चाहे वह अमीर हो या गरीब।
- मानव कल्याण में बेहतरी को सर्वोपरि रखना और जीवन के समस्त पहलुओं को शामिल करना।
- यह संपूर्ण मानव छाँट को वृहद बनाता है।
- यह मानव वर्ग, लिंग, प्रजाति, राष्ट्रीयता, धर्म, जाति पर किसी प्रकार का भेदभाव को स्वीकार नहीं करता।
- लोगों की इच्छाओं, आवश्यकताओं, क्षमताओं को विकास के प्रयासों के केंद्र में रखता है।

अमृत्यसेन विकास को लोगों की वास्तविक स्वतंत्रता का प्रसार मानते हैं, जिनका लोग प्रयोग कर सकें। जिसका अर्थ है जीवन को धन से पहले रखना।

मानव विकास का तात्पर्य है कि विश्व भर में धन के अधिकार के ऊपर, जीवन का अधिकार होना, राजनीतिक प्रजातंत्र होना, भूमंडलीय कॉरपोरेशन और वित्त की मानव सरोकारों के लिए जिम्मेदारी तय हो, स्वस्थ बाजारों का सृजन हो, उनकी सफलता का मापदंड पैसा ना होकर उच्च जीवन मूल्य होना, कंपनियां पर अधिकार शेयरधारकों का हो, संतुलित व्यापार, ज्ञान, प्रौद्योगिकी का आदान-प्रदान, ऊर्जा के ऐसे साधनों का उद्योग तंत्र में उपयोग जो स्थानीय पर्यावरण के संगत हो- ऐसे लक्षणों वाला विकास मानव विकास कहलाता है (कोर्टन, 1998 : The Post Corporate World)।

21वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में विकास का तात्पर्य आर्थिक अभिवृद्धि के स्थान पर समाज का रूपांतरण हो गया। (Stinglitz 2003)

मानव विकास समाज के सभी वर्गों को शामिल करने वाला हो। मानव विकास न्यायपूर्ण, समानतापूर्ण होना चाहिए जिसमें गरीब, कमजोर, वंचित, दलित वर्गों का विशेष ध्यान रखा जाये। सर्वोच्च प्राथमिकता स्वास्थ्य व शिक्षा को देनी चाहिए। जिससे जीवन के उच्त्तर उदेश्यों को प्राप्त किया जा सकता है। इसके अलावा सामाजिक सुविधाएं और अवसरंचनात्मक सुविधाएं, संचार सुविधाएं सस्ती और सुलभ होनी चाहिए। इन सभी उदेश्यों और समतापूर्ण विकास और समस्याओं के समाधान के लिए उचित राजनीतिक तंत्र, शक्ति विकेंद्रीकरण और न्यायपालिका का होना आवश्यक है।

2. सम्पोषणीय विकास

स्टॉकहोम (स्वीडन), 1972 में पृथ्वी के पर्यायवरणीय दिशा का मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया। ब्रन्टलैंड कमीशन की रिपोर्ट 'आवर कॉमन फ्यूचर' ने संपोषणीय विकास के सिद्धांत को इस प्रकार से व्यक्त किया– ऐसा विकास जो भविष्य की पीढ़ियों की जरूरतों को खतरे में डाले बगैर वर्तमान पीढ़ियों की जरूरतों को पूरा कर दे। इसी सिद्धांत को रिओ डि जनारिओ, ब्राजील, 1992 में हुए पृथ्वी सम्मेलन में एजेण्डा 21 में औपचारिक रूप से अपना लिया गया।

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया पूरे विश्व में फैल गई। पूरी दुनिया विविधताओं को खोकर एक रुप होने की प्रक्रिया में शामिल होकर विकास की पंक्ति में खड़ी हो गई। पाश्चात्य तरीके से विकास के इस रूप ने भारी पर्यावरणीय विनाश किया तथा शीघ्र ही पारिस्थितिकीय विघटन के चिह्न दिखाई देने लगे।

1960 तक आते-आते आधुनिकीकरण प्रक्रिया के पर्यावरणीय दुष्प्रभाव साफ तौर पर दिखाई देने लगे।

1972 में क्लब ऑफ रोम के द्वारा पृथ्वी की दशा पर मीडोज की रिपोर्ट- The Limit of Growth के प्रकाशन ने बुद्धिजीवियों, सरकारों का ध्यान आकर्षित किया और विभिन्न प्रकार की अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, प्रादेशिक, स्थानीय अकादमी, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक मंचों ने इस विषय को गंभीरता से लेते हुए कार्य किये अंत में यह निष्कर्ष निकाला गया कि पर्यावरण के स्वस्थ रहने से ही सम्पोषणीय विकास संभव हो सकता है।

3. संगत भूमंडलीय-स्थानिक विकास

उत्तर आधुनिक भूगोल में ग्लोबीय और स्थानीय विकास पर ध्यान दिया गया। कहीं न कहीं भूमंडलीकरण में स्थानीय समाज लाभ से वंचित रह जाता है, इसके बहुत सारे उदाहरण व्याप्त हैं। विकास के इन दोनों मापकों (ग्लोबलीय, स्थानीय) के किनारों के मध्य संबंध संश्लिष्ट है। स्थानीय क्षेत्र अक्सर भूमंडलीय प्रक्रिया द्वारा व्यक्त किए जाते हैं। इन क्षेत्रों का बनना, बिगड़ना हजारों किलोमीटर दूर स्थित लिए गए निर्णय पर आधारित होता है।

उदाहरण के लिए किसी बहुराष्ट्रीय कंपनी द्वारा किसी जनजातीय क्षेत्र में निवेश करने के निर्णय द्वारा पड़ने वोले प्रभाव को ले सकते हैं।

उत्तर आधुनिक भूगोल यह दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है कि समसामयिक भूमंडलीकरण को केवल ऊपर से ही नहीं बल्कि स्थानीय स्तर पर भी देखना चाहिए। दोनों के विकास की संगति होनी चाहिए।

टिप्पणी

समय भूगोल (Time Geography)

समय भूगोल को स्वीडिश भूगोलवेत्ता टॉर्टन हैगरस्ट्रैंड तथा उसके सहयोगी (लुण्ड विश्वविद्यालय) द्वारा विकसित किया गया था, सभी मनुष्यों के लक्ष्य होते हैं। इन्हें प्राप्त करने के लिए उनके पास कार्य की परियोजना शृंखला होनी चाहिए जो लक्ष्य प्राप्ति के लिए एक वाहन के रूप में कार्य करती हैं समय भूगोल प्रकृतिवाद पर आधारित है।

समय भूगोल की अवधारणा इतिहास और भूगोल के बारे में तार्किक वर्गीकरण के बजाय भौतिक के आर्किटेक्ट के अनुरूप है। ऐसा नहीं माना जाता है कि ज्ञान को दो तरीकों से वर्गीकृत किया जा सकता है– या तो तार्किक या शारीरिक रूप से। तार्किक वर्गीकरण सभी व्यक्तिगत वस्तुओं को रूपात्मक विशेषताओं की समानता के अनुसार अलग-अलग श्रेणी में इकट्ठा करता है; अगर भूविज्ञान में चट्टानों के लिए एक प्राकृतिक प्रणाली का अनुसरण किया जाता है, वनस्पति विज्ञान में पौधे, जंतु विज्ञान में जानवर इसके विपरीत भौतिक वर्गीकरण उन व्यक्तिगत वस्तुओं को इकट्ठा करता है जो एक ही समय या एक ही स्थान से संबंधित है। भूगोल और इतिहास हमारी धारणा की पूरी परिधि को भर देते हैं।

हैगरस्ट्रैंड के अनुसार समय और स्थान हमारे संसाधन हैं जिनमें गतिविधियां होती हैं। किसी भी व्यवहार के लिए आंदोलन की आवश्यकता होती है, इसमें एक साथ एक स्थान और समय के माध्यम से एक पथ को शामिल किया जाता है। चित्र में, क्षैतिज अक्ष के साथ गति स्थानिक ट्रैवर्स को दिखाती है और ऊर्ध्वाधर के साथ समय की गति को इंगित करती है

***चित्र** : समय-क्षेत्र का प्रिज़्म*

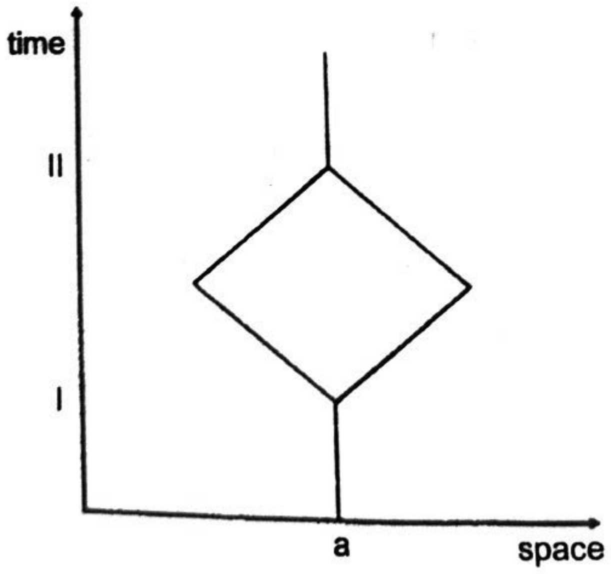

सभी यात्राएं या जीवनरेखा में दोनों रेखाओं के साथ गति शामिल है और उन रेखाओं द्वारा प्रदर्शित किए जाते हैं जो न तो ऊर्ध्वाधर हैं और न ही क्षैतिज। ऊर्ध्वाधर रेखा एक स्थान पर होने का संकेत देती हैं; क्षैतिज रेखाएं लोगों के लिए संभव नहीं हैं कि वे संदेशों के प्रसारण के लिए होती हैं।

टिप्पणी

हैगरस्ट्रैंड ने एक प्रारंभिक समय-स्थान धारणा विकसित की जो कि लेक्सस बेकर द्वारा जनसंख्या विज्ञान में प्रयुक्त आरेखों के मानक अनुसार किया गया। उनके मूल ढांचे को एक वेब मॉडल (चित्र) के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है जो निम्न आधारभूत प्रस्तावों पर आधारित है।

***चित्र** : समय-भूगोल (हैगरस्ट्रैंड) का जाल-मॉडल)*

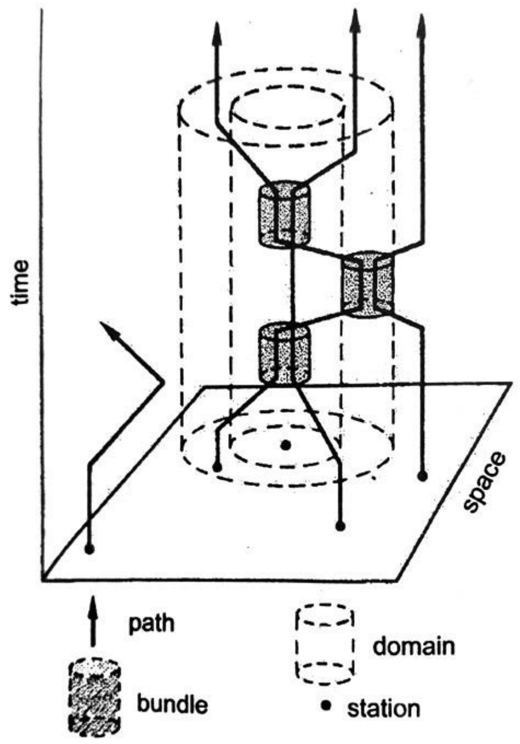

(अ) स्थान और समय ऐसे संसाधन हैं जिन पर परियोजनाओं को क्रियान्वित किया जाता है।

(ब) किसी भी परियोजना की प्राप्ति तीन बाधाओं के अधीन है:

1. क्षमता बाधा, जो अपनी शारीरिक क्षमताओं या सुविधाओं के माध्यम से व्यक्ति की गतिविधियों को सीमित करती है, जिनके द्वारा वे किसी भी स्थिति पर काबू कर सकते हैं। हर किसी की क्षमता अलग-अलग होती है।
2. युग्मन नियंत्रण के लिए कुछ व्यक्तियों और समूहों को विशेष स्थानों की आवश्यकता होती है, उदाहरण के लिए स्कूल में शिक्षकों और छात्रों के लिए समय निश्चित होता है और इस प्रकार खाली समय के दौरान गतिशीलता की सीमा को सीमित करते हैं। युग्मन नियंत्रण समय स्थान के पुलिंदे को परिभाषित करते हैं।
3. प्रभुत्व और स्टीयरिंग बाधा व्यक्तियों को निर्धारित समय पर निर्धारित स्थानों पर होने से रोक सकती है।

(स) ये बाधाएं जोड़ के बजाय अंत:क्रियाएं हैं और साथ में वे संभावित सीमाओं की एक शृंखला का परिसीमन करती हैं जो विशेष परियोजनाओं को पूरा करने के लिए व्यक्तिगत या समूह के लिए उपलब्ध पथ को चिह्नित करती हैं।

अनेक भूगोलवेत्ताओं ने हैगरस्ट्रैंड की अवधारणा 'समय-भूगोल' की सराहना की है। बेकर की राय में समय भूगोल की संकल्पना भौगोलिक कार्य की पुनर्स्थापना, बेहतर निर्धारण में मूल्यवान हो सकती है परंतु बहुत सारे आलोचकों का कहना है कि केवल लघु पैमाने पर, छोटी समय अवधि और वैयक्तिक पैमाने पर सार्थक सिद्ध होती है। इसमें संस्थागत कारकों को नजर अंदाज किया गया है।

उत्तर आधुनिकवाद और नारीवाद

जाति, प्रजाति के अलावा लिंग अध्ययन भी उत्तर आधुनिक काल में महत्वपूर्ण तत्व रहा है। नारीत्व भूगोल आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक रूप में कहीं ना कहीं पर अंतर संबंधित है। दूसरे रूप से कह सकते हैं कि लिंग एक कारक है जो आज के समाज में असमानता, प्रताड़ना जैसे सामाजिक अभिशाप का शिकार रहा है। जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में नारी के प्रति भेदभाव किया जाता है और नारी दमन, प्रताड़ना समाज में व्यापक बन गई है। नारी विषयक भेदभाव उजागर करना, विरोध करना भूगोल के अध्ययन के उद्देश्य हैं।

जॉनसन के अनुसार, नारीवाद भूगोल में महिलाओं के सामान्य अनुभव की पहचान करता है, पुरुषों द्वारा दमन के प्रति उनका प्रतिरोध, अंत करने की प्रतिबद्धता आदि विषय शामिल करता है। नारीवाद भूगोल का उद्देश्य नारी अभिव्यक्ति को प्रकट करना, अपने को नियंत्रण करना है। भूगोल का सोच, भौगोलिक अभ्यास प्रधान रूप से लिंग दोष से ग्रसित रहा है। भूगोल में केंद्रीय पितृसत्ता और लैंगिकता केंद्र में रहे हैं।

रोज जैसे नारी समर्थक भूगोलवेत्ताओं ने जोर देते हुए व्यक्त किया है:

1. भूगोल विषय ऐतिहासिक रूप से पुरुष प्रधान है।
2. भूगोल महिलाओं को मात्र निरीह प्राणी मानता है और इसी रूप से संरक्षित करता है। वस्तुतः महिलाओं को भूगोल में उपेक्षा मिली।
3. नारीवाद भूगोल के प्रोजेक्ट्स और शोध विषयों से अछूता बना रहा।
4. भूगोल में पुरुषों के प्रभुत्व के कारण दुष्परिणाम निकले हैं। स्थानों और प्रेक्षण और आनुभविक ज्ञान को पुरुष प्रधान दृष्टि से देखा और वर्णित किया गया।

अतः कह सकते हैं कि भूगोल विज्ञान पुरुष प्रधान है जिसमें महिलाओं की सोच की उपेक्षा की गयी है। समाज के प्रभुत्वशाली समूह ने समाज में अपने दृष्टिकोण से दृश्य-जगत और प्रकृति को देखा, उसका विवेचन किया और यह कह सकते हैं कि धरातल की पुरुष दृष्टि से की गई व्याख्या को समाज पर लाद दिया। उनके भौगोलिक विवरण स्त्री-पुरुष भेदभाव की ओर इशारा करते हैं। वह केवल जाति, प्रजाति, वर्गों और लिंग भेद से भरे हुए हैं।

उत्तर आधुनिक मानव भूगोलवेताओं ने इस दिशा में निम्नलिखित कार्य किये हैं–

1. **नीतिसंगत दार्शनिकता, नैतिक भूगोलवेत्ताओं का सदाचरण–** इसके अंतर्गत भूगोल में आर्थिक केंद्र बिंदु के स्थान पर जीवन उपयोगी नैतिक शिक्षा को विकसित किया गया।
2. **सामाजिक भेदभाव की प्रक्रियाएं–** इसमें जाति, प्रजाति, आयु, स्वास्थ्य, शिक्षा, वर्ग यौनाचार विषयों को शामिल किया गया और स्थानिक विविधताओं का निर्वचन किया गया।

3. **स्वयं की रचना और सीमांकन–** भूगोलविदों द्वारा विभिन्न श्रेणियों के व्यक्तियों के परस्पर संबंध, मनोविश्लेषणात्मक साहित्य में ऐसे विषयों की चर्चा जिनका पूर्व में कोई उल्लेख नहीं था।

4. **भूमंडलीयता और प्रदेशीयता–** इसमें स्थान विशेष और विश्व के स्थानों के अध्ययन और निर्वाचन शामिल हैं।
5. **समाज, संस्कृति, प्राकृतिक वातावरण–** इसके अंतर्गत प्राकृतिक वातावरण की सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से व्याख्या, समस्याओं के निराकरण हेतु अपनाए गए सभी उपागमों को शामिल करना।

अपनी प्रगति जांचिए

7. किस दशक में तीव्र परिवर्तन ने उत्तर आधुनिकतावाद को जन्म दिया?

   (क) 1950-1960 (ख) 1970-1980

   (ग) 1960-1970 (घ) 1980-1990

8. आधुनिक भूगोल का आरंभ किस वर्ष से माना जाता है?

   (क) 1976 (ख) 1810

   (ग) 1830 (घ) 1850

4.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (घ)
2. (क)
3. (ख)
4. (घ)
5. (घ)
6. (घ)
7. (ग)
8. (क)

4.7 सारांश

मॉडल वास्तविक जगत का आदर्शीकृत प्रदर्शन होता है। ये सूचनाओं को सरल, दृश्य, सुग्राह्य बनाते हैं। ये मूर्तिमान, सांकेतिक किसी भी प्रकार के हो सकते हैं। ये परिकल्पनाओं का निर्माण करके, नियम और सिद्धांत बनाने का पथ अग्रसर करते हैं। ये भौगोलिक अध्ययन को और अधिक विश्वसनीय बनाते हैं। ये किसी स्थान विशेष पर पाई जाने वाली विशेषताओं का गहन अध्ययन करने में सहायक होते हैं और किसी खास घटना का स्थान विशेष में पाए जाने का वर्णन करते हैं। परन्तु यह प्राकृतिक विज्ञानों के लिए तो उपयुक्त

हैं परन्तु मानव विज्ञान को सही प्रस्तुत नहीं कर पाते क्योंकि मानव व्यवहार को कोई भी ज्ञान शाखा सही से किसी गणितीय भाषा में बदल नहीं सकती और कोई भी विधि इसे माप नहीं सकती।

व्यवहारवादी अधिगम मुख्य रूप से मानव के व्यवहार को आर्थिक लाभ से प्रेरित होने के विरोधाभास से अस्तित्व में आया। व्यवहारवादी सोच के अंतर्गत मनुष्य केवल आर्थिक लाभ से प्रेरित होकर कार्य नहीं करता है। वह बहुत से कार्य अपनी पसंद, सामर्थ्य, बुद्धि, अभिव्यक्ति, शौक आदि के लिए करता है। उसके निर्णय अपने अनुभव के आधार पर लिए जाते हैं। वह भौतिक वातावरण को अपने विवेक से समझता है और हर व्यक्ति किसी एक निश्चित स्थिति और वस्तु को अपने अनुसार ग्रहण और विवेचन करता है। इसको हम ऐसे समझ सकते हैं कि बारिश का वर्णन करने को कहा जाये तो कवि इसे मधुर, सुन्दर और मनभावन बताएगा, एक गरीब किसान जिसकी फसल पक कर तैयार खड़ी है वो इसे जीवन हरने वाली, नुकसानदायक बताएगा और सभी दूसरे लोग अपनी परिस्थिति के अनुसार वर्णन करेंगे। व्यवहारवादी अधिगम आगमनात्मक आधारित प्रक्रिया पर आश्रित है। ये एक वैज्ञानिक अधिगम था पर यह अधिगम आनुभविक विश्लेषण को नजरअंदाज करता है। मनुष्य केवल अपने अनुभव पर ही निर्णय नहीं लेता बल्कि इसमें उसकी रुचियां, पसन्द, रूढ़ियां, रीतिरिवाज, संस्कृति आदि तत्वों का भी प्रभाव रहता है और इसमें जितने भी प्रयोग किये गए वे पशुओं पर किये गए और परिणामों को सामान्यीकरण किया गया। जबकि मनुष्य पशुओं से सर्वथा भिन्न होते हैं।

इस अधिगम को और अधिक स्वीकार्य बनाने के लिए इसको बहुविषयक बनाने के लिए जोर दिया जाना चाहिए और मानव के व्यवहार को समझने के लिए बड़े नमूनों को लेकर प्रयोग होने चाहिए।

उत्तराधुनिकवाद आधुनिक भूगोल की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप अस्तित्व में आया। आधुनिक भूगोल में ऐतिहासिकता पर जोर दिया गया और स्थानिकता को नजर अंदाज किया गया। उत्तर आधुनिकवाद के अनुसार सामाजिक एवं ऐतिहासिक प्रकियाओं की रचना भिन्न-भिन्न स्वरूपों में स्थान के अनुसार हुई है।

उत्तराधुनिक भूगोल नियमों और सिद्धांतों पर संदेह व्यक्त करते हैं और सिद्धांतो के निर्माण को हतोत्साहित करते हैं। किसी भी घटना को अलग-अलग दृष्टि से वर्णित किया जा सकता है। किसी का असत्य भी सत्य हो सकता है। उत्तर आधुनिकवाद में स्थानीयता को महत्व दिया गया। उत्तर आधुनिकवाद में नारी के विभिन्न पक्षों को अध्ययन में शामिल किया गया और बहुत से नये विषय भूगोल के क्षेत्र में शामिल हो गए।

एक भूगोलवेत्ता स्थान और समय के अनुसार पृथ्वी पर पाए जाने वाले तत्वों की प्रवृति और स्वरूप की पहचान करने की कोशिश करता है। अक्सर ये सिद्धांत समाजशास्त्री, अर्थशास्त्री, इतिहासकार, पुरातत्वविद, राजनीतिज्ञ, वैज्ञानिक, चिकित्सकों और प्रशिक्षित भूगोलविदों के सिद्धांतों से निकालकर विकसित किये जाते हैं।

4.8 मुख्य शब्दावली

- **मॉडल/प्रतिरूप :** मॉडल एक ऐसा साधन है जो पृथ्वी पर विकसित जटिलताओं को परिकल्पना व सिद्धांतों के परीक्षण द्वारा समझाता है।
- **प्रत्यक्षवाद :** प्रत्यक्षवाद वह सिद्धांत है जो केवल वैज्ञानिक पद्धति से प्राप्त ज्ञान को ही उपयुक्त, विश्वसनीय व प्रमाणिक मानता है।
- **व्यवहारवाद :** व्यवहारवाद एक ऐसे विचार का प्रतिनिधित्व करता है जिसका उद्देश्य सभी भौगोलिक घटनाओं को मानव के अवलोकित तथा अवलोकनात्मक व्यवहार के आधार पर विवेचित करना है।

4.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

लघु-उत्तरीय प्रश्न

1. मॉडल प्रक्रिया से क्या तात्पर्य है?
2. भूगोल में मात्रात्मक क्रांति से आप क्या समझते हैं?
3. प्रत्यक्षवाद और व्यवहारवाद की परिभाषा दीजिए।
4. भूगोल में उत्तर आधुनिकवाद के महत्त्व पर प्रकाश डालिए।

दीर्घ-उत्तरीय प्रश्न

1. भूगोल में सिद्धांत और मॉडल के गुण, दोष और उपयोगिता की विवेचना कीजिए।
2. भूगोल में मात्रात्मक क्रांति की विवेचना कीजिए।
3. प्रत्यक्षवाद और व्यवहारवाद का विस्तृत विश्लेषण कीजिए।
4. भूगोल में उत्तर आधुनिकवाद के इतिहास एवं इसकी उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

4.10 सहायक पाठ्य सामग्री

एस. डी. कौशिक, डी. एस. रावत (2014-15) भौगोलिक विचारधाराएं एवं विधितन्त्र, मेरठ

डॉ. हुसैन, भौगोलिक चिंतन का इतिहास, रावत पब्लिकेशन, जयपुर

डॉ. आर. एस. माथुर, डॉ. जैनेन्द्र गुप्ता, भौगोलिक विचारधाराएं, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर

चन्द्रशेखर यादव (2012), भौगोलिक विचारों का इतिहास, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, दिल्ली

Chorley, R. J and Hagget, P- (1965), Models in Geography, London.

Dickinson, R. E. (1969), The maker of Modern Geography, London.

Dikshit, R. D. (1999), Geographical Thought : A Contextual History of Ideas, New Delhi

टिप्पणी

Foucault, M. 1980, Power / Knowledge, Brighton

Gold, J.R. (1980), An Introduction to Behavioural Geography, Oxford

Golledge, R. J., et - al - (1972), Behavioural Approaches in Geography : An overview, The Australian Geographer, 12, pp l59&79

Gould, P. R. (1966), On Mental maps in Downs, R. M

Gregory, D., (1978), Dealogy Science and Human Geography, London, pp - 135&136

Gregory, D. (1981), Human Agency and Human Geography, Transaction, Institute of British Geographers

Gregory, D. (1989), The crisis of modernity/ Human geography and critical social theory, in Peet, R and Thrift, N. J. (eds) New Models in Geography, vol - 2, London. Haggett, P- Cliff, A. D. and Allan, F. (1977), Locational Models

Soja, E. (1989), Modern geography, Western Marxism and reconstructing of critical social theory, in Peet, R and Thift, N. (eds) New Model in Geography, vol -2, London

Taylor, G. (1919), Geography in Twentieth Century, London

इकाई 5 भौगोलिक विचारधारा में प्राचीन भारतीय विषयवस्तु

टिप्पणी

संरचना

5.0 परिचय
5.1 उद्देश्य
5.2 भौगोलिक ज्ञान प्रदान करने वाले भारतीय स्रोत
5.3 ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति
5.4 समन्वय प्रणाली और भौतिक भूगोल
5.5 महाद्वीप
5.6 भारतवर्ष
5.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
5.8 सारांश
5.9 मुख्य शब्दावली
5.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
5.11 सहायक पाठ्य सामग्री

5.0 परिचय

प्राचीन भारतीय विषयवस्तुओं में भारत के इतिहास के साथ-साथ इसके भूगोल से संबंधित पक्षों का भी वर्णन मिल जाता है जिससे उस काल के भौगोलिक क्षेत्रों और भौगोलिक विचारधारा की जानकारी मिल जाती है। इस प्राचीन स्रोतों में साहित्यिक, पुरातात्विक व विदेशी स्रोत प्रमुख हैं।

इस इकाई में हम भौगोलिक ज्ञान प्रदान करने वाले भारतीय स्रोतों, ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, समन्वय प्रणाली और भौतिक भूगोल, सातों महाद्वीपों और भारतवर्ष से संबंधित विभिन्न भौगोलिक पक्षों का अध्ययन कर पाएंगे।

5.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- भौगोलिक ज्ञान प्रदान करने वाले भारतीय स्रोतों के बारे में जान पाएंगे;
- ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, समन्वय प्रणाली और भौतिक भूगोल का अध्ययन कर पाएंगे;
- सभी महाद्वीपों एवं संपूर्ण भारतवर्ष का प्राचीन भारतीय विषयवस्तु के अनुसार अध्ययन कर पाएंगे।

5.2 भौगोलिक ज्ञान प्रदान करने वाले भारतीय स्रोत

भारतीय इतिहास और भौगोलिक ज्ञान प्रदान करने वाले बहुत से साधन उपलब्ध हैं। इनमें कुछ लिखित रूप में, कुछ मौखिक रूप में, कुछ दंतकथाओं के रूप में उपलब्ध हैं।

भारतवर्ष एक प्राचीन सभ्यता के रूप में जाना जाता है। यहां बहुत से राजाओं और बादशाहों ने शासन किया है और कई देशों में इसकी सीमाएं फैली हुई थीं। भारत के इतिहास की जानकारी देने के लिए अनेक स्रोत उपलब्ध हैं। कुछ स्रोत विश्वसनीय और वैज्ञानिक हैं। इन स्रोतों को मुख्यत: 3 भागों में बांटा जाता है–

टिप्पणी

1. साहित्यिक स्रोत
2. विदेशी स्रोत
3. पुरातात्विक स्रोत

1. साहित्यिक स्रोत

साहित्यिक स्रोत प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोतों पर बहुत सारी जानकारी प्रदान करते हैं। इसमें सभी ग्रंथ, लिखित या मौखिक शामिल हैं। इनको भाषा, शैली, सामग्री, आयु और उस परंपरा के आधार पर कई भागों में विभाजित किया जाता है। हालांकि, साहित्यिक स्रोतों का स्पष्ट रूप से विभाजन करना कठिन है क्योंकि इसमें विषय और सामग्री की अंतर्विरोधी भूमिका है।

विभिन्न साहित्यिक स्रोत निम्न हैं–

वेद

वेद भारत का सबसे पुराना और महत्वपूर्ण साहित्य है। वेद शब्द का शाब्दिक अर्थ है जानना। इसे चार भागों में विभाजित किया गया है - ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद।

ऋग्वेद विश्व का सबसे प्राचीन वेद है। इसकी रचना 1500-1000 ईसा पूर्व में की गई थी। ऋग्वेद देवताओं की स्तुतियों से संबंधित, यजुर्वेद यज्ञ के नियमों तथा अन्य धार्मिक अनुष्ठानों से संबंधित, अथर्ववेद धर्म, औषधि और रोग निवारण तथा सामवेद यज्ञ के मंत्रों से संबंधित है।

इन ग्रंथों में उत्तर-पश्चिमी और उत्तरी भारत के जीवन के बारे में जानकारी मिलती है। वेदांगों के रूप में ज्ञात कई पूरक ग्रंथ लिखे गए थे। ग्रंथों में ध्वन्यात्मक (शिक्षा), मात्राएं (छंद), व्याकरण (व्याकरण), व्युत्पत्ति (निरुक्त), अनुष्ठान (कल्प) और खगोल विज्ञान (ज्योतिष) शामिल हैं।

ब्राह्मण और उपनिषद

यह वेदों से जुड़ा साहित्य का एक और वर्ग है जिसे ब्राह्मण और उपनिषद के नाम से जाना जाता है। ब्राह्मणों में वैदिक मंत्रों का समावेश है।

दूसरी ओर, उपनिषद आर्यों का दार्शनिक और धार्मिक विश्वास है। उपनिषद ग्रंथों के अंतिम भाग हैं इसलिए इन्हें वेदांत भी कहते हैं। इसमें अध्यात्म और दर्शन पर प्रश्नोत्तरी द्वारा चर्चा की गई है। यह भारतीय दर्शन की प्राचीनतम पुस्तकों में से एक है। उपनिषदों की संख्या 108 है। कठ, केन, बृहदारण्यक, ईशा, मुण्डक, छान्दोग्य आदि प्रमुख उपनिषद हैं।

वेदांग या उपवेद

वेदांग या उपवेद विज्ञान और कला पर आधारित हैं। ये वेदों को समझने के लिए साधन हैं। वेदांग छह होते हैं– (i) शिक्षा, (ii) कल्प, (iii) निरुक्त, (iv) व्याकरण, (v) छन्द, (vi) ज्योतिष।

सूत्र

वैदिक साहित्य का अंतिम अंग सूत्र है। सूत्र वे पाठ हैं जो हमें वेदों की विभिन्न शाखाओं को समझने में मदद करते हैं। तीन महत्वपूर्ण सूत्र हैं: (i) श्रौत सूत्र, (ii) गृह्य सूत्र, और (iii) धर्म सूत्र। इसके अतिरिक्त एक अन्य सूत्र भी है शुल्वसूत्र।

सूत्र प्राचीन भारतीय समाज के सामाजिक और धार्मिक जीवन पर महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं।

रामायण और महाभारत

प्राचीन भारतीय इतिहास में दो महान महाकाव्य 'रामायण' और 'महाभारत' थे। इन दो महाकाव्यों को अंततः 400 ईसवी पूर्व में संकलित किया गया था।

रामायण की रचना महर्षि वाल्मीकि ने की थी। रचना करते समय इसमें 6,000 श्लोक थे जो बढ़कर 24,000 हो गए इसलिए इसे चतुर्विंशति साहस्री संहिता भी कहा जाता है। रामायण को कुल 7 खंडों में बांटा गया है।

महाभारत की रचना महर्षि वेदव्यास ने की थी। यह एक काव्य ग्रन्थ है। रचना के समय 8,800 श्लोक और बाद में बढ़कर 24,000 श्लोक हो गए। जिस कारण इसको भारत और गुप्तकाल में संख्या 1,00,000 होने पर महाभारत कहा गया। इसको 18भागों में बांटा गया। इसमें न्याय, शिल्प, खगोल विद्या, योग, ज्योतिष, शिक्षा आदि से संबंधित जानकारी मिलती है। इसने वेदों और पुराणों के पुराने धर्म का निर्माण किया । शिव और विष्णु के सम्मान में मंदिरों का निर्माण किया गया। इन दो महाकाव्यों ने हिंदुओं में एकता पैदा की। उस समय के हिंदुओं ने एक साधारण जीवन व्यतीत किया। इससे उस समय हिंदुओं में एकता की भावना पैदा हुई। हिंदुओं का सामाजिक विकास किया गया; इन महाकाव्यों ने हिंदुओं के बीच एकजुट होने में एक बड़ी भूमिका निभाई।

इसके अलावा, 'रामायण' और 'महाभारत' दो महान महाकाव्य हैं जो उस समय के लोगों की स्पष्ट तस्वीर पेश करते हैं। हालांकि इन महाकाव्यों को पौराणिक कथाएँ माना जाता रहा है, फिर भी ये हमें आर्यों की आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी देते हैं।

दो महाकाव्यों में चित्रित की गई संस्कृति समान नहीं थी। अपने वर्तमान रूप में महाकाव्यों के विकास में कई साल लगे। दोनों महाकाव्य मूल रूप से क्षत्रिय साहित्य थे। उनका मुख्य उद्देश्य योद्धाओं के कामों को याद करना था। वैश्य और शूद्र महाकाव्यों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

दोनों महाकाव्यों में, हम वास्तविक इतिहास की झलक पाते हैं। इतिहास के छात्रों के लिए, दो महाकाव्यों का बहुत महत्व है। महाकाव्य की कहानियां अप्रत्यक्ष रूप से भारत के पूर्वजों की राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक स्थिति पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालती हैं।

पुराण

पुराणों में सृष्टि, प्राचीन ऋषि-मुनियों व राजाओं का वर्णन मिलता है। पुराणों की संख्या 18 है। विष्णु पुराण, मत्स्य पुराण, वायु पुराण, ब्रह्मांड पुराण, भागवत पुराण महत्वपूर्ण पुराण हैं। इन पुराणों में राजाओं की वंशावली का उल्लेख मिलता है।

पुराण संस्कृत में लिखे गए हिंदुओं के प्राचीन खंड हैं। वे प्राचीन भारत के इतिहास हैं, क्योंकि उनमें भारतीय ऐतिहासिक परंपरा का सबसे व्यवस्थित प्रमाण है।

इसके अलावा, पुराण प्राचीन राजनीतिक इतिहास पर महत्वपूर्ण आंकड़े देते हैं। उनके पास पहाड़ों, नदियों और स्थानों का लेखा-जोखा है जो ऐतिहासिक भूगोल के अध्ययन के लिए उपयोगी है। वे ब्राह्मणवादी और गैर-ब्राह्मणवादी संस्कृति, परंपराओं और हिंदू धार्मिक प्रथाओं के उद्‌भव और विकास की बातचीत को भी दर्शाते हैं।

धार्मिक साहित्य

धर्मनिरपेक्ष साहित्य प्राचीन भारतीय इतिहास के सबसे महत्वपूर्ण स्रोतों में से एक है। साहित्य में विभिन्न धार्मिक ग्रंथ और संगम साहित्य शामिल हैं।

जैन और बौद्धों की धार्मिक पुस्तकें ऐतिहासिक व्यक्तियों और घटनाओं पर चर्चा करती हैं। प्रारंभिक बौद्ध पाठ पालि में लिखा गया था। बौद्ध साहित्य के मुख्य अंग पिटक और जातक हैं। जातक महात्मा बुद्ध के पिछले जन्म की कहानियों से संबंधित हैं। इसके अलावा, जातक पांचवीं और दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व के बीच त्रिपिटक की रचना बुद्ध के निर्वाण के बाद हुई और इसके तीन भाग हैं -सुत्तपिटक, विनयपिटक, अभिधम्मपिटक। ये उस समय की सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों पर प्रकाश डालते हैं। विनयपिटक बौद्ध संघ के नियमों का वर्णन करता है, अभिधम्मपिटक दार्शनिक शिक्षा का वर्णन करता है।

जैन धर्म साहित्य

जैन ग्रंथ प्राकृत भाषा में लिखे गए थे। जैन लोग जैन धर्म के इतिहास और सिद्धांतों के बारे में जानकारी देते हैं, ये तीर्थंकरों, भिक्षुकों और संघों की जानकारी प्रदान करते हैं। इसके अलावा, यह उनके समय के सांस्कृतिक इतिहास के अन्य पहलुओं पर जानकारी लेने में मदद करता है। जैन धर्म का आगम बहुत महत्वपूर्ण है। इसके 12 अंग, 12 उपांग, 10 प्रकीर्ण और 6 छेद सूत्र हैं।

लौकिक साहित्य

लौकिक साहित्य को तीन भागों में विभक्त किया गया हैं-

1. साहित्य ग्रन्थ
2. ऐतिहासिक ग्रन्थ
3. संगम साहित्य

साहित्य ग्रंथ

कुछ प्राचीन ऐतिहासिक साहित्य ग्रंथ इतिहास की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं। पतंजलि का महाभाष्य शुंग वंश की जानकारी देता है। पाणिनी के अष्टाधायी में मौर्य वंश का वर्णन

मिलता है। इसी प्रकार विल्हण का विक्रमांक देव चालुक्य वंश के सम्राट विक्रमांक देव की प्रशंसा में लिखा गया था। कालिदास के मालविकाग्निमित्र से शुंगकालीन भारत की राजनीतिक दशा का वर्णन मिलता है। विशाखदत्त के मुद्राराक्षस नाटक से नंद वंश के अंतिम काल और मौर्य वंश के प्रारंभिक काल के दर्शन होते हैं। दंडी के दशकुमारचरितम् से बौद्ध धर्म की सातवीं शताब्दी में अवनति के चित्र मिलते हैं।

ऐतिहासिक ग्रंथ

ऐतिहासिक ग्रंथों में सबसे महत्वपूर्ण है कौटिल्य का अर्थशास्त्र। यह पुस्तक प्राचीन भारतीय राजनीति और अर्थव्यवस्था के अध्ययन के लिए विशेष रूप से मौर्य युग के दौरान समृद्ध सामग्री देती है।

संस्कृत व्याकरण संबंधी कार्य पाणिनि की अष्टाध्यायी से शुरू होता है। यह ग्रन्थ जनपदों के बारे में बहुत अधिक जानकारी देता है। इसके अलावा भास, शुद्रक, कालिदास और बाणभट्ट का कार्य भी शामिल है।

साहित्यिक महत्व के अलावा, यह उस समय की स्थिति को भी दर्शाता है जिससे वे संबंधित थे। कालिदास के कार्य में काव्य और नाटक शामिल हैं। कालिदास का सबसे प्रसिद्ध खगोलीय कार्य अभिज्ञानशाकुंतलम्, आर्यभट्ट की आर्यभटीय और वराहमिहिर की वृहतसंहिता है।

संगम साहित्य

दक्षिण भारत के इतिहास के सम्बन्ध में संगम साहित्य से जानकारी मिलती है। सबसे पहला साहित्य तमिल और संस्कृत रचित ग्रंथों के एक समूह द्वारा प्रस्तुत किया गया है। इसे सामूहिक रूप से संगम के साहित्य के रूप में जाना जाता है। संगम साहित्य में चोल, चेर और पाण्ड्य शासनकाल की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक व्यवस्था के दर्शन होते है। नन्दिकलम्बकम्, चोलचरित और कलिंगतुपर्णी आदि से ऐतिहासिक जानकारी उपलब्ध होती है।

2 विदेशी स्रोत

विदेशी स्रोत विदेशी लेखकों के खाते या प्रमाण हैं। विशेष रूप से, रोमन और यूनानी लेखकों ने भारत और उसके लोगों के बारे में बहुत कुछ लिखा है।

विदेशी यात्रियों जैसे कि ग्रीक, रोमन और चीनियों ने भारत भ्रमण किया और उस समय की सामाजिक, आर्थिक स्थितियों और संस्कृति का आँखों देखा वर्णन किया।

विदेशी साहित्यिक स्रोतों को तीन भागों में बांट सकते हैं –यूनानी व रोम के लेखक, अरब के लेखक व चीनी लेखक। रोम व यूनानी लेखक हेरोडोटस व टिटियस यूनानी लेखकों में सबसे महत्वपूर्ण हैं। हेरोडोटस ने हिस्टोरिका नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक द्वारा भारत और फ्रांस के संबंध में प्रकाश डाला गया। हेरोडोटस को इतिहास के पिता के रूप में जाना जाता है। यूनानी शासक सिकंदर के साथ काफी यूनानी लेकर भारत आए जिनमें से नियाकर्स, अनासिक्रटस, अरिस्टोबुल्स के वृत्तांत महत्वपूर्ण हैं। अरिस्टोबुल्स ने 'हिस्ट्री आफ द वार' पुस्तक लिखी और अनासिक्रटस ने सिकंदर की जीवनी लिखी।

मैगस्थनीज, डायमेकस और डाइनोसियस का योगदान भी महत्वपूर्ण है। मौर्यवंश का सामाजिक, प्रशासनिक और सांस्कृतिक दर्शन मैगस्थनीज द्वारा लिखित प्रसिद्ध पुस्तक 'इंडिका' में मिलता है।

प्लिनी द्वारा भारत की वनस्पति, पशुओं, खनिजों व इटली तथा भारत के संबंधों आदि का वर्णन प्लिनी द्वारा रचित पुस्तक 'नेचुरल हिस्टोरिका' में मिलता है। टॉलमी की 'जियोग्राफी' और प्लूटो और स्ट्राबो द्वारा रचित पुस्तकों में भी भारत के विभिन्न पहलुओं के दर्शन होते हैं।

टिप्पणी

चीनी लेखक

चीनी लेखक मुख्यत: बौद्ध धर्म के अध्ययन के लिए भारत आए और उनकी यात्राएं धर्म द्वारा प्रेरित होती थीं। भारत आने वाले मुख्य यात्रियों में फाह्यान, ह्वेनसांग आदि थे। फाह्यान चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासन काल में भारत आये और उनकी पुस्तक 'फो क्यू की' में भारतीय संस्कृति, समाज और अर्थ व्यवस्था के दर्शन होते है। ह्वेनसांग हर्षवर्धन के शासन काल में भारत आया और उसने उस समय की सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था पर प्रकाश डाला। तिब्बती लेखक तारानाथ ने भी 'कंग्युर' 'तंग्युर' में भारत के इतिहास पर प्रकाश डाला है।

इत्सिंग

इत्सिंग 613-713 ईसवी के समय भारत आया। उसने नालंदा एवं विक्रमशिला विश्वविद्यालय तथा उस समय के भारत की समाज की तस्वीर प्रस्तुत की।

अरबी यात्री

अरबी यात्री और इतिहासकार आठवीं शताब्दी के उपरांत भारत की ओर आकर्षित हुए और अरब यात्रियों के यात्रा वृत्तांत भारतीय इतिहास की दृष्टि से विशेष महत्व रखते हैं। अरब यात्रियों में अलबरूनी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। 'किताब - अल - हिन्द' नामक ग्रंथ में उन्होंने हिन्दुओं की आस्थाओं और विश्वास का वर्णन किया। उन्होंने इस पुस्तक में हिन्दू साहित्य, व्याकरण, छंद, शतरंज आदि का वर्णन किया। इसके अतिरिक्त सुलेमान भारत आया और उसके वृत्तांत में पाल और प्रतिहार राज्यों की जानकरी मिली। अलमसूदी दशवीं शताब्दी में मध्य भारत में आया और उसने राष्ट्रकूट राजाओं का वर्णन किया।

प्राचीन काल की महत्वपूर्ण पुस्तकें व उनके लेखक

पुस्तक का नाम	**लेखक**
बुद्धचरित	अश्वघोष
महाविभाशास्त्र	वसुमित्र
कामसूत्र	वात्स्यायन
मेघदूत	कालिदास
नाट्यशास्त्र	भरतमुनि
सूर्यसिद्धांत	आर्यभट्ट

वृहतसंहिता	वराहमिहिर
पंचतंत्र	विष्णु शर्मा
रत्नावली	हर्षवर्धन
पृथ्वीराज रासो	चंदबरदाई
मालतीमाधव	भवभूति
गीतगोविन्द	जयदेव
कादंबरी	बाणभट्ट

टिप्पणी

3. पुरातात्विक स्रोत

प्राचीन भारतीय इतिहास के संदर्भ में पुरातत्व संबंधी सामग्री को चार भागों में विभाजित किया जाता है।

पुरातात्विक स्रोतों में सभी मूर्त, भौतिक अवशेष शामिल हैं। अतीत के सभी अवशेषों में साहित्यिक पांडुलिपियां शामिल हैं। कुछ प्रकार के पुरातात्विक स्रोत शिलालेखों, सिक्कों पर आधारित होते हैं, और उन चित्रों को अंकित करते हैं जिनसे भौतिक वस्तुओं और ग्रंथों दोनों पर विचार किया जा सकता है।

खुदाई से प्राप्त सामग्री

पुरातात्विक स्रोत के अंतर्गत मानव अवशेषों का अध्ययन भौतिक अवशेषों के माध्यम से होता है जो इतिहास से जुड़ते हैं। टूटी-फूटी मिट्टी के बर्तनों जैसे रोजमर्रा के मानवीय क्रियाकलापों में इस्तेमाल होने वाले उत्पादों से लेकर यह सामग्री महलों और मंदिरों के अवशेषों तक है। इनमें संरचना, कलाकृतियां, हड्डियां, बीज, पराग, मुहरें, सिक्के, मूर्तियां और शिलालेख जैसी विभिन्न चीजें शामिल हैं।

पुरातत्व साइटों की खोज और उत्खनन पुरातत्व से संबंधित हैं। अवशेषों का प्रमुख हिस्सा टीले में दफन होता है। खुदाई क्षैतिज हो सकती है (यह एक बड़े सतह क्षेत्र को उजागर करता है) या ऊर्ध्वाधर (जहां खुदाई में एक छोटी सतह शामिल है)। खुदाई में सावधानीपूर्वक रिकॉर्डिंग, मैपिंग, फोटोग्राफिंग, लेबलिंग और कलाकृतियों का संरक्षण शामिल है। अवशेषों का पता लगाने के लिए, वे विभिन्न वैज्ञानिक तकनीकों को लागू करते हैं।

इस प्रकार पुरातात्विक स्रोत हमें पिछले समुदायों के जीवन के बारे में सटीक डेटा प्राप्त करने में मदद करते हैं। इसके अलावा, पुरातात्विक सामग्री डेटिंग सामग्री में उपयोगी सामग्री बन गई। कार्बन -14 या रेडियोकार्बन डेटिंग सबसे अच्छा ज्ञात डेटिंग तरीका है।

स्मारक

स्मारक प्राचीन भारतीय इतिहास के महत्वपूर्ण स्रोत हैं जो हमें भारत के प्राचीन इतिहास का अध्ययन करने में मदद करते हैं। ये स्मारक विभिन्न रूपों में हैं जो भारत की प्राचीन संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हैं। देशी स्मारकों में प्रमुख स्मारक तक्षशिला, मथुरा, कोसम, सारनाथ, पाटलिपुत्र, राजगिरी, झांसी, नालंदा आदि स्थानों पर मौजूद हैं। तक्षशिला क्षेत्र की खुदाई से प्राप्त मार्गों से कुषाण कालीन तिथि की जानकारी मिलती है। इसी प्रकार हड़प्पा, मोहनजोदड़ो में खुदाई से हिंदू घाटी के 5,000 वर्ष पुरानी सभ्यता की जानकारी मिलती है।

अभिलेख

टिप्पणी

प्राचीन भारत में राजनीतिक इतिहास के पुनर्निर्माण में अभिलेखों का विशेष महत्व है। इसमें इतिहास की अनेक कड़ियों को जोड़ने में सहायता मिलती है। अभिलेखों के माध्यम से विद्वानों ने जानकारी एकत्रित की। इतिहास जानने के ये विश्वसनीय स्रोत हैं। ये अभिलेख पत्थर की शिलाओं, स्तंभों, ताम्रपत्रों, मूर्तियों व भवनों की दीवारों पर खुदे हुए [redacted] अभिलेखों की लिपि ब्राह्मी है जो देवनागरी व उत्तर भारत की अन्य लिपियों की जननी है। इसके साथ ही अभिलेख खरोष्ठी लिपि में भी लिखे जाते थे।

मुद्राएं

भारत के इतिहास लेखन में मुद्राओं, सिक्कों व मोहरों का बड़ा महत्व है। भारत के विभिन्न भागों से विभिन्न प्रकार की मुद्राएं प्राप्त हुईं। 2600 ईसा पूर्व से 300 ईसा पूर्व तक का इतिहास मुद्राओं से प्राप्त जानकारी के आधार पर लिखा गया है। भारतीय मुद्राओं पर देवताओं के चित्र होते थे। राजाओं के चित्र व तिथि आदि नहीं होती थी। भारत के उत्तर-पश्चिम में यूनानी राजाओं ने जब भारत पर शासन किया तो उनके संपर्क में आकर भारतीय राजाओं ने भी सिक्कों पर अपने चित्र और तिथियां अंकित करवानी प्रारम्भ की।

अपनी प्रगति जांचिए

1. निम्न में से भौगोलिक ज्ञान प्रदान करने वाले भारतीय स्रोत कौन–सा हैं?
   (क) साहित्यिक स्रोत (ख) पुरातात्विक स्रोत
   (ग) क, ख, दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं।
2. निम्न में से कौन सा प्राचीन भारतीय साहित्य भौगोलिक ज्ञान प्राप्ति का एक स्रोत है?
   (क) वेद, उपनिषद
   (ख) रामायण, महाभारत
   (ग) पुराण, जैन तथा संगम साहित्य
   (घ) उपर्युक्त सभी।

5.3 ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति

ब्रह्मांड की उत्पत्ति के विषय में न केवल आम व्यक्ति बल्कि वैज्ञानिकों को भी कौतूहल रहा है क्योंकि कोई भी सिद्धांत इसके सृजन को स्पष्ट नहीं कर सका है। मनुष्य की ज्ञान की खोज की प्रवृति के कारण ही बहुत से सिद्धांतों का जन्म हुआ और पृथ्वी तथा ब्रह्माण्ड के विषय में प्रारंभिक ज्ञान हमें अपने प्राचीन ग्रंथों से मिलता है। ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति कैसे हुई यह सिर्फ एक कल्पना है। इस विषय में हमारे धार्मिक ग्रंथों में विभिन्न तर्क दिये गए हैं। लेकिन ब्रह्माण्ड की रचना की परतें खुलनी बाकी हैं।

टिप्पणी

ब्रह्माण्ड एवं पृथ्वी की उत्पत्ति के सिद्धांत

ब्रह्माण्ड विज्ञान में ब्रह्माण्ड का वर्णन किया जाता है। इसमें ग्रहों, उपग्रहों, सूर्य, नक्षत्रों, निहारिकाओं, उल्काओं, धूमकेतुओं का वर्णन किया जाता है। ब्रह्माण्ड के सृजन की क्रिया का वर्णन ब्रह्माण्ड उत्पत्ति सिद्धांत (Cosmogony) कहलाता है।

भारतीय सनातन साहित्य में सृष्टि की उत्पत्ति को लेकर जो बातें कही गई हैं, वे वैज्ञानिकों ने 'बिग-बैंग' सिद्धांत में मानी हैं।

बिग बैंग सिद्धांत विज्ञान की भाषा में लिखा गया है जबकि सनातन साहित्य में इसे धार्मिक शब्दावली में लिखा गया है पर दोनों का अर्थ समान ही है। बिग बैंग सिद्धांत को ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का सबसे प्रमाणिक सिद्धांत माना गया है। इसके अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति बिग बैंग यानी महाविस्फोट से हुई थी। वैज्ञानिकों का मानना है कि आज से लगभग तेरह सौ करोड़ वर्ष पूर्व पूरा ब्रह्माण्ड एक बिंदु में समाहित था और इस गर्म बिंदु में हुए विस्फोट से उसका हर कण फैलता गया और यूनिवर्स बनता गया और आज भी यह क्रम जारी है। विज्ञान इस महाविस्फोट से पहले किसी अन्य गतिविधि से इंकार करता है, लेकिन भारतीय धार्मिक ग्रंथ इस बारे में विज्ञान से एक कदम आगे हैं। भारतीय दर्शन ने लगभग इससे मिलता जुलता सिद्धांत दुनिया के सामने रखा था बल्कि यह भी स्पष्ट किया कि सृष्टि की उत्पत्ति से पहले भी समय और द्रव्यमान का अस्तित्व था।

ऋग्वेद (10.129.1) के नासदीय सूक्त में कहा गया है–

सृष्टि की उत्पत्ति से पहले एक सर्वशक्तिमान परमेश्वर मौजूद था। उस समय न तो आकाश का अस्तित्व था न ही गुणों का।

ऐतरेय उपनिषद में कहा गया है कि सृष्टि के आरम्भ में एकमात्र आत्मा विराट ज्योतिर्मय स्वरूप में विद्यमान थी और यही बात बिग बैंग सिद्धांत मानता है कि सृष्टि के आरम्भ में सिर्फ एक अति संघनित गर्म गोला मौजूद था।

ऋग्वेद (10.129.2) सृष्टि की उत्पत्ति से पहले न जन्म था न मृत्यु, न दिन था न रात, सब मुक्त अवस्था में था। इस श्लोक में यह भी कहा गया कि सृष्टि की शुरुआत में ब्रह्माण्ड की सारी ऊर्जा एक केंद्र में समाहित हो गई थी।

तैत्तिरीय उपनिषद का मानना है कि उस ज्योतिस्वरूप परमात्मा (जिसे विज्ञान ऊर्जा पिंड कहता है) में एक से अनेक होने की कामना पैदा हुई। विज्ञान मानता है कि उस ऊर्जा पिंड में अचानक विस्फोट की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। लेकिन कैसे? उस ऊर्जा पिंड जो अनंतकाल से एक था, ऐसी इच्छा उत्पन्न कैसे हुई? वेद मानते हैं कि उस पिंड में ईश्वरीय चेतना थी, जिसके चलते उस पिंड में अनेक होने की इच्छा जागृत हुई। यही परमात्मा की पहली इच्छा कहलाती है।

इस पिंड को शैव दर्शन में परम शिव कहा जाता है। इस पिंड का आकार ठीक वैसा ही था जैसा कि शिवलिंग का आकार है। इस पिंड को वेदों में हिरण्यगर्भ (सोने का अंडा) कहा गया, वह जिससे सारी सृष्टि जन्मी।

सवाल उठता है कि क्या वह पिंड सिर्फ ज्योतिर्मय चेतना थी? स्थूल कण का समूह था या ऊर्जा का अति संघनित रूप? विज्ञान मानता है कि यह सब कुछ पदार्थ से पैदा हुआ। वेद कहते हैं कि सब चेतनात्मक स्पंद से पैदा हुआ। व्यावहारिक यह है कि मानव में स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर होते हैं, उसी प्रकार एक मात्र ब्रह्मपिंड में भी तीनों

शरीर थे - स्थूल, सूक्ष्म और कारण। इनके ऊपर भी एक परम कारण शरीर था जिसे आज विज्ञान गॉड पार्टिकल कहता है।

टिप्पणी

वेद कहते हैं कि उस पिंड रूपी ब्रह्म का पहला ज्ञान था खुद के एक होने का, कि मैं तो सिर्फ एक हूँ, मेरे एक होने में कोई आनंद नहीं। एक से अधिक होने की इच्छा से ही क्रिया का प्रारंभ हुआ और उस क्रिया के फलस्वरूप वह पिंड एक से अनेक होकर सृष्टि के निर्माण का कारण बना। क्योंकि सभी कण उसी पिंड से निकले इसीलिए कण-कण में भगवान हैं, ऐसा कहा गया।

ऋग्वेद (10.72.2) के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति परमेश्वर ने इस प्रकार की है–

उन पिंड-रूपी परम शिव हिरण्यगर्भ ने सम्पूर्ण द्रव्य/पदार्थ को अपने ताप से झोंका और उसी ताप से पदार्थ पूरे आकाश में बिखर गया। इसी को वैज्ञानिकों ने महा विस्फोट (बिग बैंग) कहा है। वेद कहते हैं अव्यक्त व असत् पदार्थों से ही व्यक्त व सत् जगत की उत्पत्ति हुई।

तैत्तिरीयोपनिषद् में सृष्टि उत्पत्ति का क्रम भी बताया गया है-

परम पुरुष परमात्मा से पहले आकाश, फिर वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी उत्पन्न हुई है। पृथ्वी से औषधियाँ, (अन्न व फल फूल) औषधियों से वीर्य और वीर्य से मनुष्य उत्पन्न हुए।

यदि हम उस पिंड से पहले की स्थिति पर विचार करें तो जो ज्ञान मार्ग हमें बताता है कि इस पिंड से पहले ब्रह्मांड की सारी ऊर्जा छोटे-छोटे कणों के रूप में पूरे आकाश में बिखरी हुई थी। धीरे-धीरे सारी ऊर्जा किसी खास आकर्षण में बंधकर संघनित/एकत्रित होने लगी। यह समझ लीजिए कि पूरी दुनिया की रचना जिन कणों और ऊर्जा के कारण संभव हुई, वह एक छोटी सी गेंद जैसी चीज में समाए हुए थे।

अनंत काल तक यह पिंड एक ही अवस्था में रहा लेकिन एक दिन इस परम शिव में संसार को रचने की इच्छा उत्पन्न हुई, यही दुनिया के रचनाकार हैं जिसने इस पिंड रूपी ऊर्जा को इस तरह विभाजित किया कि कुछ ही क्षणों में अनेक ब्रह्मांड, ब्रह्मांड में गैलेक्सी, गैलेक्सी में सौर मंडल जैसे अनेक मंडल बन गए और सब कुछ व्यवस्थित रूप में आकार लेते चले गए।

विज्ञान कहता है कि बिग बैंग या महाविस्फोट के इस धमाके के मात्र 1.43 सेकंड समय के बाद ही, अंतरिक्ष की मान्यताएं अस्तित्व में आ चुकी थीं। भौतिकी के नियम लागू होने लगे थे। 1.34 वें सेकंड में ब्रह्मांड 1+30 गुणा फैल चुका था और अब क्वार्क, लैप्टान और फोटोन का गर्म द्रव्य बन चुका था। 1-4 सेकंड क्वार्क मिलकर प्रोटॉन और न्यूट्रॉन बनाने लगे, ब्रह्मांड अब कुछ ठंडा हो चुका था। हाइड्रोजन, हीलियम आदि की शुरुआत होने लगी और तत्व बनने लगे थे। विज्ञान इस सारी घटना को सिर्फ पदार्थ की क्रिया-प्रतिक्रिया मानता है लेकिन वेदों के अनुसार इन सारी क्रिया-प्रतिक्रियाओं के पीछे जो शक्ति काम करती है वही शक्ति तो निराकार ब्रह्म है।

बाद में विज्ञान ने इसी शक्ति को हिग्स बोसोन (गॉड पार्टिकल) कहा। गॉड पार्टिकल के कारण ही क्वार्क आपस में मिलकर इलेक्ट्रॉन, न्यूट्रॉन और प्रोटॉन बनाते हैं। भारतीय वैज्ञानिक सत्येन्द्र बोस ने गॉड पार्टिकल की मौजूदगी बताई थी इसलिए इस पार्टिकल के नाम में उनके सरनेम बोस को भी जोड़ा गया। इलेक्ट्रॉन, न्यूट्रॉन और प्रोटॉन

टिप्पणी

मिलकर एटम बनाते हैं। हमारे ब्रह्मांड में मौजूद सभी चीजें एटम से मिलकर बनी हैं। विज्ञान के सिद्धांत के मुताबिक, बिग बैंग के तुरंत बाद किसी भी कण में कोई वजन नहीं था। जब ब्रह्मांड ठंडा हुआ और तापमान एक निश्चित सीमा के नीचे गिरता चला गया तो शक्ति का एक क्षेत्र पूरे ब्रह्मांड में बनता चला गया। उस क्षेत्र के अंदर बल था और उसे हिग्स क्षेत्र के नाम से जाना गया। उन क्षेत्रों के बीच कुछ कण थे जिनको पीटर हिग्स के सम्मान में हिग्स बोसान के नाम से जाना गया। इसे ही गॉड पार्टिकल भी कहा जाता है। उस सिद्धांत के मुताबिक, जब कोई कण हिग्स क्षेत्र के प्रभाव में आता है तो हिग्स बोसान के माध्यम से उसमें वजन आ जाता है।

विज्ञान पहले कहता था कि जड़ से चेतन की उत्पत्ति होती है। आज क्वांटम सिद्धांत में यह माना जाने लगा है कि हर कण में चेतना है। चाहे उन कणों से बनी आकृति जड़ या निर्जीव नजर आए। यानी निर्जीव में भी जीवन की (वेदों में अभिव्यक्त) बात अब प्रमाणित होने जा रही है। इतने बड़े विश्व की रचना करने वाले को भारतीय दर्शन में निराकार, सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान कहा गया है। 'सर्वशक्तिमान' जिसमें अनन्त शक्ति है, सामर्थ्य असीम है, वह उसी सामर्थ्य से जड़ प्रकृति को प्रेरित करता है, उसकी अनन्त सामर्थ्ययुक्त व्यवस्था सूक्ष्म अति सूक्ष्म तत्वों में हर जगह व्याप्त है।

हम खुद उस ब्रह्म का स्वरूप हैं। हमारा शरीर जड़ है लेकिन हमारे अंदर एक ऐसी चेतना काम कर रही है, जो हमारे मन की मोहताज नहीं है। हम सोचें या न सोचें हमारी सांस चलती रहेगी, हमारा प्रत्येक अंग काम करता रहेगा, भले हम होश में न रहें।

बिना कारण के कोई कार्य नहीं होता, इसी तरह बिना कारण रूपी ईश्वर के कार्य रूपी संसार की रचना असंभव है। सत्व, रज, तम, इच्छा, क्रिया, ज्ञान, इलेक्ट्रोन प्रोटोन, न्यूट्रॉन, इन सब शक्तियों के पीछे कौन है? वही एक ईश्वर है।

विश्व बनने की प्रक्रिया का अभिप्राय यह है कि ब्रह्मांड के समस्त पिंड एक ही प्रकार के आदि पदार्थ या विश्व पदार्थ से बने हैं परंतु ये सभी एक साथ नहीं बने बल्कि इन भिन्न-भिन्न रूपों का विकास आदि पदार्थ की विभिन्न अवस्थाओं में होता है।

(ऋग्वेद 10/121/1)सृष्टि के आदि में न सत् था ना असत्, न प्रकाश था न वायुमंडल, न दिन था, न रात थी। केवल ब्रह्म की ही सत्ता थी। ब्रह्म स्वयं अद्‌भुत है, अनादि है। ब्रह्मा ने सृष्टि के सृजन का संकल्प लिया। फलस्वरूप परमतेज से ज्ञान तथा सत्य की उत्पति हुई और उसके बाद आकाश बना, आकाश में परमाणु की सृष्टि हुई और इन परमाणुओं के स्थूल होने पर पदार्थ की रचना हुई।

विराट पुरुष ही समस्त विश्व की परम आत्मा है; वही समस्त विश्व का केंद्रक है; वही समस्त विश्व की आत्मा का विराट शरीर है; उसी से पृथ्वी, आकाश, पवन, सूर्य, चंद्रमा, मनुष्य, जंतु और समस्त पार्थिव तत्वों की उत्पत्ति हुई।

ब्रह्माण्ड के सर्जन के लिए जिस पदार्थ का प्रयोग किया जाता है वह विश्वधूलि होती है। ईश्वर की सृष्टि निर्माणकर्ता शक्ति यानी विश्वकर्मा के द्वारा ही तीनों लोकों; पृथ्वी, अंतरिक्ष, द्युलोक और मनुष्यों, सभी जीव-जंतुओं का निर्माण होता है।

वर्तमान में रहने वाले स्वयंभू परमेश्वर ने विश्व की रचना करने के लिए पहले प्रजापति को बनाया। प्रजापति को हिरण्यगर्भ भी कहा जाता है। उस सर्वत्र व्यापक प्रजापति

टिप्पणी

के तेज से द्यूलोक या ज्योतिलोक (Heaven) और पृथ्वी की रचना हुई। पृथ्वी ग्रह के रूप में सूर्य से उत्पन्न हुआ और सूर्य की आकर्षण शक्ति के कारण पृथ्वी एक निश्चित दूरी और कक्षा में अपने अक्ष पर भ्रमण करती हुई सूर्य की परिक्रमा करती है। इन तथ्यों का वर्णन वेदों के बहुत से सूक्तों के मंत्रों में किया गया है। ब्रह्मांड से पृथ्वी की स्थिति व नक्षत्र पुंजों, सप्तऋषि तारों, उलकाओं, सौर वर्ष, चंद्र वर्ष, सौर मासों आदि के वर्णन वेदों और उपनिषदों में पाए गए हैं।

भारतीय प्राचीन साहित्य में सृष्टि को ब्रह्मांड कहा गया, इसका बखान नहीं किया जा सकता क्योंकि इसका विस्तार अनंत है। इसे पुराण और महाकाव्य में सात ऊपर के खंडों में और साथ ही अध:खंडों में विभक्त किया। पृथ्वी की उत्पत्ति के विषय में उपनिषदों में कहा गया है कि आरंभ में सर्वत्र प्रलय ने सबको व्याप्त कर लिया और जल ही जल दूर तक फैल गया। इस प्रलय की पूजा की गई और निवेदन करने पर भूमि प्रकट हुई और पुराणों के अनुसार उस काल में न दिन था, न रात थी, न प्रकाश था, न अंध कार था। शून्यता के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था।

आधुनिक वैज्ञानिकों के मत से मेल न रखते हुए प्राचीन भारतीय ज्योतिषियों की ब्रह्मांड के बारे में धारणा थी कि वह भूकेंद्रित था। ऋग्वेद में सूर्य, चंद्रमा, पांच ग्रहों और 37 नक्षत्र पुंजों एवं 34 आकाश पिंडों का वर्णन मिलता है। पांच ग्रहों को पांच देवों के समान माना गया। पौराणिक काल के ज्योतिषियों ने नौ ग्रहों का उल्लेख सूर्य, चंद्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु व केतु के रूप में किया। प्राचीन उत्कृष्ट साहित्य में कुछ ग्रहों की खगोलीय–भौतिकीय प्रकृति का वर्णन किया गया है। बुध को हरा, शुक्र को सफेद, मंगल को लाल, बृहस्पति को पीला, शनि को काले वर्ण द्वारा वर्णित किया गया है।

अपनी प्रगति जांचिए

3. ब्रह्मांड की उत्पत्ति के विषय में किस उपनिषद का मानना है कि "उस ज्योतिस्वरूप परमात्मा (जिसे विज्ञान ऊर्जा पिंड कहता है) में एक से अनेक होने की कामना पैदा हुई?"
   (क) तैतिरीय उपनिषद
   (ख) ऐतरेय उपनिषद
   (ग) मुण्डक उपनिषद
   (घ) कठ उपनिषद
4. ब्रह्मांड की उत्पत्ति के संदर्भ में किस प्राचीन भारतीय तत्व (दर्शन) के अनुसार "ऊर्जा पिंड (परम शिव) का आकार शिवलिंग जैसा है। इसे वेदों में हिरण्यगर्भ कहा गया, जिससे सारी सृष्टि जन्मी।"
   (क) तत्व (हिंदू धर्म) (ख) तत्व (शैव दर्शन)
   (ग) सोमानंद (घ) घेरण्ड संहिता

5.4 समन्वय प्रणाली और भौतिक भूगोल

टिप्पणी

भारतीय विद्वानों ने यूनानियों की अपेक्षा बहुत पहले ही खगोलीय पिंडों का भी शोध करना आरंभ कर दिया था। वरिष्ठ सिद्धांतों में गतिस्थिति के विवेचन से प्रकट होता है कि भारतीय प्राचीन विद्वान खगोलीय पिंडों का अवलोकन करके उनकी अवस्थिति लिख देते थे। बार-बार अवलोकनों से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर नियम बनाया करते थे। भारत में खगोलीय विज्ञान भूगोल में गणित के प्रमुख सिद्धांत, प्रक्रियाएं मौलिक थीं। वर्षमान, ग्रह मध्य गति, मंदोच्च और पात, मंदकण विक्षोभों के मान, अयन चलन, अधिवृत, उदयस्त कलांश आदि भारतीयों ने अपने ही देश में विकसित किए थे। ब्रह्मगुप्त और भास्कर के सिद्धांत ग्रंथों में इनका वर्णन है।

भौतिक भूगोल (Physical Geography)

भारतीय विद्वानों को पृथ्वी, अंतरिक्ष, ग्रहीय पिंड, राशियों, कलमान, सूर्य ग्रहण, चन्द्र ग्रहण, अक्षांश, देशांतर, दिशाओं आदि की जानकारी थी।

वेदों, उपनिषदों, पुराणों आदि में भौतिक भूगोल के भूआकृतिक एवं जलवायु के तत्वों का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद के नदी सूक्त में सारे मंत्रों में नदियों का वर्णन किया गया है। गंगा, यमुना, सरस्वती, शुतुद्री, परुषणी, आसिकन, आर्जीकीया, वितस्ता और मरुदवृधा आदि नदियों का वर्णन ऋग्वेद में मिलता है। परिलेखन ज्ञान, प्रक्षेप, सर्वेक्षण, शुल्वसूत्र और तत्सम्बन्धी विविध प्रकार के यंत्रों के निर्माण एवं ज्ञान का आभास प्राचीन पुस्तकों में मिलता है यह कला रोमनों से पहले ऋग्वेद (4000 ई. पू. से 1500 ई. पू.) बौधायन (800 ई. पू) में उल्लेखित है। भारतीय लोग मानचित्रों के निर्माता ही नहीं बल्कि कुशल उपयोग भी करते थे।

सूर्यसिद्धांत के अनुसार गोलक पर अक्षांश, देशान्तर, क्रांति, विषुवत आदि को अंकित करने की रीतियाँ बताई गई हैं। इसी पुस्तक में यह बताया गया है कि जल द्वारा तलमापन किया जाता था।

1. पृथ्वी का ज्ञान

भूगोल के अध्ययन में पृथ्वी की अवधारणा सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है। प्राचीन भारतीय भूगोल में ''साहित्य में भूगोल'' से अभिप्राय पृथ्वी की गोलाकार आकृति से है। ऐतरेय ब्राह्मण में पृथ्वी की गोलाकार आकृति की कल्पना करते हुए कहा गया है कि सूर्य न उदय होता है न अस्त होता है। दिन के अंत में गोलाकार पिंड पृथ्वी के दूसरी तरफ चला जाता है तो इस तरफ रात और दूसरी तरफ दिन होता है। उसका प्रमाण चंद्र ग्रहण के अवसर पर पृथ्वी की छाया चन्द्रमा पर आने से मिलता है कि पृथ्वी गोलाकार आकृति में है। पृथ्वी चपटी गोलाभ है जो ध्रुवों पर समतल है। प्राचीन भारत में खगोलीय भूगोल की सबसे अधिक प्रगति गुप्त काल में, ईसा की चौथी, पांचवीं और छठी शताब्दी में हुई। इस काल में प्रथम महत्वपूर्ण खगोलवेत्ता आर्यभट्ट (476 ई.) थे। उन्होंने पृथ्वी को गोलाकार पिंड बताया और पृथ्वी की परिधि लगभग शुद्ध 2,835 मील बताई और चंद्र ग्रहण का कारण चंद्रमा पर पृथ्वी की छाया पड़ना बताया। आर्यभट्ट के बाद दूसरा सबसे प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता वराहमिहिर (505-587 है। उन्होंने पंचसिद्धांतिका नामक ग्रंथ की महत्वपूर्ण रचना की है।

टिप्पणी

12 राशियां ध्रुवतारे के चारों ओर भ्रमण करती हैं। समस्त नभ मंडल में जो तारकगणों का राशि चक्र है, उनमें से 12 मुख्य तारक पुंज हैं, जिनको 12 राशियां कहा जाता है। इनके नाम मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ, और मीन हैं। इन नक्षत्र राशियों और ग्रीक विद्वानों द्वारा निश्चित राशियों में समानता है। जिस समय अवधि में सूर्य एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश करता है वह सूर्य मास कहलाता है और राशि में सूर्य के प्रवेश काल को संक्रांति कहते हैं। 12 राशियों में सूर्य की एक स्थिति पूर्ण हो जाने पर एक सौर वर्ष कहलाता है। समस्त राशि चक्र में 28 मुख्य नक्षत्र होते हैं।

ग्रहण

प्राचीन काल में भारतीय विद्वानों का ध्यान ग्रहणों के कारणों की ओर आकृष्ट हुआ। इस ज्ञान के आधार पर रीति-रिवाज व त्योहार भी निश्चित किए जो ग्रहण पर आयोजित होते हैं और ग्रहण लगने की क्रिया को अशुभ माना गया। वे ग्रहण को आपदा का सूचक मानते थे। यदि सूर्य व चंद्र ग्रहण एक ही मास में घटित होते हैं तब अधिक विनाशकारी होते हैं। वराहमिहिर ने ग्रहणों के प्रभाव की व्याख्या महीनों के अनुसार की और इस बात पर जोर दिया कि पौस में लगने वाले ग्रहण से अकाल की संभावना बनती है। परंतु अप्रैल, मई में ग्रहण से अच्छी वर्षा की संभावना होती है। फाल्गुन और आषाढ़ में ग्रहण भी अशुभसूचक होते हैं।

भारतीय कालमान

कालमान पृथ्वी की घूर्णन गति पर आधारित होता है। पृथ्वी, सूर्य, चंद्रमा आदि की आकृति क्योंकि गोल है इसलिए उनके आकारों की नाप को वृत्त के अंशों में व्यक्त किया जाता है। प्रत्येक अंश में 60 भाग या मिनट और प्रत्येक भाग में 60 विभाग अथवा सेकंड होते हैं। प्रत्येक अंश के 60 भाग (कला) और कला के 60 विभाग (विकला) की प्रणाली मूलत: भारतीय है। इस प्रणाली के अनुसार काल को भी 60 द्वारा विभाजित किया जाता है। पृथ्वी अपने अक्ष पर घूर्णन करती है, जिसके कारण ही दिन-रात बनते हैं। भारतीय काल में प्रत्येक दिन रात का 24 घंटों का समय = 60 घटी के समान होता है। कालमान इस प्रकार है :- 60 लीक्षक =1 विपल; 60 विपल = 1पल; 60 पल = 1 घटी; 60 घटी = 1 अहोरात्रि; 291/2 दिन-रात =1 चन्द्र मास; 354 दिन-रात = 1 चन्द्र वर्ष तथा 3651/4 दिन-रात = 1 सौर वर्ष।

चंद्रमा की कलाओं को भी शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष में बांटा जाता है। बढ़ते हुए चन्द्रमा को शुक्ल पक्ष और घटते हुए चन्द्रमा की कला को कृष्ण पक्ष कहते हैं और दोनों में 14-15 दिन का अंतराल होता है। एक पूर्णिमा से दूसरी पूर्णिमा तक की अवधि को चन्द्र मास कहते हैं। 12 चन्द्र मासों से एक चन्द्र वर्ष बनता है और यह सौर वर्ष से लगभग 111/4 दिन छोटा होता है। सौर वर्षों से तालमेल बिठाने के लिए तीन वर्ष में एक चन्द्र मास को बढ़ाया जाता है, जिसे अधिक मास या लोंद का महीना कहा जाता है।

नदियों का वर्णन

ऋग्वेद में अफगानिस्तान से गंगा-यमुना तक और पामीर हिमालय से कच्छ तक के प्रदेश को कुंभ कुंभा (काबुल) नदी, सुवास्तु या स्वेती (स्वात), क्रमु या कुर्रम नदी और गोमती

(गोमल) नदियों के नाम मिलते हैं। वैदिक आर्यों के निवास का प्रदेश सप्त सैनधव जो सिंधु व उसकी सहायक नदियों झेलम, चिनाब, रावी, व्यास, सतलुज, और सरस्वती का अपवाह प्रदेश था।

जलवायु और ऋतुओं का वर्णन

टिप्पणी

प्राचीन काल से भारतीय ग्रंथों में छह ऋतुओं वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत और शिशिर का वर्णन मिलता है। वायुमंडलीय दिशाओं, तापमान, बिजली गर्जन-तर्जन, वृष्टि, तुषारपात, हिमपात, स्वच्छ आकाश, धूप आदि का विशद वर्णन वैदिक साहित्य पुराण, महाभारत, कालिदास की रचनाओं, रामायण आदि में मिलते हैं। भास्कराचार्य के सिद्धांत शिरोमणि ग्रंथ में वायुमंडल के स्तरों का उल्लेख किया गया है।

मानव जीवन और क्रियाकलापों पर ऋतुओं के प्रभावों का उल्लेख भी प्राचीन ग्रंथों में मिलता है।

वायु पुराण, शिव पुराण, स्कन्द पुराण और भागवत पुराण में जलवायु का वर्णन मिलता है। इन पुराणों में वर्षा, शुष्कता, मेघों के प्रकार, आंधी, शीतकालीन तुषारपात, वसंत ऋतु और शरद ऋतु के सुहावने मौसम का जिक्र भी मिलता है।

कालिदास के 'मेघदूत' नामक काव्य में वर्षा ऋतु के आरंभ होने का कारण, वर्षा की मात्रा, विभिन्न आकृतियों वाले 10 प्रकार के मेघ, उनके गुणों का वर्णन किया गया है।

2 पृथ्वी के ग्रहीय संबंध

सूर्य, चंद्रमा, पृथ्वी के पारस्परिक संबंधों, ऋतु परिवर्तनों आदि से संबंधित प्रसंग ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद के बहुत से मंत्रों में मिलते हैं। पृथ्वी, अंतरिक्ष और द्युलोक के वर्णन वेदों और ब्राह्मण ग्रंथों में उल्लेखित हैं। विषुव दिवस का उल्लेख वेदों में मिलता है। जब दिन रात्रि का समय समस्त ग्लोब पर बराबर होता है, उसे विषुव-दिवस कहते हैं। 31 मार्च वसंत विषुव और 22 सितंबर शरद विषुव दिवस कहलाते हैं और इस दिन सूर्य की किरणें विषुवत रेखा पर लंबवत पड़ती हैं।

उत्तर वैदिक काल, रामायण-महाभारत काल में ज्योतिष विद्या और खगोलिकी का बहुत विकास हुआ था। वर्षमान, ऋतु परिवर्तन, ग्रहचाल आदि की गणना बड़ी ही स्टीक और विधिपूर्वक की जाती थी।

नक्षत्र पद्धति भी भारतीयों की देन है। ऋग्वेद में नक्षत्रों का उल्लेख मिलता है।

3 खगोलीय भूगोल

भारतीय भूगोल वेत्ताओं ने गणित के प्रमुख सिद्धांत जैसे कि वर्षमान, ग्रह मध्यम गति, मंदोच्च और पात, अयन चलन आदि की रचना की थी।

भास्कराचार्य के ग्रंथों में खगोलीय वेधशाला बनाने और वेध लेने के 9 प्रमुख यंत्रों का वर्णन है : (1) चक्र यंत्र जिसके द्वारा सूर्य का उन्नतांश ज्ञात किया जाता था (2) चाप (3) तूर्यगोल यन्त्र (4) गोल यन्त्र (5) नाड़ी वलय (6) घटिका (7) शंकु यन्त्र (8) फलक यन्त्र (9) यष्टि यन्त्र।

टिप्पणी

ब्रह्मगुप्त, भास्कराचार्य ने पारा, तेल और जल से घूमने वाले कुछ यंत्रों का वर्णन किया है। आर्यभट्ट और वराहमिहिर द्वारा इस प्रकार के चामत्कारिक संचालित यंत्र प्रयोग किए जाते थे।

दिल्ली की प्राचीन खगोलीय वेधशाला के मिश्र यंत्र में चार यंत्र संयुक्त हैं। बीच में नियत चक्कर जो ग्रीनविच (इंग्लैंड) ज्यूरिक (स्विटजरलैंड), सरिच्यू (प्रशांत महासागर) तथा नाटके (जापान) नगरों के मध्याह्न काल को दिखाता है। इस चक्र के दोनों ओर बने लघु सम्राट यंत्र से दिल्ली का स्थानीय समय ज्ञात किया जाता है। पूर्व की ओर अर्धवृत्त के रूप में बने दक्षिणोत्तर भीति यन्त्र से मध्याह्न में सूर्य का उन्नतांश देखा जा सकता है। मिश्र यंत्र के पांच अंश झुकी दीवार पर बना विशाल अर्धवृत्त कर्क वलय है जो सूर्य का कर्क राशि में प्रवेश बतलाता है।

समन्वय प्रणाली (Co-ordinate system)

इसका अध्ययन निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

मूलभूत बिंदु (Cardinal points)

ऋग्वेद में ऋषियों ने प्रारम्भ में चार दिशाओं के नियमों की रचना की- पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण दिशा। मेरु व बड़वानल सहित छह दिशाएं, तदुपरांत आठ व दस दिशाएं पौराणिक साहित्य में बार-बार वर्णित की गई हैं। पुराणों और संबंधित 'सप्तपदार्थी' साहित्य में दिशाओं के पदों को उनके देवताओं से जोड़ा गया जो दसों दिशाओं के शासन अधिकारी देव थे। ये इस प्रकार से वर्णित हैं–

दिशाएं	**शासन अधिकारी**
पूर्व	इंद्र देव
आग्नेय	अग्नि देव
दक्षिण	यम देव
नैर्ऋत्य	निरित देव
पश्चिम	वरुण देव
वायव्य	मारुत देव
उत्तर	कुबेर देव
ईशान	ईशान देव(शिव)
उर्ध्व	ब्रह्म देव
अधो	शेषांग देव

प्राचीनकालीन ज्योतिषाचार्य इस बात की जानकारी रखते थे कि स्थानीय समय सूर्य व चन्द्रमा की आकाशीय स्थिति पर निर्भर करता है। उन्होंने अलग-अलग स्थानों की चन्द्रग्रहण की स्थिति को अवलोकित करके स्थानीय समय का अंतर ज्ञात करके देशान्तरीय अंतर ज्ञात किया।

टिप्पणी

अक्षांश और देशांतर

प्राचीनकालीन भारतीय खगोलविद अक्षांश –देशांतर के महत्व से परिचित थे। वे किसी बिंदु की स्थिति जानने के लिए भी इसको महत्वपूर्ण मानते थे। पुराणों में भी इसका उल्लेख पाया गया है और उसके आधार पर पृथ्वी को विभिन्न प्रदेशों में विभक्त किया गया। विषुवतीय कटिबंध को निरकाक्षदेश (Hell) और मेरु (North pole) को 90 डिग्री अक्षांश माना गया। उन्होंने श्रीलंका की स्थिति विषुवत वृत्त पर और मेरु पर्वत की उत्तरी ध्रुव मानी थी। उत्तरी ध्रुव के विपरीत स्थित दक्षिण ध्रुव उनके अनुसार 'नादिर' अर्थात 'बड़वानल' कहलाया। श्रीलंका से 90° पूर्व में यमकोटि, और श्रीलंका से 90° पश्चिम में सिद्धपूर। उज्जैन की देशांतर श्रीलंका से गुजरती हुई और भारतीय खगोलविदों ने मेरु पर्वत से उज्जैन के देशांतर को प्रधान मध्याह्न माना था। यहीं से बाद में अक्षांश और देशांतर का सूत्रपात हुआ।

अक्षांश और देशांतर निर्धारण के लिए भारतीय खगोलविद गोलाकार पृथ्वी को 360 अंशों में विभाजित करते थे और प्रत्येक अंश में 60 कला या मिनट तथा प्रत्येक कला में 60 विकला या सेकंड मानकर गणना करते थे। भारतीय प्राचीन भूगोलवेत्ता पृथ्वी पर स्थित स्थानों की स्थिति को प्रदर्शित करने के लिए अक्षांशों और देशांतरों का प्रयोग करते थे।

अपनी प्रगति जांचिए

5. निम्न में से भौतिक भूगोल का प्रमुख अंग है–
   (क) पृथ्वी का ज्ञान (ख) पृथ्वी के ग्रहीय संबंध
   (ग) खगोलीय भूगोल (घ) उपर्युक्त सभी।
6. समन्वय प्रणाली के प्रमुख अंग हैं–
   (क) मूलभूत बिंदु (ख) अक्षांश और देशांतर
   (ग) क, ख दोनों (घ) इनमें से कोई नहीं।

5.5 महाद्वीप

वेदों, उपनिषदों, पुराणों, रामायण, महाभारत आदि में अनेक स्थानों पर भौतिक भूगोल से संबंधित विभिन्न प्रकार के तथ्यों का अध्ययन किया गया है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में पर्वतों, मैदानों, नदियों, मरुस्थलों, झीलों, वनों, झरनों, ऋतुओं, पठारों आदि का वर्णन मिलता है। इस प्रकार प्राचीन विद्वानों को प्रकृति और उससे जुड़े विषयों का अच्छा ज्ञान था और विभिन्न स्थानों को जानने में अभिरुचि थी।

द्वीप

प्राचीन ग्रंथों से प्राप्त संदर्भों के आधार पर पृथ्वी के जल और थल को अनेक खंडों, महाद्वीपों में बांटा गया है। द्वीप को विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग तरीके से वर्णित किया है। मुख्यतः द्वीप से तात्पर्य जल से घिरी हुई भूमि से होता था। द्वीप शब्द समान रूप से

टिप्पणी

एक द्वीप, प्राय:द्वीप और दोआब के लिए भी प्रयुक्त किया जाता था। परंतु पुराणों में द्वीप का अर्थ विस्तार से बताया गया कि द्वीप ऐसे भू-भाग होते हैं जो सामान्यत: जल से घिरे होने के कारण अलग-थलग होते हैं। जल के अलावा ये रेत, दलदल, घने जंगलों के द्वारा भी अलग-थलग हो सकते हैं। पुराणों में समस्त पृथ्वी को सात खंडों में विभक्त किया गया है। प्रत्येक भूखंड के दोनों ओर कई समुद्र बताए गए हैं। यह तात्कालिक ज्ञात संसार का परिचय है। ये सात द्वीप मेरु पर्वत से विभिन्न दिशाओं की ओर कमल पुरुष की पंखुड़ियों के समान फैले हुए बताए गए हैं। इन सातों द्वीपों के नाम हैं :- जम्बू द्वीप, पुष्कर द्वीप, शक द्वीप, शाल्मली द्वीप, कुश दीप, प्लक्ष द्वीप, क्रौंच दीप। इन द्वीपों के अंतर्गत आने वाले भूखंडों के संबंध में विद्वानों के अलग-अलग दृष्टिकोण हैं।

1 जम्बू द्वीप (jambu Dwipa)

जम्बू द्वीप यूरेशिया महाद्वीप है। इसका नामकरण जम्बू वृक्ष से हुआ है। कुछ प्राचीन विद्वानों की राय में इसका विस्तार समस्त उत्तरी गोलार्ध पर था जो सॉल्ट सागर के उत्तर में स्थित था। जम्बू द्वीप नमक के सागर से घिरा हुआ है, और द्वीपों के समवृतों के बीच स्थित है। यह कई उपप्रदेशों में बंटा हुआ है और ये उपप्रदेश 'वर्ष' कहलाए गए जहां ऋषियों की भूमि है।

इसके इलावृत, भद्राश्व, किंपुरुष, भारत, हरि, केतुमाल, रम्यक, कुरु और हिरण्यमय, ये नव खण्ड हैं।

इनमें भारतवर्ष ही मृत्युलोक है, शेष देवलोक हैं। इसके चतुर्दिक लवण सागर हैं।

जम्बू द्वीप उत्तर, दक्षिण कम ऊँचा तथा मध्य में अत्यधिक ऊँचा है। जम्बू द्वीप के बीचों-बीच मेरु पर्वत है। उसके पामीर में स्वर्ग समझा जाता है। मेरु पर्वत के पूर्व में सीता का प्रवाह है। यह नदी यरकंद नदी से मिलती-जुलती है जो आज तक भी चीनियों द्वारा सीता कही जाती है। शुभमक्षु (अम्मू दरिया) नदी पामीर के पश्चिम में प्रवाहित होती है। मंगोलिया में इसे बक्षु कहते हैं। चीन में इसे पोतसू व तिब्बत में पकसू के नाम से जाना जाता है। यह नदी अरल सागर में जाकर गिरती है।

उत्तर की नदी भाद्र वर्तमान में सिर (Syr) उत्तर में बहती हुई अरल सागर में गिरती है। पामीर के दक्षिण में किशन गंगा का प्रवाह गंगाबल झील और हरिमुख हिमानी से होता है।

पामीर से पश्चिम की ओर फैले हिंदूकुश या वैदुर्य (बदकशा) पर्वत का भी उल्लेख मिलता है।

2 पुष्कर द्वीप (Pushkra Dwipa)

उत्तरी पूर्वी रूसी भाग (साइबेरिया) है जो चारों ओर कमल पुष्पयुक्त झीलों से घिरा हुआ है। इसके एक ओर का भाग लोगों के लिए स्वर्ग है जिसमें मानव बसाव है, दूसरा भाग मरुस्थल है। यहाँ के लोग आखेटक और प्रवासी पशु चारक हैं। यह द्वीप भयावह, अपवित्र, निर्मम व विनाशकारी तथा आत्मा का हनन करने वाला माना जाता है। इसे राक्षसों का प्रदेश कहते हैं। यहां 20 भयानक खड्ड हैं।

इस द्वीप के दोनों ओर विपरीत क्षेत्र हैं। एक ओर स्वर्ग है, जहाँ जो मानव बसाव को प्रेरित करता है तो दूसरी ओर बंजर भूमि है जो मानव बसाव को हतोत्साहित करती है। प्राचीन धारणा के अनुसार, पुष्कर के बारे में कहा गया है कि स्वच्छ जल और दूध

सागर से घिरा हुआ था। यह द्वीप पूर्वी और उत्तर-पूर्वी साइबेरिया तक फैला हुआ है जहाँ अनेक झीलें पाई जाती हैं। यह यायावरों को आजीविका प्रदान करता है। यहां ये शिकार पर निर्भर करते हैं। आकृटिक व बेरिंग सागर की मीठी जलराशि होने के कारण यहाँ शिकार के अनेक अवसर मौजूद हैं।

टिप्पणी

3 सक द्वीप (Saka Dwipa)

इसका विस्तार जम्बू द्वीप के दक्षिण पूर्व में स्थित पट्टी क्षेत्रों में है। जहां मयांमार, थाईलैंड वियतनाम, मलेशिया, इंडोनेशिया, दक्षिण पूर्व एशिया के पूर्वी द्वीप समूह इसके भाग थे। यहां उष्ण आर्द्र जलवायु होने से सदाबहार वनों का विस्तार हुआ है।

4 शाल्मली द्वीप (Shalmali Dwipa)

शाल्मली द्वीप में मेडागास्कर सहित अफ्रीका का अरब सागर तटीय भाग सम्मिलित है और शाल्मली पेड़ (मुलायम सिल्क वाला पेड़) के कारण इसका नामकरण शाल्मली हुआ माना जाता है। यह वृक्ष मानसूनी प्रदेश की सीमा पर विषुवतीय रेखीय प्रदेश में पाया जाता है। यहां पर सारा साल मेघाच्छन्न रहता है। जंगलों से यहां के निवासियों को पर्याप्त जंगली खाद्य पदार्थ मिल जाते हैं। वे किसी भी प्रकार का उत्पादन न करके जंगल से एकत्रित सामग्री पर आश्रित रहते हैं। घनी प्राकृतिक वनस्पति पर्याप्त खाद्य सामग्री उपलब्ध कराती है।

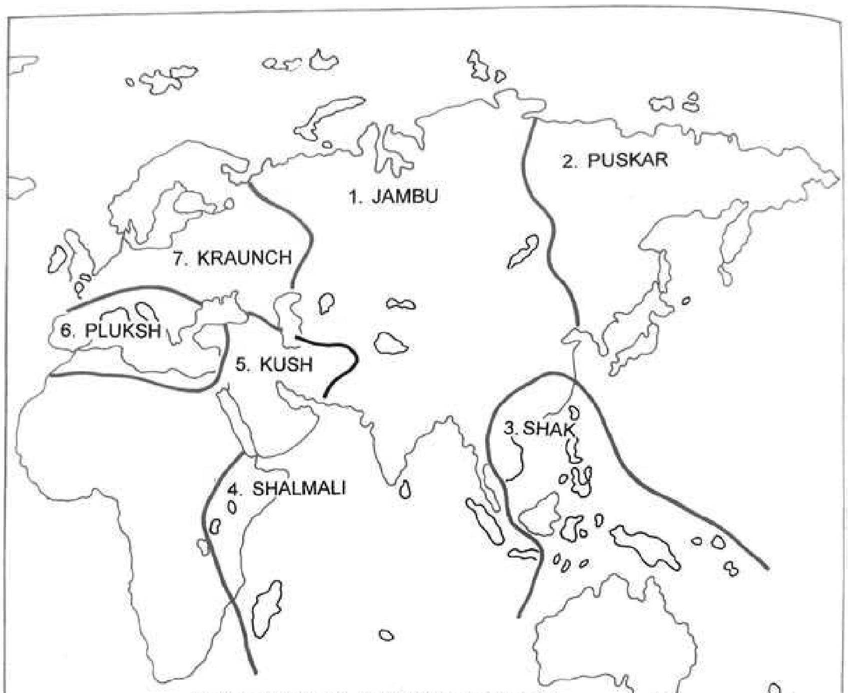

PAURANIC SAPTADWEEP
(CONTINENTS)
(S.M. ALI, 1966)

5 कुश द्वीप (kusha Dwipa)

इस द्वीप का विस्तार ईरान तथा गर्म मरुस्थल के सीमा प्रदेश तक है। यह मेरु का दक्षिण पश्चिम का भू-भाग है। इसका नामकरण कुश घास के आधार पर हुआ है। यह घास से

ढका प्रदेश गर्म मौसम में शुष्क बन जाता है। इस पर सात नदियां बहती हैं। इनकी हजारों शाखाएं इंद्रदेव के द्वारा वर्षण करने पर प्रवाहित होने लगती हैं। ये मौसमी नदियां हैं। इस द्वीप का भाग झाड़ियों, लताओं, घास, वृक्षों से ढका हुआ है। यह खनिज और मूल्यवान पदार्थों का भंडार है। इस द्वीप का स्वामी अग्निदेव को माना जाता है।

6 प्लक्ष द्वीप (Plaksh Dwipa)

इसका नामकरण प्लक्ष वृक्ष के नाम पर हुआ है जो इस क्षेत्र में भूमध्य सागर के चारों ओर विस्तृत है। यह द्वीप भूमध्य सागर के मैदानी भागों का प्रदेश है और कुछ विद्वान प्लक्ष को अंजीर का पेड़ मानते हैं।

7 क्रोंच द्वीप (Krounch Dwipa)

यह द्वीप मेरु के उत्तर पश्चिम में स्थित है। इस द्वीप में ब्रिटिश द्वीपों सहित उत्तर पश्चिम यूरोप का अधिकांश भाग शामिल है। इस द्वीप को सात प्रमुख नदियों और हजारों छोटी बड़ी सरिताओं का घर माना जाता है। इस द्वीप पर अपार जल राशि का प्रवाह माना गया है। यह पर्याप्त वर्षा वाला आर्द्र प्रदेश है।

अपनी प्रगति जांचिए

7. पुराणों में समस्त पृथ्वी को कितने खंड़ों में विभक्त माना गया है?
   (क) 5 (ख) 6
   (ग) 7 (घ) 8
8. प्राचीन भारतीय ग्रंथों में 'जम्बू द्वीप' किस महाद्वीप का नाम है?
   (क) यूरेशिया (ख) उत्तरी अमेरिका
   (ग) दक्षिणी अमेरिका (घ) अंटार्कटिका

5.6 भारतवर्ष

भारतीय विद्वानों को बहुत पहले से ही ब्रह्माण्ड, इसकी उत्पति, पृथ्वी की आकृति, उसका अर्धव्यास, अक्षांश -देशांतर, विभिन्न जलवायु प्रदेश, विभिन्न स्थानों के निवासियों के बारे में विस्तृत जानकारी थी। उन्होंने इन जानकारियों को ऋग्वेद के श्लोकों तथा शक्तियों में पिरोया हुआ है। भारतीय ऋषियों और विद्वानों ने समस्त पृथ्वी की स्टीक जानकारी प्रदान की है।

सम्पूर्ण भूमि को द्वीपों और महाद्वीपों में बांटा गया है और भारतीय उपमहाद्वीप की सीमा भी निर्धारित की गई है। इस प्रकार से वैदिक और पुराणों के साहित्य में भारत के भिन्न-भिन्न नामों का उल्लेख भी मिलता है जिसमें भारतवर्ष अत्यंत प्रचलित नाम है।

भारतवर्ष

पौराणिक भूगोल के अनुसार भारतवर्ष जंबूद्वीप का एक वर्ष या भाग है। इसका नाम दुष्यंत-शकुंतला के पुत्र भरत के नाम पर प्रसिद्ध हुआ है। किंतु विष्णु पुराण के अनुसार

भरत को ऋषभदेव का पुत्र बताया गया है जिसे ऋषभदेव ने वन जाते समय अपना राजपाठ सौंप दिया था। (विष्णु 2,1,32)

अगले श्लोकों में इस देश का विस्तार 9 सहस्र योजन कहा गया है और इसमें कुल सात पर्वतों की स्थिति बताई गई है। भारतवर्ष के निम्न नौ खंड या भाग हैं- 'इन्द्रद्वीप, कसेरू, ताम्रपर्णी, गभस्तिमान्, नागद्वीप, सौम्य, गन्धर्व, वारूण और भारत'। (विष्णुपुराण 2,3,6-7)

टिप्पणी

वैदिक आर्यों ने पंजाब के मैदानों को सप्त सिन्धव का नाम दिया। आर्य साम्राज्य में बौद्धायन और मनु काल में इसे आर्यव्रत नाम दिया गया। डेरियस ने इसे 'इन्द' और हेरोडोटस ने इसे 'हिन्दू' कहा। लेकिन यह नाम केवल गंगा घाटी के ऊपरी मैदान के लिए प्रयुक्त हुआ। महाकाव्यों में पांडव प्रदेश का उल्लेख मिलता है। इनके अनुसार यह राज्य दक्षिण में प्राय:दीप और द्वीपों व बंगाल की खाड़ी से भी आगे तक फैला हुआ था। ऐसे ही प्रदेश का जिक्र कात्यायन और मैगस्थनीज ने भी किया है और दक्षिण प्रदेश तक समस्त देश का उल्लेख किया।

प्राचीन हिंदू संस्कृति में जाति व्यवस्था जनजीवन का एक प्रमुख अंग थी। यह व्यवस्था कामकाज के आधार पर धर्म द्वारा स्थापित की गई थी। भारतवर्ष में चार जातियां थीं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र। ब्राह्मण इस व्यवस्था के अनुसार सिरमौर थे और राजकीय पुरोहित, पुजारी इस श्रेणी में आते थे। धर्म, शिक्षा और धार्मिक अनुष्ठान इनके द्वारा ही करवाए जाते थे। दूसरी श्रेणी क्षत्रियों की थी जिसमें योद्धा, कृषक व कलाकारों के समूह सम्मिलित थे। तीसरे वर्ग में व्यापारी वर्ग और अंतिम चौथी श्रेणी में शूद्र आते थे जो अधम स्तर की सेवा में लगी जातियां थीं। शूद्र मुख्यधारा से अलग -थलग गांव के बाहर बसाए जाते थे और उनके घर घास-फूस से बने होते थे।

पर्वत और नदियां

वेदों और पुराणों में कई पर्वतों का नाम वर्णित है, जैसे हिमवत, उत्तरकुरू, उत्तरमाद्र, हिंदूकुश, विंध्य, पारिपत्र, दुर्दर और महेन्द्र आदि पर्वत। हिमालय का विस्तार उत्तर में पश्चिम से पूर्व की ओर है जो धनुष की भांति झुका हुआ है। इसके प्रादेशिक विभागों का उल्लेख महाभारत में मिलता है। कैलाश पर्वत को हीरों सहित बहुत से बहुमूल्य खनिजों की खान कहा जाता है। इसको अप्सराओं और देवताओं का घर माना गया है। विंध्य पर्वत और उसकी सैकड़ों चोटियों को विभिन्न प्रकार के वृक्षों से ढका हुआ बताया गया। यह पर्वत नर्मदा के साथ होते हुए अमरकंटक को पार करके कैमूर पर्वत तक फैले हुए हैं। पूर्वी घाटों को महेंद्र माली कहा जाता था। मलाबार तट में अन्नमलाई, नल्लामलाई, इतामलाई पर्वत श्रेणियां आदि आते हैं। पुराणों में सहयाद्रि, सुक्तिमान, रीका पर्वतों का भी उल्लेख मिलता है।

वेदों और पुराणों में नदियों का उल्लेख भी मिलता है, जैसे ऋग्वेद में गंगा, यमुना, सरस्वती, परूसनी (रावी), सुतुद्री (सतलज) आसिकनी (चिनाब), वितास्ता (झेलम), सुसोमा (सावन), गोमाल (गौमती), सिंधु, कुभ (काबूल)कुरुमू आदि।

टिप्पणी

गंगा नदी

गंगा नदी बिंदु सरोवर से प्रवाहित मानी गई है। आरंभ में यह सात धाराओं में बंटी हुई थी, इसमें से तीन हरीदनि, पावनी और नलिनी पूर्व की ओर प्रवाहित मानी गईं और अन्य तीन- सूचकस, सीता और सिंधु का प्रवाह पश्चिम की ओर माना गया। सातवीं धारा गंगा दक्षिणवर्ती थी जो भारत के मैदान तक प्रवाहित मानी गई। प्रयाग में यह यमुना नदी से मिली और सैकड़ों पर्वत घाटियों को सींचती हुई सहस्रों वनों और गुफाओं से होती हुई दक्षिण सागर में जाकर मिलती है।

सांगपो (Tsangpo)

पुराणों में त्संगपो (सांगपो) नदी को यरलूंग, लोहित्य (ब्रह्मपुत्र) नदी के नाम से जाना जाता है। इसका स्रोत दाया से 60 मील पूर्व में माना गया है। असम में ये दिहांग से मिलती है।

दक्षिण की नदियों में नर्मदा को अमरकंटक की पहाड़ियों से प्रवाहित माना गया। इस नदी की लंबाई 100 योजन बतलाई गई और यह नदी पश्चिमोदधि में मिलती हुई मानी गई। पुराणों में भी कहा गया कि भारतवर्ष में महासागर है। इसका विस्तार 10000 योजन है और इस महासागर में अनेक द्वीप पाए जाते हैं।

जलवायु

भारतवर्ष की पांच ऋतुओं का वर्णन ऋग्वेद में मिलता है। वसंत, ग्रीष्म, प्रोरित (वर्षा), शरद और हेमंत। वाल्मीकि ऋषि ने रामायण में 6 ऋतुओं का उल्लेख किया है–

1. **वसंत (Spring) :** यह ऋतु चैत्र और वैशाख (March-April) के महीने में आती है।
2. **ग्रीष्म (Summer) :** यह ज्येष्ठ और आषाढ़ (May- june) में पाई जाती है।
3. **वर्षा (Rainy Season) :** यह ऋतु श्रावण और भाद्रपद (July-August) के महीनों में आती है।
4. **शरद (Autumn) :** यह अश्विन –कार्तिक (September -October) के महीनों में पाई जाती है।
5. **हेमंत (Winter) :** यह मार्गशीर्ष –पौष (November -December) के महीनों के दौरान पाई जाती है।
6. **शिशिर (Severe Winter) :** यह माघ और फाल्गुन (January and February) माह के दौरान पाई जाती है।

कृषि व्यवस्था

भारत में मिश्रित कृषि की जाती थी जिसमें कृषि और पशुपालन दोनों साथ-साथ किए जाते थे।

जंगलों को काटकर साफ किया जाता था और खेती करने लायक बनाया जाता था खेती कार्य में बैलों का प्रयोग किया जाता था। पाणिनी, मनु, पतंजलि ने जल प्लावित बाढ़

सिंचित कृषि भूमि को केदार के नाम से उल्लेखित किया है। कृषि अनुपयोगी भूमि 'ऊसर' और पशुओं की चारण भूमि 'गोचर' कहलाती थी। पंतजलि ने जोती हुई भूमि को 'शीत्य' कहा।

ऋग्वेद (7/49/2)में सिंचाई की दो विधियों- खनित्रिमा तथा स्वयंजा का वर्णन मिलता है।

चावल का उत्पादन सबसे पहले भारत में हुआ। उड़द, मूंग, चना की फसल उत्पन्न की गई। कुछ मोटे अनाजों जैसे सांवा, कोदो, चना, चौलाई आदि का भी उत्पादन भी भारत में हुआ। पतंजलि ने जलवायु और मिट्टी के अनुसार फसलों के उत्पादन प्रदेशों का वर्णन किया है।

कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' नामक पुस्तक में कृषि की विभिन्न फसलों, कृषि भूमि के नाप की विधि, कृषि उत्पादन पर लिए जाने वाले कर, कृषि उत्पादन के व्यापार का उल्लेख मिलता है।

उद्योग

ऋग्वेद में विभिन्न प्रकार के उद्योग व्यवसाय में कार्य करने वालों का वर्णन है। इनमें रथकारों, परिवहन की गाड़ियां बनाने वाले काष्ठ शिल्पी, बढ़इयों, वस्त्र निर्माण करने वाले बुनकरों,औजार बनाने वाले लोहकारों का वर्णन मिलता है। भारत में विभिन्न प्रकार के निर्माण उद्योग, बर्तन उद्योग, आभूषण और सिक्के बनाना, भवन निर्माण कला, शिल्प कला, काष्ठ कला, मृतिका कला आदि का अनेक प्राचीन ग्रंथों में उल्लेख मिलता है।

अस्त्र शस्त्र, युद्ध सामग्री, धातु को गला कर औजार बनाना, रथ के पहिए, भवन स्तम्भ, आभूषण, सिक्के बनाने का वर्णन अनेक प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। धातु- कर्म विज्ञान के उद्गम क्षेत्र भारत और चीन को माना जाता है। बाद में यह धातु शिल्प का ज्ञान मध्य एशिया में फैला और यहां से यूरोप पहुंचा। दिल्ली का लौह स्तंभ जो चौथी शताब्दी में बना उच्च धातु -कर्म प्रौद्योगिकी का प्रमाण है क्योंकि आज तक वह जंगरोधी है। विभिन्न धातुओं की भस्म का आयुर्वेद में प्रभावशाली दवाओं के रूप में इस्तेमाल किया जाने लगा था।

वाणिज्य और व्यापार

ऋग्वेद, अथर्ववेद में वस्त्र और पशुओं के व्यापार का वर्णन मिलता है। उस समय व्यापार नावों के द्वारा होता था। काशी नगरी प्राचीन काल से सांस्कृतिक, औद्योगिक और व्यापारिक केंद्र रही है। व्यापारी यहां से रेशमी वस्त्र व अन्य सामान लेकर राजस्थान की मरूभूमि को पार करते हुए भड़ोंच और सूरत के समुद्र तट पर पहुंचते थे। जहां से ये बेबीलोन तक व्यापार करते थे। पटना से श्रीलंका तक व्यापार किया जाता था। एक लंबा व्यापारिक मार्ग पूर्व में बंग से होता हुआ पश्चिम में सिंध और सूरत तक जाता था। एक मार्ग विदेह से होता हुआ उत्तर-पश्चिम में तक्षशिला से होकर गंधार तक जाता था।

व्यापार की वस्तु में खाद्य पदार्थो के अतिरिक्त रेशम, कपास, सन भांग, ऊनी वस्त्र, रंग, मृगचर्म, जूते, घरेलू सामान, कम्बल, कृषि औजार, रथों, नावों, बैलगाड़ियों, घोड़ों, गायों का व्यापार होता था।

व्यापार के लिए चांदी, तांबा, सोने के सिक्कों का प्रयोग होता था। सबसे ज्यादा साधारण तांबे का सिक्का होता था जिसे 'कटापण' कहते थे। निष्क व सुवर्ण सोने के सिक्के थे। माष, काकणि, कंस आदि छोटे सिक्के भी चलन में थे।

जनपद

उपनिषदों में 10 प्रमुख जनपदों का उल्लेख मिलता है।

गांधार- सिंधु नदी के दोनों ओर का क्षेत्र

केकय- गांधार के दक्षिण पूर्व में व्यास नदी तक फैला क्षेत्र

मद्र- स्यालकोट से रावी नदी तक का क्षेत्र

उशीनगर- हरिद्वार, कनखल का प्रदेश

मत्स्य- अलवर, जयपुर और भरतपुर का क्षेत्र

कुरू- दिल्ली और आसपास का प्रदेश

पांचाल- रुहेलखण्ड का क्षेत्र

काशी- वाराणसी के चारों ओर का प्रदेश

कौशल - अवध का क्षेत्र

विदेह- कौशल के पूर्व का क्षेत्र

बौद्ध कालीन और जैन ग्रंथों में उन 17 जनपदों की सूची दी गई जो बुद्ध के जन्म के पूर्व उत्तर भारत में थे। ये थे–

अंग, बंग, मगध, काशी, कौशल, वज्जि, मल्ल, वत्स, चेदी, कुरू, पांचाल, मत्स्य, शूरसेन, अवन्ति, अश्मक, गांधार, कंबोज।

बस्तियों का आकार

अनेक प्राचीन ग्रंथों में भारत की प्राचीन बस्तियों का वर्णन मिलता है। पतंजलि ने आकार के अनुसार बस्तियों का निम्नलिखित प्रकार में वर्गीकरण किया–

1. पल्ली या शूद्र ग्राम
2. घोष
3. ग्राम
4. वाहिक ग्राम
5. पुरी
6. नगर

कस्बे-गांव की मांग पूर्ति और वाणिज्य सेवा के केंद्र होते थे जो गांव के बीचो-बीच स्थित होते थे।

तक्षशिला, मथुरा, वाराणसी, हस्तिनापुर, पाटलिपुत्र, कान्यकुब्ज, माहिष्मती, कौशांबी, नासिक, कांचीपुरम, गवीधूमत, अहिछत्र आदि प्रमुख नगरों में उद्योग और व्यापार किया जाता था।

भारत में सिंधु सभ्यता के काल में ही नगरीय सभ्यता का विकास हो चुका था। इसके प्रमाण हड़प्पा संस्कृति के प्राचीन नगरों के अवशेषों से मिले हैं। जिसमें अमरी, कालीबंगा, झोब, कुल्ली, हड़प्पा, झूकर, मोहनजोदड़ो, नाल लोंथल आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

सभी भारतीय नगरीय बस्तियां योजनाबद्ध आकृति और विन्यास से बनी हुई थीं। उनमें सड़क मार्गों, भूमिगत जल प्रवाह की नालियों का, विभिन्न प्रकार से प्रयुक्त होने वाले भवनों का निश्चित क्रम होता था। मोहनजोदड़ो नगर के उदाहरण से इन प्राचीन नगरों की क्रमबद्धता और नगर योजना को भलीभांति देखा जा सकता है। इस नगर के मकान पक्की ईंटों से निर्मित होते थे तथा एक मोहल्ले में एक से आकार के मकान होते थे। इन नगरों में 2 कमरों के घरों से लेकर विशाल भवन तक पाए गए हैं। मुख्य सड़क मार्ग उत्तर दक्षिण दिशा में होता था। साधारण जनता के लिए सार्वजनिक स्नानागार तथा सभा भवन और पूजा गृह बने हुए थे। इस प्रकार नगरीय बस्तियां योजनाबद्ध बनी हुई थीं। घरों और बाजारों में पक्की ईंटों से निर्मित चौड़ी सड़कें थीं जिन पर वाहनों का यातायात सरलता से होता था।

इन प्राचीन नगरों में मुख्य रूप से व्यापार होता था। आसपास के गांव से कृषि फसलें नगर में आती थीं और सूती वस्त्र, ऊनी वस्त्र, बर्तन, धातु की वस्तुएं, औजार, मसाले, आभूषण आदि वस्तुएं नगरों से गांव की ओर जाती थीं। बैलगाड़ी, घोड़ों, ऊंटों पर माल लाद कर सौदागर नगरों से गांव की ओर तथा गांव से नगरों को नियमित रूप से लाते ले जाते थे।

विदेशों से संबंध

मत्स्य पुराण में भारत का भौगोलिक, व्यापारिक, सांस्कृतिक संबंध पश्चिम एशिया, मिस्र, यूनान, रोम, मध्य एशिया, चीन, पूर्वी द्वीप समूह, बर्मा और श्रीलंका आदि देशों से बताया गया है।

वैदिक काल में भारतीयों का संबंध पश्चिम एशिया से था। इस बात की पुष्टि मैसोपोटामिया से प्राप्त हुए बोगाजक्काई के लेखों से हुई है। जिसमें वैदिक देवताओं के नाम लिखे हुए हैं। इस बात से स्पष्ट होता है कि ईसा से 1700 वर्ष पूर्व भारतीय आर्य और उनका वैदिक धर्म वहां पहुंच चुका था। वहां की व्यापारिक वस्तुओं के नाम भारतीय भाषा के हैं जिससे स्पष्ट होता है कि पुराने समय से सुमेरिया, बेबिलोनिया, सीरिया और मिस्र से भारत के व्यापारिक संबंध थे।

अशोक ने बौद्ध धर्म का विस्तार और प्रचार उत्तरी अफ्रीका, पश्चिम एशिया और श्रीलंका तक किया था।

इस बात की पुष्टि अशोक के शिलालेख और अलबरूनी के लेख से होती है कि खुरासान, पर्शिया, इराक, मोसुल और सीरिया तक की सीमा तक के देश बौद्ध धर्म से प्रभावित थे।

ऑराल स्टीन भारतीय पुरातत्व विभाग के सर्वेयर जनरल थे। उन्होंने मध्य एशिया क्षेत्र में खुदाई करवाई और उस खुदाई में बौद्ध स्तूप, बौद्ध विहारों के खंडहर, भारतीय देवताओं की मूर्तियां, भारतीय भाषा लिपि में उत्कीर्ण शिलालेख व ग्रंथों की हस्तलिखित लिपियां मिलीं।

टिप्पणी

चीन में भी बौद्ध धर्म का विकास हुआ। बहुत से चीनी यात्री धर्म शिक्षा के लिए भारत आए जिसमें फाह्यान, सुंगयुन, ह्वेनसांग और इत्सिंग के नाम उल्लेखनीय हैं। इन विद्वानों ने भारत में रहकर कई वर्षो तक विद्या अध्ययन किया। ये भारतीय पुस्तकों की हस्तलिपियां चीन लेकर गए और चीन में हजारों पुस्तकों का चीनी भाषा में अनुवाद हुआ। भारत से में भी सैकड़ों भिक्षु, विद्वान और पंडित बौद्ध धर्म साहित्य का प्रचार करने चीन गए थे। जिन भारतीय विद्वानों ने चीन में जाकर भारतीय ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद किया था उनमें कुमार जीव, पुण्यत्राच, बुद्धयशस आदि हैं।

ईसा पश्चात दूसरी शताब्दी से ग्यारहवीं शताब्दी तक साहसी भारतीयों ने इन देशों में अपने उपनिवेश, राज्य स्थापित किए। इन उपनिवेशों और राज्यों में भारतीय व्यापार, धर्म, भाषा, राजनीति, साहित्य, कला, आदि का प्रचार हुआ। भारतीय उपनिवेशों में चंपा, कम्पूचिया, सुमात्रा, यावद्वीप, बोर्निओ, बाली, स्याम, स्वर्ण भूमि है। यहाँ पर आज भी बौद्ध धर्म पर भारतीयता के दर्शन होते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

9. पौराणिक भूगोल के अनुसार 'भारतवर्ष' किस महाद्वीप का एक भाग है?
   (क) पुष्कर द्वीप (ख) जम्बू द्वीप
   (ग) कुश द्वीप (घ) क्रोंच द्वीप
10. किस पुराण में भारत का भौगोलिक, व्यापारिक, सांस्कृतिक संबंध पश्चिम एशिया, मिस्र, यूनान, रोम, मध्य एशिया, चीन, पूर्वी द्वीप समूह, बर्मा और श्रीलंका आदि देशों से बताया गया है?
   (क) विष्णु पुराण (ख) भागवत पुराण
   (ग) मत्स्य पुराण (घ) गरुड़ पुराण

5.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर

1. (ग)
2. (घ)
3. (क)
4. (ख)
5. (घ)
6. (ग)
7. (ग)
8. (क)
9. (ख)
10. (ग)

5.8 सारांश

टिप्पणी

भारतीय भूगोल की ऐतिहासिक जानकारी के बहुत से स्रोत हैं जिनमें से लिखित स्रोतों में धार्मिक व अधार्मिक ग्रन्थ आते हैं। इसके अलावा भी हम भौगौलिक इतिहास का कई अन्य प्राप्त सामग्री द्वारा कर अध्ययन कर सकते हैं, जैसे शिलालेख, स्तम्भ, मुद्राएं, प्राचीन ऐतिहासिक स्थल की खुदाई द्वारा सामग्री, अभिलेख, पुरातन आर्किटेक्ट आदि। भारतवर्ष के बारे में बहुत सारे भारतीय विद्वानों तथा विदेशी विद्वानों द्वारा लिखित पुस्तकें भी विश्वसनीय स्रोत हैं। लेकिन भारतीय पुस्तकें और ऐतिहासिक प्रमाणों में कई प्रकार की त्रुटियां पाई जाती हैं जैसे कि कालानुक्रमिक प्रमाण सही तिथि से व्यवस्थित न होना, राजाओं के नामों का दोहराव, भाषा को ठीक से नहीं समझा और पढ़ा जाना, बहुत सारे शिलालेखों और दस्तावेजों का आक्रमणकारियों द्वारा विनाश किया जाना बहुत सारी पुस्तकें राजाओं की स्तुति में लिखी गई थीं तो प्रशंसा से ओतप्रोत होने के कारण उनसे सही जानकारी प्राप्त नहीं होती है। फिर भी हम कह सकते हैं कि भारत के बारे में बहुत से लिखित स्रोत उपलब्ध हैं और इसी से बहुत सी सुदृढ़ जानकारी हमें उपलब्ध है।

ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति से संबंधित बहुत से साक्ष्य हमारे पुराणों में मिलते हैं। पुराणों के अनुसार हमारे देवी देवता कलाकार थे और उन्होंने हमारी सृष्टि की रचना में महत्वपूर्ण योगदान दिया में सृष्टि एक घर की भांति मानी गई जिसके निर्माण में विभिन्न सोपानों का संकेत ऋग्वेद में मिलता है। सृष्टि की रचना एक ऊर्जा के पिंड से मानी गई और परमपिता परमात्मा की इच्छा एक से अनेक होने की हुई और उसने इस पिंडरूपी ऊर्जा को कुछ ही क्षणों में विभाजित कर दिया और उससे ब्रह्मांड, गैलेक्सी, सौरमंडल आदि बने, यानी कि इस ब्रह्मांड की रचना का ब्यौरा हू-ब-हू वैसा ही दिया जैसा कि आज का वैज्ञानिक सिद्धांत 'बिग-बैंग' करता है। इसका अभिप्राय यह है कि हमारे पूर्वजों और ऋषि, मुनियों का ज्ञान अद्‌भुत था और सृष्टि की रचना के बारे में उन्होंने वेदों और सूत्रों के रूप में वर्णित किया है।

पुराणों के अनुसार न उस काल में रात थी, न दिन था, न प्रकाश न अंधकार था, केवल शून्यता थी। ऊर्जा बिखरी हुई थी और एक पिंड के रूप में एकत्रित होनी आरम्भ हुई और वेद इस पिंड को हिरण्यगर्भ कहते हैं और इसी से सारी सृष्टि का निर्माण माना गया।

भारतीय प्राचीन विद्वानों को पृथ्वी के आकार, ग्रहीय संबंधों, दिशा, जलवायु, ग्रहण, नदियों, दिशा और अक्षांश और देशांतर की विस्तृत जानकारी उपलब्ध थी। हमारे प्राचीन ग्रंथों में पृथ्वी को गोलाकार माना गया और पंच सिद्धांतिका में पृथ्वी को 1018.6 योजन माप में बतलाया गया और पृथ्वी के द्रव्यमान का आकलन भी आज के आकलन के समीप ही है। प्राचीन विद्वानों ने 12 राशियों का वर्णन किया और पृथ्वी को गोल पिंड मानते हुए उसे अंशों में विभक्त किया और प्रत्येक अंश को 60 कला या मिनट में विभाजित किया। प्राचीन विद्वानों ने ब्रह्मांड की धारणा में पृथ्वी को भूकेंद्रिक माना और ऋग्वेद में सूर्य, चन्द्रमा, पांच ग्रहों और 37 नक्षत्र पुंजों व 34 आकाशीय पिंडों का वर्णन है और ग्रहों का रंग के आधार पर वर्णन किया जैसे बुद्ध को हरे रंग, शुक्र को सफेद, मंगल को लाल, बृहस्पति को पीला और शनि को काले रंग द्वारा प्रदर्शित किया।

प्राचीन विद्वानों को भूकंप, ज्वालामुखी, द्वीप, दिशा तथा खगोलविज्ञान का बहुत ज्ञान था तथा बहुत से गणितीय सूत्र और नियमों का निर्माण भी किया तथा मानचित्रों का भी निर्माण किया गया और खगोलीय पिंडों के शोध के लिए वेधशालाएं बनाई गई।

इस प्रकार कह सकते हैं कि हमारे प्राचीन ग्रंथों में पृथ्वी से संबंधित ज्ञान हमें मिलता है।

भारतीय प्राचीन विद्वानों और ऋषि-मुनियों को समस्त पृथ्वी के बारे में अद्‌भुत ज्ञान था। वे न केवल भारत बल्कि समस्त संसार के बारे में ज्ञान रखते थे। उन्होंने प्राचीन ग्रंथों में इस ज्ञान को संजोया हुआ है। प्राचीन भारतीय विद्वानों ने समस्त धरा को सात द्वीपों में बांटा है:- जम्बू, प्लक्ष, क्रोंच, शाल्मली, शक, कुशा और पुष्कर द्वीप। एक-एक द्वीप का स्टीक वर्णन किया गया है। वहां की जलवायु, वनस्पति, नदियों, मनुष्य की गतिविधियों का भी उल्लेख किया है।

भारतवर्ष का प्राचीन इतिहास रहा है और यह एक समृद्ध देश रहा है। इस देश के प्राचीन ऋषि-मुनियों को न केवल अपने देश बल्कि विश्व का ज्ञान था। हमारे देश में कृषि और पशुपालन साथ-साथ किया जाता था। उच्च नस्ल के पशु जैसे दूध देने वाली गायों और भैंसों, बोझा ढोने के लिए घोड़ा, ऊंट, हाथी और कृषि कार्य के लिए बैल और भैंसे का प्रयोग किया जाता था तथा पशुओं की नस्ल सुधार पर भी ध्यान दिया जाता था। भारत में 6 ऋतु पायी जाती हैं। वैदिक आर्य के निवास को सिंधु और उसकी 7 सहायक नदियों का प्रदेश माना गया है। भारतवर्ष के निवासियों को धातुओं के प्रयोग का ज्ञान था और विभिन्न उद्योग यहां पर पाये जाते थे।

भारत के व्यापारिक सम्बन्ध बहुत से देशों से थे तथा बहुत से देशों में उपनिवेश स्थापित थे। देश की विभिन्न बंदरगाहों के द्वारा व्यापार किया जाता था। भारत के नगर भी उन्नत अवस्था में और योजनाबद्ध आकृति और विन्यास से बने हुए थे। चौड़ी और पक्की सड़कें, बड़े भवन और खुले हवादार भवन यहां की विशेषता थी। जल प्रवाह के लिए नालियों का इंतजाम था।

5.9 मुख्य शब्दावली

- **वेद :** वेद भारत का सबसे पुराना, लिखित महत्वपूर्ण साहित्य है।
- **वेदांग :** युगांतर में वैदिक अध्ययन के लिए छह विधाओं की शाखाओं का जन्म हुआ जिन्हें वेदांग कहते हैं।
- **संगम साहित्य :** तमिल भाषा में पांचवीं सदी ईसा पूर्व से दूसरी सदी के मध्य लिखा गया साहित्य।
- **स्मारक :** स्मारक एक ऐसी संरचना है जो किसी व्यक्ति या महत्वपूर्ण घटना की स्मृति में बनाई गई है या किसी सामाजिक तबके के लिए उसके अतीत की स्मृति के लिए महत्वपूर्ण बन गई है।
- **अभिलेख :** अभिलेख पत्थर अथवा धातु जैसी अपेक्षाकृत कठोर सतहों पर उत्कीर्ण की गई पठनीय सामग्री को कहते हैं।

- **जनपद :** किसी राज्य या मंडल का निश्चित सीमा वाला वह भाग या खंड जो किसी प्रशासनिक अधिकारी के अधीन होता है।

5.10 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास

टिप्पणी

लघु-उत्तरीय प्रश्न

1. भौगोलिक ज्ञान प्रदान करने वाले भारतीय स्रोतों के नाम बताइए।
2. ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का ज्ञान प्रदान करने वाले प्राचीन भारतीय ग्रंथों की जानकारी दीजिए।
3. समन्वय प्रणाली और भौतिक भूगोल से संबंधित प्राचीन भारतीय ग्रंथों का संदर्भ बताइए।
4. महाद्वीपों और भारतवर्ष से संबंधित प्राचीन भारतीय ग्रंथों के नाम बताइए।

दीर्घ-उत्तरीय प्रश्न

1. भौगोलिक ज्ञान प्रदान करने वाले भारतीय स्रोतों तथा इनमें उपलब्ध जानकारी का विश्लेषण कीजिए।
2. ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति की अवधारणा तथा संबंधित प्राचीन भारतीय ग्रंथों की विवेचना कीजिए।
3. प्राचीन भारतीय ग्रंथों में उपलब्ध 'समन्वय प्रणाली और भौतिक भूगोल' से संबंधित ज्ञान पर प्रकाश डालिए।
4. महाद्वीपों और भारतवर्ष से संबंधित ज्ञान तथा संबंधित प्राचीन ग्रंथों का विस्तृत विश्लेषण कीजिए।

5.11 सहायक पाठ्य सामग्री

एस. डी. कौशिक, डी. एस. रावत (2014-15) भौगोलिक विचारधाराएं एवं विधितन्त्र, मेरठ

डॉ. हुसैन, भौगोलिक चिंतन का इतिहास, रावत पब्लिकेशन, जयपुर

डॉ. आर. एस. माथुर, डॉ. जैनेन्द्र गुप्ता, भौगोलिक विचारधाराएं, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर

चन्द्रशेखर यादव (2012), भौगोलिक विचारों का इतिहास, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, दिल्ली

Chorley, R. J and Hagget, P- (1965), Models in Geography, London.

Dickinson, R. E. (1969), The maker of Modern Geography, London.

Dikshit, R. D. (1999), Geographical Thought : A Contextual History of Ideas, New Delhi

Foucault, M. 1980, Power / Knowledge, Brighton

Gold, J.R. (1980), An Introduction to Behavioural Geography, Oxford

Golledge, R. J., et - al - (1972), Behavioural Approaches in Geography : An overview, The Australian Geographer,12, pp l59&79

Gould, P. R. (1966), On Mental maps in Downs, R. M

Gregory, D., (1978), Dealogy Science and Human Geography, London, pp - 135&136

Gregory, D. (1981), Human Agency and Human Geography, Transaction, Institute of British Geographers

Gregory, D. (1989), The crisis of modernity/ Human geography and critical social theory, in Peet, R and Thrift, N. J. (eds) New Models in Geography, vol - 2, London. Haggett, P- Cliff, A. D. and Allan, F. (1977), Locational Models

Soja, E. (1989), Modern geography, Western Marxism and reconstructing of critical social theory, in Peet, R and Thift, N. (eds) New Model in Geography, vol -2, London

Taylor, G. (1919), Geography in Twentieth Century, London